

निखिल जयंती विशेषांक

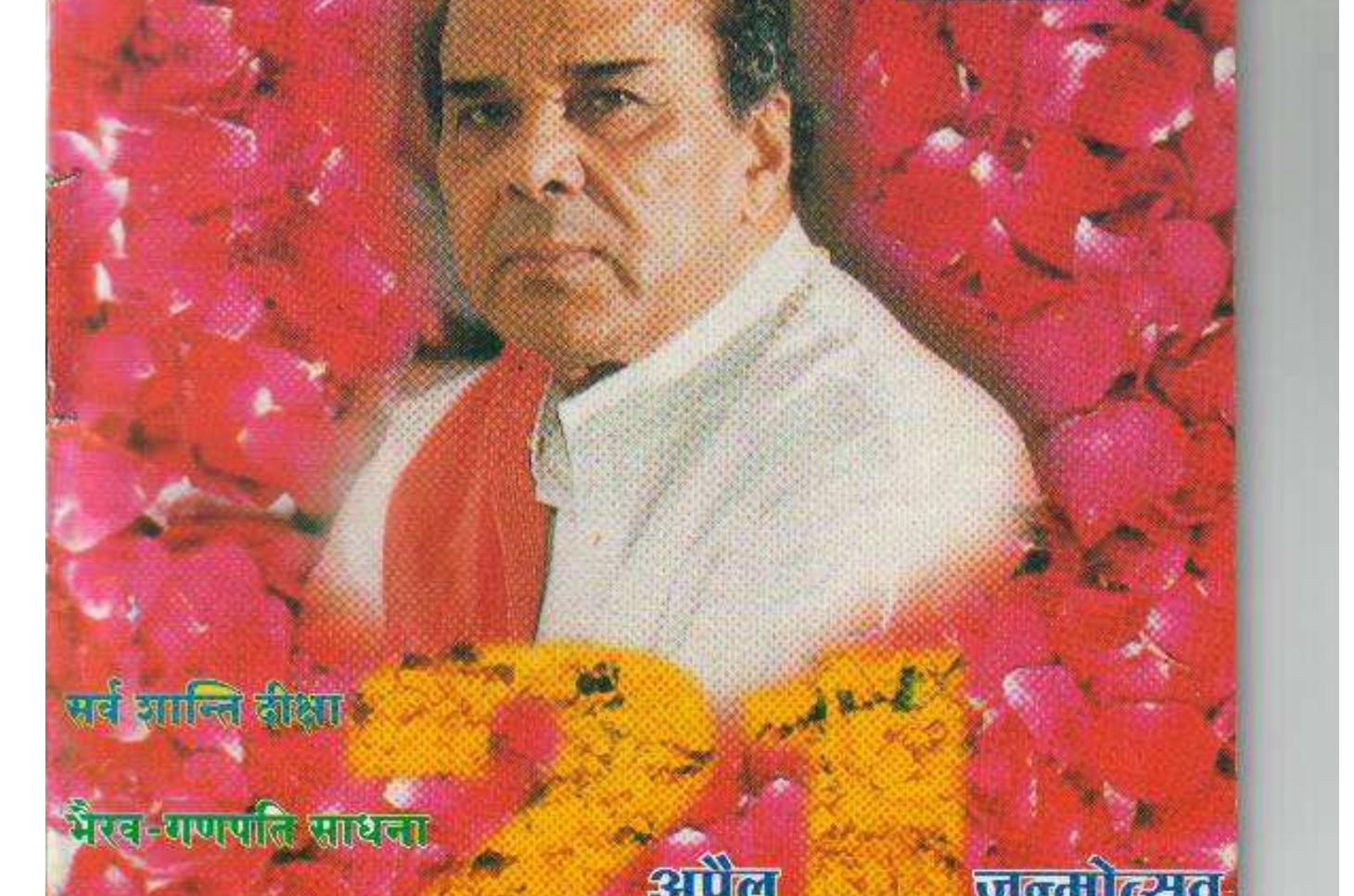
अप्रैल 2000

मूल्य : 18/-

NOT FOR SALE

संग्रह-तंत्र-ज्ञान

विज्ञान



रार्द आन्ति दीशा

भैख-यण्णाति साधना

पंच तत्त्व साधना

अप्रैल

जन्मोत्सव

॥ ओ परम तत्त्वाम चरुमण्डप मुहम्यो नमः ॥

ॐ ही नम ब्राह्म देह रोम प्रतिरोद्ध चैतन्य ब्रह्म भूमि के नमः ॥





COLLECTION OF VARIOUS

- > HINDUISM SCRIPTURES
- > HINDU COMICS
- > AYURVEDA
- > MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server

आद्य-प्रकाश

॥ उप पत्रम् तत्त्वाद्य वाज्ययाय शुक्रभेदो नमः ॥



साधना

गुरु प्राण धारण साधना	20
पञ्च तत्त्व साधना	25
लक्ष योग साधना	34
भैरव साधनाएः	37



विशेष

मुमुख गणपति साधना	64
सूर्य गह साधना	69
वाक् शक्ति साधना	76
काल चक्र	77

सदगुरुदेव

सदगुरु प्रवचन	5
गुरु बाणी	44

स्तम्भ

अपनों से अपनी बातें	18
स्तोत्र शक्ति	29
शिष्य धर्म	43
आपके पत्र	46
साधक साक्षी हैं	47
मैं यथार्थ हूँ	62
वराहमिहार	63
नक्षत्रों की बाणी	72
इस मास विल्ली में	80
एक वृष्टि में	86



कुण्डलिनी

आज्ञा चक्र साधना	55
------------------	----

ज्योतिष

आगामी मुहूर्त विभेदण	67
----------------------	----

आदाहन

निरिखन जन्मोत्सव	19
------------------	----

विवेचन

सहजता ही जीवन है	32
शब्द में ब्रह्म शक्ति है	74

दीक्षा

सर्व शान्ति दीक्षा	59
--------------------	----

अन्य

पत्रिका: अंग्रेजी संस्करण	78
---------------------------	----

रिपोर्टज

अविवल यात्रा जारी है	82
----------------------	----



सम्पर्क

सिद्धाश्रम, 308 लोहाट एन्कल्ड, पीठमधुर, फिल्ड-110034, फोन 011-7182242, फैक्स 011-7196700
में-त्र-यत्र विभाग, डॉ शीनली नारा लाइब्रेरी लाइब्रेरी 342001 (फैक्स) फोन 0291-452203, टेलीफोन 0291-4520703
WWW address - <http://www.siddhashram.org> E-mail add. mtv@sidhashram.org

“३”

प्रेरक संस्थापक
दृष्टि नासातापदत्त श्रीगाली
(परमहंस स्वामी
निष्ठिलेष्वर रामेश जी)

प्रधान सम्पादक
श्री वत्तदिव्योर श्रीगाली
कार्यालय सम्पादक
प्रबं लंगोजक
श्री कैलाश वत्तद श्रीगाली

दयवस्थापक
श्री ऊर्ध्विल श्रीगाली
संपादन सलाहकार मंडल
दृष्टि राष्ट्र वित्तन्य शास्त्री,
श्री गुरु लेखक वीष्वासन्न,
श्री रमेश पाटिल, श्री गंगाधर
महापात्र, श्री ब्रह्म पाटिल, श्री
सतीष मिश्र (बामबद्द), श्री एम.
आर. विजय, श्री सुधीर सेनाकर,
श्री विजय शास्त्री (हारियाणा),
श्री कृष्ण गोडा (बंगलोर),
डॉ. पटा. के. भीतरक (नेपाल),

प्रकाशक दब स्वामित्व
श्री कैलाश चन्द्र श्रीगाली
द्वारा
नील आर्ट प्रिन्टर्स
10/2, DLF, रेडिन्ग्सल
परिया, मोतो-नगर, नई दिल्ली
से मुद्रित तथा
में-त्र-यत्र विभाग
गुडकोट कालीगी, नोएपुर से
प्रकाशित।

मूल्य (भारत में)
एक प्रति 18/-
यार्ड 195/-

विद्या

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं का अधिकार पत्रिका का है। इस 'मन्त्र-वन्त्र-दश विज्ञान' पत्रिका में प्रकाशित लेखों से सम्बन्धित कर सम्भव होना अनिवार्य नहीं है। तर्क-कुर्ता करने वाले पाठक पत्रिका में प्रकाशित पूरी सामग्री को गल्प चरणे। किसी नाम, स्थान या घटना का किसी भी कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि कोई घटना, नाम या संघर्ष मिल जाय, तो उसे संबोध चरणे। पत्रिका के लेखक सुमन्द्रेष्ट साधु ये तो होते हैं, अतः उनके पते के बारे में कुछ भी अन्य जानकारी देना साधित नहीं होगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी लेख जो सामग्री के बारे में वाद-विवाद या तर्क सम्बन्ध नहीं हो तो उसके लिए लेखक, प्रकाशक, सुन्दर या सम्बन्धित विषयावार होंगे। किसी भी सम्बन्धित को किसी भी प्रकार का वारिधारिक नहीं दिया जाता। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद में जो थप्पर व्यापार यही गाल लोगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री को साधक या पाठक नहीं से भी प्राप्त कर सकते हैं। पत्रिका कार्यालय से गाड़ाने पर हम अपनी सरफ से जामाणिक और सही सामग्री अथवा बंड भेजते हैं, पर फिर भी उसके बाद ही, उसनी या नक्की के बारे में अधिक अधिक होने या न होने के बारे में हासारी जिम्मे बारी नहीं होती। पाठक अपने विषयालय पर भी ऐसी सामग्री पत्रिका कार्यालय से मिलायें। सामग्री के मूल्य पर तर्क या वाद-विवाद सम्बन्ध नहीं होगा। पत्रिका का वारिधारिक सुन्दर वर्षानाम में १९५५ - है, पर यदि किसी विशेष एवं अपरिवार्द्ध कारणों से पत्रिका को उपलिखित या बंद करना। तब, तो किसी भी एक आपको प्राप्त हो जुके हैं, उसी में वारिधारिक सदस्यता अधिका दो वर्ष, तीन वर्ष या उत्तरवर्णीय सदस्यता को पूर्ण साझें, इसमें किसी भी प्रकार की आपत्ति या आले गए किसी भी रूप में व्यौखिक नहीं होगी। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी साधना में दफ्तरता-कालान्तर, डानि सामने की निम्नोंगारी साधन की त्वयि की होती तथा साधक कोई भी ऐसी उपासना, व्यष्टि या ऐने प्रयोग न करें, जो नैतिक सम्बन्धिक प्रवृत्ति कानूनी नियमों के विरोधी हो। पत्रिका में प्रकाशित लेख के लेखक योगी या योगी से लेखकों के विषय गाते होते हैं, उन पर भाषा का अवश्यनक पत्रिका के कानूनोंरियों भी उरफ से होता है। पाठकों की गाँग पर इस तर्क में पत्रिका के द्वितीय लेखों का भी ज्यों का त्वयों सम्बोधन किया गया है जिससे कि नवीन पाठक नाम उठा जाके। साधक या लेखक अपने प्रामाणिक अनुभवों के आधार पर जो सत्र, तंत्र या यंत्र (भले ही वे लास्ट्रीय व्याख्या के श्वार हो) बालते हैं, वे ही दे देते हैं, अतः इस सम्बन्ध में आलोचना करना व्यर्थ है। अवश्यनक पृष्ठ पर या अन्दर जो भी योगी प्रकाशित होते हैं, इस सम्बन्ध में सारी विषयोंवाली योगी भेजने वाले योगी भावाना अथवा आर्टिस्ट की होती। यीका आलोचना करने का तात्पर्य यह ही है, कि साधक उससे सम्बन्धित सामने तुरन्त आते कर सके, यह तो धीरी और गहरा प्रक्रिया है, जहाँ पूर्ण अवधा और विषयालय के साथ तो यीका आप्त हो जाए। इस सम्बन्ध में किसी उकार की कोई भी आपत्ति या आलोचना व्यक्तियों नहीं होती। गुरुदेव या पत्रिका परिवार ही सामन्य में किसी भी प्रकार योगीवाली वहन नहीं करते।

प्रार्थना

वरेष्य ज्ञानार्थ यसम समर्पित च निश्चितं,

यस्महंस द्वं द्वुतरं सुदारं परित्युम्।

स्वस्त्रवोत्कृष्टे दयम शिव मार्त्युण मर्येः,

समुदीय लर्वं भवतिभव भावेः जनित्युतेः॥

हेमवत पृथ्वीपाद गुरुदेव निश्चिता आपने जपने उत्तमतम्

शिवसद्भा विशिष्ट यावमय, अपेक्ष गृण गौरव से भण्डित, भगवत्

समस्तदेवव्यों से पुरित, शुद्ध जन्म और उत्कृष्टप्रकार के वारा भगवत्

शिष्यों को सामाजिक व्यवस्था की स्थिति प्रदान की है।

हे निश्चितलेक्षक! आप सभी के विषयालय, शोभान्यप्रद हेतुधा

को निलग्न उदार भावी के प्रतीक हैं। हृष्य के समान स्वरूप, परमहंस की

निष्ठित बासन्बार नमन स्वीकार हो।

जो लिखे विद्याता उसे कीन काटे

एक बार समर्थ गुरु समादाम एक दृश्य के नाच बैठे थे। थोड़ा देर में उन्होंने देखा कि एक ज्योतिषी उनके पास आकर बैठ गया। कुछ समय बढ़ रहम गुरु समर्थ गुरु समादाम ने एक युवक की कुण्डली बनाई और ज्योतिषी से कहा - 'इसका फल देखकर बताएँ।'

ज्योतिषी कुण्डली देखकर अवाक रह गया, क्योंकि कुण्डली के अनुसार उस युवक की मत्तु उभी दिन निश्चित थी। ज्योतिषी ने जातक की मृत्यु तत्त्वान अवश्यक्ता होने का फलावेद किया।

थोड़ी देर बाद गुरु समादाम ने कुण्डली उत्तर कर रख दी। तीक उसी समय एक नवयुवक घोड़े पर भावार होकर आया और आकर उसने नमर्थ गुरु समादाम को उपद्रवत प्रणाग किया। समर्थ गुरु समादाम ने आशोकीट के रूप में एक मुद्री मिठ्ठा नवयुवक को देती। देखते ही देखते नवयुवक ने मिठ्ठा को अपने अंगदस्त्र में लाप लिया और वहाँ में जला गया। दो धण्ठे बाद वह युवक खुन से लग्य-पर्याप्त पुरा वापस आया। नमर्थ गुरु समादाम न बड़ी कुण्डली लोखा कर दी और ज्योतिषी जो अब तक बड़ी बैठ गया, उसने कहा - 'मरा इस कुण्डली को फिर देखिये तो।'

ज्योतिषी कुण्डली देखते ही बौक गया, आज वही में भगवर भोला - 'महाराजा! यह कुण्डली तो बदल गई है। बालकव में आप समर्थ हैं, आप जो ग्राम का लिया भी बदल देते हैं, मैं जो एक भावारण ज्योतिषी हूँ।'

जिस नवयुवक की कुण्डली इस प्रकार बदल गई थी, वह और कोई नहीं विश्वास करता था, जिसके भावना को समर्थ गुरु ने अपनी शक्ति से बदल दिया था।

सदगुरुदेव ने शिष्यों को सम्बोधित करते हुए कहा था कि मैं तुम्हें अपनी ग्राम ऊर्जा देकर, तुम्हारे माथे पर लिखी दी वृद्धिय की काली रेखाओं को मिटा रहा हूँ, समाप्त कर रहा हूँ और सीमांय की स्वाधीन पंक्तियां अंकित कर रहा हूँ, जिससे तुम जीवन में इतनी ऊर्जा वर उठ सको, कि समाज तुम्हें देख सके कि वह व्यक्ति कुछ अलग ही है। जो विद्याता के लेखों को बदल सके, सदगुरु तो वही ही सकता है।

બનદરનીય આત્માજીઃ ૮ અપ્રેલ
પ્રજય સંક્રાંતિકાદેવ : ૧૫ અપ્રેલ

જાનરા ટિકા મુખાલે
હો !

“અપ્રેલ” ૨૦૧૪ • સત્ત્વ-સત્ત્વ-ચેતના વિભાગ • ૫

जल्द विदेश से शिख के लिये अमृत प्राप्ति का पर्याय होता है। इस दिन शिख गुह को नव मंड लाए जाएँ ताकि उसे पूजनारब सद्गुरुदरबार से जल्द विदेश के ही एक ब्रह्मलय पर अपने छाक्कोंट ठेंवे शाने प्रदर्शन में उत्तम किया दे— दह महोत्त्वाव परिपूर्ण चित्व, प्राणात्मना पूर्ण मंदिर चित्व। आत्म र्यक्षण पर्योग रूप, गुरुदेवं तु भ्य प्रपात्म लभा।

आज इस अग्रज गहोत्सव पर्व पर जन्म दिन से एक बहाना है, वर्षों कि जो पैदा होता है उसका जन्म तो होता ही है। यथर यह कोई गुरु का जन्म दिवस नहीं है, वर्षों कि गुरु अपने आप में कोई सत्ता रहता ही नहीं है। गुरु तो अपने आप में विश्वर कर के पूरे शिष्यों के बीच में समाहित हो जाता है और पूरे शिष्यों का समृद्ध अपने आप में गुरु कहलाता है। गुरु अपने आप में कोई व्यक्ति नहीं बन सकता। इसलिये यदि आप ऐसा समझते हैं कि इस मंच पर बैठा हुआ व्यक्ति गुरु है, तो शायद यह गलत है, और यदि यह समझते हैं कि नारायण दत श्रीमाली भेरे गुरु है, तब भी गलत है। हकीकत में तो इस इलोक का तात्पर्य ही यह है कि जन्म दिवस के बल गुरु का जन्म दिवस नहीं बनाया जाता है।

जब गुलाब का पुष्प विलसा है, विकसित होता है, जब उसमें सूक्ष्म पौधा होती है, तब गुलाब का पुष्प अपने आप में उस सूक्ष्मद्वय को रखते हुए नहीं रखता। और अगर सोने हुए हैं तो गुलाब का पुष्प वही नहीं रखता। यह कोई और पुष्प तो बन सकता है परन्तु गुलाब का पुष्प नहीं बन सकता। गुलाब को तो पृथ्वी का विधिपति कहा जाता है। और गुलाब का पुष्प ही ही इसलिये कि उसने अपनी सूक्ष्म को चारों ओर विसरा दिया है। और चारों ओर विसरी हुई सूक्ष्म के पूरे समूह को गुलाब का पुष्प कहते हैं। केवल पश्चिमीयों को गुलाब का पुष्प नहीं कहते।

और तीक उसी प्रकार से युक्त तो केवल यह बैठा हुआ असीत्य नहीं है। आप सबके बीच में जो कुछ विकल्प था है — वह ऐसा सारा जीवन का लङ्घन, ऐसे सारे शास्त्रों के रोम-रोम, ऐसे सारे जीवन के साण, ऐसे चिन्तन, ऐसे विनार, ऐसी धारणाएँ, ऐसी विद्याएँ शक्ति और ऐसी चिन्तन पद्धति और ऐसा कुछ गिलकर के जो ऐसे सामने समृद्ध बैठा हुआ है — वह अपने आप में युक्त है। और यह युक्त जन्म दिवस आप सबका और एक प्रकार से शिष्य जन्म दिवस है, युक्त जन्म दिवस है। यह युक्त जन्म दिवस गुरु का जन्म दिवस ही नहीं यह तो एक अग्रसत्त्व पर्व दिवस है।

तो एक अमृतत्व पर्व दिवस है।
 इस इलोक का सुन गाव ही यही है कि गुरु तत्त्वको नहीं कहते
 जो बस एक सिंहासन पर बैठ जाये। गुरु सिंहासन पर बैठता ही नहीं है, गुरु
 के बैठने के लिये कोई बांधी गार रथ या पुष्टि से सजी दूर्घ कोई कार नहीं है।
 राक्षसी, यह बैठने की जगह ही नहीं। और गद्दे गुरु को पहाड़ बिठाया जाता है,
 तो यह शिव्य का रावणी बड़ा अपमान है, गुरु का सबसे कम्भा अपमान है। यदि आप
 कूलों से सजाकर मध्य पर गुरु को बिठाते हैं, तो उठ गुरु के बैठन का रक्षण
 नहीं है। गुरु के लिये सबसे अच्छा बैठने का रक्षण शिव्य का दृढ़य होता है और
 आप गुरु जग्ने दृढ़य में बिठायें। मैं भी बहत हूँ मेरे लिये यह स्थान बहुत ज्यादा जपमुक्त
 है। उस स्थान पर मैं अपने आपको बहुत नविक सुखमय गन्मय करता हूँ। उस स्थान
 पर मैं अपने आपको बहुत नविक गौरववित अनुभव करता हूँ। जिस स्थान भी आप भूजें
 उस स्थान से ढटाने की प्रक्रिया करते हैं, जब भी आपने दृढ़य के स्थान से मुझे खोड़
 दा भी दूर धकेलते हैं, तो मैं अत्यन्त ल्याकूल हो उठता हूँ। बहुत चिन आयिं
 ही भट्टजा है, बहुत अपने आप में बैठने ही उठता हूँ कि क्या कारण है? ऐसे क्यों
 क्यों आ रहे हैं? और वे साज भेरे लिये सरबो ज्यादा दुखदाही हो रहे हैं।

मगर विश्वामित्र ने इस लोक के कहा है कि यह अथवा कोई मूल्य, कोई विना है ही नहीं, वर्थाकी तुम जिसको जीवन कहते हो, वह देख है, जीवन नहीं है। तुम देख की अनस्था को प्राप्त करते हो, तुम जन्म लेते हो जो के गर्भ से और मृत्यु को प्राप्त होते हो। इसलिये तुम्हारी यो पूरी यात्रा है, वह

देह की यात्रा है, वह जीवन की यात्रा नहीं है। इसलिये देह की अवस्था से
जीव साल, पर्वीस साल, प्रवास साल, साल, सत्रार या अपरी साल — जिनमें भी तुम्हारी
देह में स्थान है, वह देहगत अवस्था बनती है और बलते—बलते एक काण ऐसा आता है जहाँ
तुम स्थान में जाकर सो जाते हो। ये सारी यात्रा तुम्हारी देहगत अवस्था है।

और देह अपने आप में प्राण नहीं है। क्योंकि वह पूजा को पैदा जल्द करती है, परन्तु मा के बल
देह को पैदा करती है, केवल शरीर को पैदा करती है, प्राणों को मैया नहीं करती है। जब पूजा पैदा होता
है तो बृहद्युग्म पैदा होता है, जीवन तुल्य पैदा नहीं होता। आपने पूजा को पैदा होते हुए, उसको बाहर निकलते
हुए देखा नहीं है। जब पूजा पैदा होता है, उसमाने पैदा होती है, तो मा और पर्वीसी, नर्स और डॉक्टर और
आस-पास के लोग वह गम्भीर और चिनित मुदा में खड़े रहते हैं। बालक ने जन्म ले लिया है और सभी बहुत
खुश, खुश सवस्ता, विनिता, बहुत परेशान कि एक सेकण्ड नीत गया है, यो सेकण्ड नीत गया है, बच्चे ने अभी
जब जांच नहीं ली है, रोया नहीं है, प्राण आज्ञा नहीं है। यो तीन सेकण्ड और यार सेकण्ड नीतों हैं और जलों कि
वह रोने लगता है — लाली बच जाती है, खुशी-से दोल बच जाते हैं, थालिया बजने लगती है, सब शान्त हो जाते
हैं, कि तब्दी जी गया, बच्चा पैदा हो गया। मगर जब तक वह रोता नहीं है, जब तक वह उस प्राण को प्राप्त नहीं कर
सकता है, जब तक उसमें बेतना नहीं आ जाती है तब तक देह होती है। इसलिये मा के बल देह को पैदा कर सकती है,
जब नहीं जाल सकती।

विश्वामित्र ने कहा है कि मा के गर्भ में शरीर तो है, उसमें जीव तो है, प्राण नहीं। . . . वह जीव मा की बात
को बहुत ध्यान से सुनता है, मा जो भी बोलती है, पूज गर्भ में उसे सुनता ही है, वह अपने पिता की आवाज को भी सुनता
है। नामा और पिता के बीच जो बात होती है वह बालक बिल्कुल गर्भ में सुनता रहता है। हर क्षण वह उन आवाजों से
परिचित रहता है और ज्योंहि वह बालक गर्भ से बाहर निकलता है — वह पूर्ण तो नहीं होता, होता तो जीवगत अवस्था
में ही है, परन्तु वह जीव नश्वर होता है, सामाप्नाय होता है — जीव है भी और नहीं भी। ऐसे जीव का कोई विशेष अर्थ
नहीं है, कोई उसमें चेतना नहीं है, इसलिये कटी हुई आधी से मा देखती रहती है, दाढ़ा देखता रहता है, नर्स भी आशकित
रहती है कि जियेगा कि नहीं जियेगा, सांस लेगा कि नहीं लेगा। वयोंकि शिशु के लिये सांस लेने की क्रिया बिल्कुल नहीं
है। मा के गर्भ में उसको सांस लेने की क्रिया का ज्ञान नहीं था। मा बोलती
ही तो वह बोल रहा था, मा जो कुछ सुनती थी, वह वही सुनता था। आप जो बोल रहे थे, वह गर्भ का बालक नहीं सुन
रहा था। इसलिये उसको मा की आवाज परिचित लगती है। इसलिये उसको मा का बेहता परिचित लगता है। जन्म होता
है, तो बिल्कुल अवधी से वह देखता है, वयोंकि गर्भ में तो बिल्कुल अलग जीवन होता है, अलग दीवार होती है, बाहर तो
सब अलग है, सांस लेने का तरीका नया है, रासा सिस्टम अलग है, नात सुनने का तरीका नया है, यहाँ की हर जीव नई है,
लोग नये हैं — और यह रात देखकर वह रोने लगता है, बिल्कुल उठता है। लोग खुश हो जाते हैं कि प्राण आ गये हैं।

यह प्राणगत अवस्था गुरु के माध्यम से प्राप्त होती है, मा के माध्यम से ग्रान नहीं हो सकती। इसलिये दोनों में
अन्तर है। मा के बल जीव दे सकती है, जीवन दे सकती है, प्राण नहीं दे सकती। इसप्रीलिये विश्वामित्र ने कहा यह पूरा जीवन
देह की यात्रा है। इस पूरी यात्रा में देह गतिशील होती रहती है, आप चारे या नहीं चारे। आपके घलाने से देह नहीं बलती
है। यदि आप सांस नहीं लेना चाहें तो यह आपके वस की यात्रा नहीं है, सांस आपको लेनी ही है। परं शांस लेने की क्रिया
का आपको ज्ञान है नहीं, वयोंकि आपको सांस लेने की क्रिया रामजाई ही नहीं गई। मा ने जैसे सांस ली, वैसे आपने सांस
ली, मा ने आपको कोई नया तरीका नहीं राखा। जीवन लेने के बाद, प्राण जाने के बाद, जो क्रिया रामजानी चाहिये,
वह नहीं समझ पाये आप।

इसलिये विश्वामित्र ने कहा कि जो साठ साल की यात्रा है, सत्तर साल की अवधि है, उस प्रयत्नस्त्री पर जिसपर¹
कि गुरु यत रहे हो, गतिशील हो रहे हो, वह देह की अवस्था है। देह की इस गतिशील अवस्था में किसी भी दाण गुरु मिल
सकते हैं। और गुरु को प्राणात्म्य कहा गया है। यह जीव को प्राणगत अवस्था में बदल देता है, वयोंकि जीव तो अपने
आप में नश्वर है, जीव तो पंथपूतों में मिल जायेगा। प्राण नहीं मिल सकते। इसलिये प्राण को अनादि, अनश्वर, अजा-भा
वीं और अगर्भा कहा गया है। प्राण गर्भ में पैदा नहीं हो सकता, गर्भ के बाहर प्राण पैदा होते हैं, इसलिये प्राण की भृत्य
नहीं होती, प्राण का जन्म नहीं होता। इसलिये इलोक में कहा है कि तुम्हारी देह की यात्रा और प्राणों की यात्रा में
अन्तर है। तुम्हारी देह की यात्रा तो मा के गर्भ से मृत्यु तक की यात्रा है। मगर तुम्हारी इस देहगत यात्रा का गुण
कोई लेना-देना नहीं है, कोई सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि मैंने इस पर्व को अमृत पर्व मध्योत्सव के रूप में भनाया है।

मैंने कहा है कि जीवन में जब भी तुम्हें कोई जीवन-त्वयित्वमिल जाये, जिन्हा गुरु मिल पायें तो
उन्हें प्रकार लेना। गुरु भी यो प्रकार के होते हैं — एक मरे हुए गुरु, एक जीवन्त गुरु। व्यक्ति भी यो प्रकार
के होते हैं। अधिकतर व्यक्ति गरे हुए होते हैं, ५५ प्रतिशत व्यक्ति मरे हुए हैं, कोई चेतना नहीं है, कोई घड़कन
नहीं है। सांस तो ले रहे हैं, मगर प्राणगत अवस्था में नहीं है, उनमें कोई पैदान्यता नहीं है, उनमें किसी
प्रकार की हलचल नहीं है, वे एक लाश की तरह अपने को ढोये लेते जा रहे हैं। जिन्हा हैं, कष्ट हैं,
विड़ा हैं, परेशानी है, बाधाएँ हैं, अड्डरने हैं, कमाने की विद्धा है और भीरे भीरे एक-एक कदम
नलते हुए अत गं एक दिन शमशान में जाकर के सो जाते हैं।

८. इस

सकता

ही यह

किया

जाये,

ऐसा ह

शिष्य

गुरु हि

गिल

फिर

दाय

ले दि

किसी

इस

पुरुष

अपने

नहीं

नहीं

मानव

देवी-

एक-

को ।

है वि

देव

गम

लेना

कृपा

का

उप

न्त

है ।

जो

नाम

की

गान

मि

को

इस

अप

गत

निरुद्ध आपके जामने दीकर्त्ता द्वारा इमशान की ओर जा रहे हैं, जाप आकेले ही नहीं वह रहे हैं। और आप शुद्ध भी उन लोगों को कहाँ पह पहुँचाने जाते हैं। और जब इमशान में जाते हैं, तो भी उन्होंने कि जीवन बुझ नहीं है, जीवन जाग्रत्तामान है, यह कार्यकरण शुक्र हो जाते हैं। कुछ लोग के लिये प्राण जापत होते हैं, तब वह सोचते हैं कि यह जीवन है नहीं, यह जीवन जगनी कार्यकरण शुक्र हो जाता है। जगर वहाँ से वर्तिस लौटकर पुनः देहगत अवधान में भले जाते हैं।

इसलिये जिश्वापीत्र ने कहा

कि यह शिष्य का सौभाग्य है कि उसका अपने जीवन की प्रगतिशी पर कभी भी, किसी भी समय गुरु गिल जायें। हो सकता है कि मैतालिय रात की अवधान में गिल जायें। हो सकता है कि पवास साल की अवधान गे गिल जायें। हो सकता है कि पूरे जीवन गर नहीं भी गिल जायें।

गुरु यह रहे हो जीवन की प्रगतिशी पर, तुमने जीवन के पैरीस साल पर किये और पैरीस रात बाद भी जहाँ गुरु गिल और तुमने पाच पकड़ लिये और हाथ बकड़ लिये, तब तुम उनके साथ बत रहे। और वह बलव की क्रिया, गुरु को पकड़ कर बलव की क्रिया ही अपने आप में अमृत पथ पुर चलने की क्रिया है। और मैं तुम्हारे प्राणों को पकड़कर के अमृतन की ओर जै जाने की क्रिया सम्पन्न कर रहा हूँ, इसलिये इसे अमृत पर्व कहा है।

गुरु पिछले कई साल से मेरे साथ देहगत जगत्ता में रहे हो, मेरे साथ ठंसते हो, गुरुकरते हो, रोते हो, बिलखते हो, परेशान होते हो, गम तुम्हारा मेरा सम्बन्ध पाच या दस साल का नहीं है। ऐसा ही भी नहीं सकता, गुरु गुरुओं के ऐसे सम्बन्ध होते हैं। गुरु गुरु गुरुओं के लिये जिन्दा होते हैं, कुछ क्षणों के लिये आपसे गिरते हैं, कुछ क्षणों में फिर बिछड़ जाते हैं। उनका गिलना और बिछड़ जाना कोई भठ्ठन नहीं रखता। उराका महत्व वह इराना है कि जैसे बढ़ोती के वहाँ कोई गर गया, डमने उसे कथा देकर उदाया और इमशान में जाकर सुला दिया। इसके अलावा हमारा उसका कोई सम्बन्ध नहीं है, न किसी प्रकार का अभाव है। और यदि गढ़ोती के पर में दुत्र बैदा हो गया, तो एक समय के लिये गुरुकरा लिये, इतना ही जीवन का वित्तन है। गुरु गुरु का भी आपसे इराना ही सम्बन्ध है। आप किस अवधान में हैं, किस हालात में हैं, जन गुरु से कोई लेना-देना नहीं है। वो गुरु हैं ही नहीं। उन्हींने केवल एक दुकान खोल रखी है, एक व्यापार है, एक विनियम है, एक साधन है। उनका गुरुकरा कोई प्राणों का सम्बन्ध नहीं है। जीवन का कोई चिनान या विद्यारथ्यारा नहीं है। तुमसे तो उनका स्वाध्य जल्द है कि मैं आवे और पाच रूपगे गुरु बढ़ा दें, शीरु रूपगे बढ़ा दें, कमरा बढ़ा दें, दाल बढ़ा दें, दरेशाला बढ़ा दें, कुछ दान-दक्षिणा दें दें।

ये गुरु अपने आप में गुरु गुरु होते हैं।

हरे दुनों गुरु के बल मारते हैं तो नहीं पूरे साकार ये होते वहाँ हैं लोक हैं। ऐसा यही कि अल्मोन गी जी पैसे गुरु हैं। इश्वर गुरु में यो ऐसे संकटों मुझे गुरु थे, तो युग में यो ये शिष्यों कि खुप के बारे में यो विश्वासी नहीं था, जान नहीं था।

विश्वामित्र ये यही जान कही कि वह तो गुरु ही नहीं सकता, यो शिष्य को यक्षबृंशी सक। शिष्य गुरु को नहीं प्रकट करता, शिष्य को जान ही नहीं है कि मुझे कहा और किस तरफ गुरु से बित्का है। और ज्ञान ही जीता जी फिर वह शिष्य रहता है जबकि शिष्य का जात्यर्थ कांड बेला भयानी नहीं है, मैं तुम्हें दीक्षा दू बढ़ शिष्यामान हीं हैं, दीक्षा लेने से शिष्य नहीं हैं जो जाता है।

शिष्य का जात्यर्थ है कि तुम गुरु के कितने शिक्षित हो। शिष्य का जीव है शिक्षित याने यो शिष्य। और शिक्षित याने की किसी को कहते हैं। दूसरे ग्राण गुरु के ग्राण से ग्रिल जावे, एकाकार ठो जाने, एक धड़कन हो, एक बेचना हो, एक विचार पढ़ति हो, एक किंवद्धि हो, एक जिन्दन हो, एक जाप हो। और दूसरे शिष्य में शिष्य जीता है, अब शिष्य गे वेतना रह नहीं सकती, ज्योंकि शिष्य ग्राणगत अवध्या मे पैदा होता है और किसी दाण विशेष मे उसे गुरु निल्त होते हैं, गिलते हैं और वह शायद नहीं भी गहियान राके। मैं एक रास्ते पर चला जा सकता हू बीन मे पनीस लोग निल्त होते हैं, मैं किसी की ताक देख ही नहीं शका हू तो चला जाता हू और पर जाकर सो जाता हू।

बधिकारा व्यक्ति भी ऐसे ही हैं, पैदा हो गये हैं, चल रहे हैं, यात्रा पूरी हो गी और रणसामन मे जाकर सो जायेंगे। किर कोई गम भिलेगा, उसके साथ मे कोई विन्तन नहीं है, उसके हाथ मे नहीं है कि वह किर कहा जाना लेगा। तुम्हारे हाथ मे यह निरिक्षण नहीं था कि तुम किशनलाल के यहा पैदा होगे। यह संयोग है कि तुमने किशनलाल के यहा जन्म ले लिया, वे संयोग था कि तुमने शूद के यहा जन्म ले लिया, तुमने सत्रिय के यहा जन्म ले लिया, ब्राह्मण के यहा गा किसी अन्य व्यक्ति के यहा जन्म ले लिया। तुम्हारे हाथ मे सता नहीं थी, ज्योंकि तुम्हारे हाथ मे गुरु नहीं था। गुरु तुम्हे इस बार का ज्ञान दे सकता था कि तुम्हारा जन्म लेने का अधिकार तुम्हारा है, इश्वर का नहीं है।

इश्वर तो कोई राता ही नहीं है, इश्वर तो गुरु है, गुरु को खुद ही 'गुरु ब्रह्म, गुरु विष्णुः, सूर्य वैवी भूर्येष्वरः' कहा गया है और जब हग चेद पदते हैं, तो यजुर्वेद में कहा है कि इश्वर जाने जाप मे कोई सता ही नहीं है। इश्वर का कोई जन्म नहीं होता। इश्वर का कोई विन्तन नहीं, उसका कोई आकार नहीं उसका कोई रूप नहीं, उसका कोई रंग नहीं, कोई दिशा-नदी, कोई दृष्टि नहीं, कोई आख नहीं। यह गुरु है तो नहीं तो हग किस को पकड़ते हैं? ... और यिसको तुम पकड़ रहे हो, वह देवता है, इश्वर तो है नहीं। यिसको तुम देवता जानते हो, तो सन 1947 से पहले भारत तर्थ मे तीरीस करोड़ देवी देवता थे, आज लरब से कपर देवी-देवता हो गये हैं। देवी-देवता तो बढ़ते जा रहे हैं। तब तीरीस करोड़ थे, यिर यालीस दुरु, वैतालिस हुए, और आजी जब जन्मगणना हुई तो एक लरब देवी देवता हो गये हैं। देवी-देवता की वृद्धि तो हो रही है, लेकिन इश्वर मे वृद्धि नहीं हो सकती। तुम इश्वर को गहियान भी नहीं सकतो। इसलिये तुमने देवताओं का वर्णन किया है, उन्हें तुम देख सकते हो। और देवता का तात्पर्य है कि तुम सत्य ही देवता हो।

'जन ता' - जो यात्रा मे जाना गिज जाए, और जो प्राप्ति कर ले उठाको देवता कहते हैं। 'ददागि त्वं त्वं देवता' - तुम्हारी यात्रा मे, तुम्हारे जीवन की यात्रा मे कोई मिल जाये, ऐसा मिल जाये जो तुम्हे कुछ दे सके। जाकी सब तुमसे लेने की इच्छा रखेंगे, परं तुमसे लेने की इच्छा रखेंगा, पल्ली तुमसे कुछ प्राप्त करने की इच्छा रखेंगी, देता भी लेना चाहेगा, मां-बाप भी कुछ देना चाहेगे, माझ भी तुमसे कुछ लेने की कामना करेगा।

परंतु तुम तुमसे कुछ कमना नहीं करेगा और यदि गुरु कमना करता है, तो यिर गुरु है ही नहीं। गुरु विष्णु से कुछ न हो वही सकता, यद्योंकि शिष्य जे पास कुछ हो से ज्ञही। शिष्य तो बिल्कुल खाली है और यदि विष्णु के पास कुछ है, तो विष्णु की इधुली है, यहाँ है कि सबसे पहले वह शिष्य को मृत्यु दिलाया दे। जो कुछ तुम्हारे पास आय तक था, वह अपने आप मे मृत्यु को प्राप्त हो जाये - तुम्हारा आरु, तुम्हारा जल, तुम्हारा जल, तुम्हारा ज्ञाप, तुम्हारा असत्य, तुम्हारा व्यष्टितार, तुम्हारी व्युत्तनार, तुम्हारा परिवापन, तुम्हारा जी कुछ भी है वह अब मृत्यु को प्राप्त हो जाये।

एहली बार मे तुम्हे उमली पकड़ कर उठा रास्ते पर ले जा रहा हू जिस रास्ते को अमृत का रास्ता कहा गया है। 'मृद्योर्ग अग्रां गमय' - इसलिये गुरु जन्म दिवस पर तुम्हारा एक नवीन परावणी के पर चलने का आप होना चाहिये, जो अमृत का रास्ता है, इसलिये इसको अमृत पर्व कह रहा हू। इसलिये इस पर्व पर मे तुम्हे इन दर्शनों मे उत्तमाना याहता, गे तुम्हें दृत और बद्देत की अवस्था मे यी नहीं ले जाना चाहता - यह एक उच्च कोटि के योगियों और रातों की परिभाषावां हैं। उन परिभाषाओं मे उलझने से हगारा जीवन चल नहीं सकता। हगारे जीवन का आधे से ज्यादा अंश पार हो गया है और थोड़ा सा अंश रह गया है। और इस अवस्था मे आकर के गुरु मिले हैं, एक मोड़ पर। आज गुरु मिले हैं, और वभी तक तो हगने यही समझा था कि जो शरीर है - वह गुरु है। अभी तक तो समझा था कि उस गुरु को पकड़े और मिले। मगर आज गहियी बार एहसास कर रहे हैं, कि इस मोड़ पर गुरु के साथ बलने की किया है।

और इसलिये यह अमृत पर्व मनाने के पीछे जात्यर्थ कोई भौतिक जन्म दिवस मनाने का नहीं है। युसे कोई इस यात्रा की पिशेवता है भी नहीं कि मेरा जन्म दिवस कोई बहुत महत्व रखता हो, ऐसा कोई विन्तान भी नहीं है। मेरा जीवन अपने आप मे गहत्पूर्ण है, मेरे प्राण महत्वपूर्ण है, गेरी जिन्दगी की धड़कन बहुत महत्वपूर्ण है, मेरे शिष्य महत्वपूर्ण हैं, और मैं शिष्यों के हृदय मे बैठा हुआ हू, यह बहुत महत्वपूर्ण है। जन्म दिन महत्वपूर्ण नहीं है।

और यदि गहत्वपूर्ण है भी तो इसलिये कि मुझमें राकत है, मुझमें क्षमता है, मुझमें वैतन्यता है, तर्थोंकि मेरे जिन्दा यह हूँ मूल गुरु नहीं हूँ। मुझमें प्राप्त है, चलना है, मेरे उग्र पाता है, यमदाता है किसे तमाम प्राप्त है जो आसकता है, मूल गुरु नहीं है। शैठने की किंवा का मुझमें जात है, तुम भूमि भूता नहीं रकते, तुम अपने प्राप्तों से मुझे हटा जाते राकते, तुम्हारे यह राकत, वह शमला है तो नहीं।

इसलिये मैं तुम्हें कह रहा हूँ कि जीवन दो चार सम्बान्ध वैदा करने के लिये नहीं है। जीवन दस, पांच, पांचीस हजार रुपये इकट्ठा करने के लिये भी नहीं है। वह तो देह की एक अवश्यकता है, यह तुम कर सकते हो और तुमने किया है और तुम करोगे भी। मगर यह जीवन का कोई बहुत बड़ा आनन्दभूमि पर्व तो हो सकता है। उससे ही सकता है कि तुम वार-छ-कपड़े पहन लो, उससे हो सकता है कि तुम दो-चार गहने बनवा लो, उससे ही सकता है कि तुमहारी दो-तीन तुम्हारी ओरी स्थित हो सकती। जाये, मगर उस सूख के अन्यर आनन्द की अनुभूतियाँ नहीं हो सकती।

इसलिये प्राणगत अवस्था का तात्पर्य है कि शिल्पे कई कई जन्मों से तुम्हारा येरा यान्मय है। कोई पहली बार तुम्हारा मेरा निलग नहीं हुआ है। पहली बार अगर निलग हुआ था, तो मैं तुम्हारे छन्दय में देह-भी नहीं सकता, तुम अपने छन्दय में मुझे स्थापन कर भी नहीं सकते हो। मुझ और शिष्य का सम्बन्ध तो प्राप्त हो सकता है। शिष्य का तात्पर्य है कि गुरु के निकट आये। शिष्य का तो अपै है कि गुरु के पास जाये और गुरु के समीप बैठे। देह और कृष्ण करने की जल्दता भी नहीं पाये। शिष्य का तो अपै है कि गुरु के पास जाये और गुरु के समीप बैठे। देह और कृष्ण करने तो जल्दता भी नहीं पाये। शिष्य का तात्पर्य है कि गुरु के अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है। यही तो उपनिषद का अर्थ है। उपनिषद का है। वह केवल पास में बैठे, वह केवल बैठना भी अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है। यही तो उपनिषद का अर्थ है। उपनिषद का है। वह बैठने की किया भी अपने आप में कोई तामान्य किया नहीं है, और यदि समृद्ध के पास बैठेंगे तो अपने आप लहर भी आएं। यह बैठने की किया भी अपने आप में कोई तामान्य किया नहीं है, और यदि गहने के पास बैठेंगे तो अपने आप लहर भी आएंगी और तुम्हारे चरण पांव भी परन्तु समृद्ध के पास बैठने की किया हो जाए तुम्हारे तुम्हारे। और तुम गहने के पास बैठेंगे तो अपने आप लहर भी आएंगी और तुम्हारे चरण पांव भी परन्तु समृद्ध के पास बैठने की किया हो जाएगी। और तुम गहने के पास बैठेंगे तो अपने आप लहर भी आएंगी और तुम्हारे चरण पांव भी परन्तु समृद्ध के पास बैठने की किया हो जाएगी। और जगर है। ये मेरा गला नहीं पकड़ सकती, हाथी नहीं हो सकती, मुझे ज़क़ज़ीर नहीं सकती, यह बहुत बड़ा अन्यार है।

इसलिये मैं एक किनारे पर खड़ा हूँ और तुम दूसरे किनारे पर खड़े हो। तुम्हारे पर नाघा आती है, तो तुम गधमील हो जाते हो, घबरा जाते हो, विवक्षित हो जाते हो कि वया होगा? यह यह होगा? यह बीमार हो गया, अब हालत और खराब हो जायेगी, अब कौसो होगा? बहुत मुश्किल हो जायेगी और कल बुढ़ा हो जाऊँगा और बेटा रोया नहीं करेगा तो कौसो होगा? और जगर पत्नी लीगार पड़ गई तो यह होगा? और पति मर गया तो कौसो होगा?

तुम किनारे पर खड़े हो और मैं भी समृद्ध के एक किनारे पर खड़ा हूँ और आज मैं तुम्हें शिखत्रण दे रहा हूँ कि किनारे पर स्थित रहने से कुछ लाभ नहीं हो पायेगा। मैं तुम्हें कह रहा हूँ कि इस समृद्ध में कृदग्ना पढ़ेगा तुम्हें, कूदोगे नहीं तो तुम जहाँ जा रहे हो वह यो इनशान का रास्ता है। और इससे पहले भी मैं तुम्हारों कह चुका हूँ, शिल्पे जीवन में भी कह तुम्हा हूँ, कोई पहली तार नहीं कह रहा हूँ। यह अवश्य तुम्हारी पहली बाप नहीं है। तुम तो बां-बार नहे हो, पर-पर मैं बां-बार नहीं परा हूँ — मैं हर क्षण युक्तारे सामने

जिन्होंने हुए प्रत्येक काण जागृत हुए। और जागृत गुरु मिलना बहुत कठिन और असम्भव है।

तुम्हारु ने ऋषिकाल में वशिष्ठ पैदा हुए, पिशवामित्र, अवि, कणाद, पुलस्त्य, गौतम, जमदग्नि, पाणिनी तुम्हें और उसके सहूल बाद फिर कृष्ण पैदा हुए, पांच डणार वर्ष बाद। वीथ में कोई व्यक्तिरूप पैदा हुआ ही नहीं। पीढ़ियां बीत गई, जागृत व्यक्तित्व ही उह जल्दी नहीं है और कृष्ण की आत्मा गई और फिर उसके पवीस सौं वर्ष बाद फिर एक जागृत व्यक्तिरूप पैदा हुआ बुद्ध।

बुद्ध ने कहा कि व्यान के माध्यम से भी जीवन को पकड़ा और पहिचाना जा सकता है, उन्होंने अपने शिष्य जानन्व से कहा - विष्वामित्र! तू चिठ्ठन। मत कर, मैं लेर पास हूं, तू केंद्रल अपना हाथ मुझे लोंगे दूं, तुझे कुछ करने की उम्मत नहीं है। तू कुछ कर भी नहीं सकता।

और मैं भी तुम्हें वही बात कह रहा हूं, वर्षोंकि तुम्हारी कई पीढ़ियां, तुम्हारे कई जीवन मेरी आंखों के सामने से गुजरे हैं। तुम्हारा शरीर कई बार मिटा है, फिर जन्म लिया है। कभी तुमने किसी घर में जन्म लिया है तो कभी किसी और घर में जन्म लिया है। तुम्हारे पिछले पवीस और सत्ताइस जन्मों का हिसाब-किताब मेरे पास है। और मैं तुमने से प्रायेक को हिसाब-किताब दे सकता हूं। तुम जाकर चेक कर सकते हो, कन्फर्म कर सकते हो कि क्या मैं पिछले जीवन में यहां पैदा हुआ था? तुम्हारा फोटो लगा होगा। अभी तुम पैतालीस साल के हो, तो पवास पहले जल्द कहीं न कहीं रहे ही होंगे, मेरे होंगे, वापस फिर जन्म लिया और फिर ऐतालिस साल और बीत गये हैं। इसका नितालन दुआ कि आज से पवास साल पहले और उससे भी बश साल पहले जल्द दुन कहीं न कहीं साठ या सन्तर साल के बुझवे रहे होंगे। वह बुझदा भरा, फिर तुमने गर्म खुना, और गर्म को खुनने में तुम्हारी कोई ताकत नहीं है, वर्षोंकि तुम प्राणावान थे ही नहीं। जो गर्म मिल गया, तुमने जन्म ले लिया।

मगर मैं कह रहा हूं कि तुम जाकर अपना पिछला जीवन चेक कर सकते हो, जरूर तुम्हारा कोई फोटो लायद ठंगा भी होगा। तुम्हारे पैटे पवासी साल के हो रहे होंगे और तुम्हारे फोटो पर एक माला लटकाई हुई होगी, कि इमारे मिताजी थे, बहुत अच्छे थे, हार्ट अटैक हुआ था और खत्म हो गये। उन्होंने कुछ किया नहीं जीवन में। और यही मैं कह रहा हूं कि पिछले पवीस जन्मों से तुम कुछ कर नहीं पाये हो। और आज फिर हम उसी मानसोद्वर के किनारे पर आकर खड़े हैं। तुम भी खड़े हो, मैं भी खड़ा हूं। फिर मैं वही आवाज दे रहा हूं। मैं आवाज दे रहा हूं कि अगर तुम किनारे पर खड़े रहोगे और अगर तुम कुछ बढ़ोगे मौजूद के कण मिलेंगे, बालू के कण मिलेंगे। इसमें तुम्हें और कुछ नहीं मिलेगा।

तुम्हें कुछ लेना है, तो कहना पड़ेगा समुद्र में, वीथ नज़दीक में, और अगर कुछ जाओगे तो तुम गोदियों से हाथ भर कर बाहर निकलोगे। और कहने के लिये मैं कोई तुम्हें अकेले धनका नहीं दे रहा हूं। मैं खुद तुम्हारे साथ दुनकी लगाने के लिये तैयार हूं। तुम्हें इस समुद्र में अकेला नहीं धनके रहा हूं। अकेले धनकेतना मेरा धर्म भी नहीं है, कर्तव्य भी नहीं है। वीथ नज़दीक में तुम्हारा हाथ छोड़ना मेरा धर्म नहीं है मेरा कर्तव्य नहीं है। बार बार तुमसे कहना इसके पीछे मेरा अर्थ यही है वर्षोंकि बहुत समय व्यतीत हो चुका है। ये बार बार के बायदे चरित नहीं हैं।

तब तक तो मैंने तुम्हें देहगत साधनाएं करवाई, देवताओं को प्रसान्न करने के लिये साधनाएं करवाई, लक्ष्मी की साधना करवाई, छन्दोग्य और प्रसान्न करने की साधना करवाई, इसकी साधना करवाई, उसकी साधना करवाई, देहगत अवश्या में साधन्य रखा। पठली बार मैं तुम्हें मैं तुम्हें अमृतात्म की ओर लेकर आ रहा हूं। पठली बार तुम्हें कह रहा हूं कि ये जीवन तुम्हारा बहुत आवश्यक है, तुम्हारा यहां आना आवश्यक है, क्योंकि तुम्हारा ये आना उस समुद्र के किनारे खड़ा होना है जहां तुम मेरा हाथ पकड़ कर खड़े हो। अभी तक तो एक किनारे पर तुम खड़े थे और एक किनारे पर मैं खड़ा था। और इसी मैं पवीस जन्म बीत गये, चालीस जन्म बीत गये, पन्द्रह जन्म बीत गये। हर बार तुम भूजों लिले, हर बार मैंने तुम्हें जावाज दी, हर बार मैंने तुमसे कहा कि किनारे खड़े रहने से तुम्हें कुछ मिलेगा भी नहीं। और तुम्हें कुछ मिला भी नहीं है।

तुम्हारा शरीर ताकतवान, समरावान है ही नहीं। अगर तुम्हें शरीर पर नाज है तो तुम तीन दिन स्नान नहीं करोगे तो चौथे दिन से बदबू आने लग जायेगी। इसमें से सुगम्य निकलने की बात तो बहुत दूर की है, इसमें तुम बार दिन साबुन नहीं लगाकर नहाओगे तो बार दिन बाद कोई तुम्हारे पास खड़ा भी नहीं रह पायेगा, इनी बदबू आगे भी तुम्हारे शरीर से। मेरे आदमी क्या, जिन्दा आदमी के पास भी नहीं खड़ा हो सकता, जिन्दे आदमी की बदबू भी इतनी बदबूदार हो जाती है। तुम्हारे शरीर में कुछ ही नहीं, कोई धड़कन नहीं है, कोई धेरना नहीं है।

इसलिये मैं कह रहा हूं कि तुम अपने गुरु शरीर को अपने कन्धों पर ढोते हुए बले जा रहे हो, तो मैं फिर वीथ में आकर खड़ा हूं। पिछले बार भी खड़ा हुआ था। मैंने पहले भी कहा है कि ज़रूर किसी न किसी जन्म में तुमसे गायदा किया था, नायदा किया था कि तुम्हें इत्तरव तक ले जाऊँगा और फिर मैं नायदा करता हूं कि मैं तुम्हें ले जाऊँगा। मैं जानता हूं कि तुम हाथ झुड़ाने की कोशिश कर सकते हो, मैं जानता हूं कि तुम बहां से पवास घर जाओगे और अपने को बदल दोगे, मैं फिर तुम्हें समझाऊँगा, फिर चेतना आयेगी, याद आयेगा कि गुरुजी ने कहा तो था, कि इससे कायदा तो कुछ है नहीं, जीवन का विन्दन यह नहीं है।

मगर उसके बाद फिर तुम उसी मैं धूमित हो जाओगे। और ऐसा कई बार हो चुका है। कोई यह भहली बार नहीं है। तुम्हारे—मेरे बीच मैं लका—छिपी के खोल कई बार हो चुके हैं। मैं फिर तुम्हारे प्राणों में दस्तक दे रहा हूं, मैं फिर गेंधों की तारह बोल रहा हूं, फिर आवाज दे रहा हूं, धड़कन दे रहा हूं, चेतना दे रहा हूं, कि जब समस्य बहुत कम बद गया है तुम्हारे जीवन का भी और मैं तो अपने जीवन को जानता ही हूं। मेरे लिये तो कल का प्रत्येक क्षण स्पष्ट है, सार्वक है। मुझे

मालूम है कि आज से दो दिन बाद क्या होगा, दो शाम बाद क्या होगा। और युधे में भी मालूम है कि तुम्हारे जीवन का क्या होने वाला है। इसलिये मैं तुम्हें डिम्पत दे रहा हूँ, जोश दे रहा हूँ, कि तुम्हें कहना है, क्योंकि मैं कूद चुका हूँ।

बीज मिट्टी में खिलता है तो छायावार पेड़ बनता है। ये जो इतना बड़ा नीम का पेड़ है, आज से तीन साल पहले बहुत छोटी सी टहनी थी, और साढ़े तीन साल पहले छोटा सा बीज था, जो जमीन के अन्दर मिला तुआ था। उस बीज का कोई असित्त नहीं था। वह बीज तो दिखाई भी नहीं दे रहा था। बाजरे ने दाने वा गेहूँ के दाने से बड़ा नहीं था वह नीज। मगर मैंने मिट्टी में खिलाया उसको। मुझे मालूम था कि बीज को मिट्टी में खिलाना जुड़े जरूरी है। और बीज को मिट्टी में खिलाया और आज चार साल बाद उस पेड़ के नीचे सी आदमी विश्राम कर सकते हैं। मैं खुद भी एक बीज था, मैं मिट्टी में खिला और मिट्टी में खिलकूल अपने आप को समाप्त कर दिशा। अपना कुछ अस्तित्व रखा नहीं।

मैंने संग्राम जीवन लिया तो मेरी भी पत्नी थी, पुत्र थे, बच्चु थे, मेरी मां थी, आप थे, माझे थे, सम्पत्ति थे, रिश्तेवार थे। मेरे भी जीवन में सुख था, योवन था, मेरे भी जीवन में सुख भी कामनाये थीं, पत्नी थी, इच्छायें थीं, सबकुछ था, मगर एक बार निश्चियत किया कि इस बीज को या तो मैं मिट्टी में खिलाऊं और या फिर उसके नीचे में बिल्कुर दूँ। और उन सबके नीचे में बिल्कुर देता तो तुम्हारी तरह एक मामूली व्यक्ति बनकर रह जाता। मैं मिट्टी में खिला तो आज मैं पेड़ बन रका हूँ और तुम्हारे जैसे हजारों शिष्यों को अपनी छाया तले विश्राम दे सकता हूँ।

और मैं तुम्हें भी कह रहा हूँ कि तुम्हें भी मिट्टी में खिलना पड़ेगा। अपने आप को बचाकर रखने से तुम छायावार पेड़ नहीं बन सकते। जाकी बन सकते हो, लेकिन उस शाड़ी के नीचे कोई विश्राम नहीं ले सकता। बहुत छोटे आक के पेड़ बन सकते हो, लेकिन उस आक के पेड़ के नीचे तुम्हारा छोटा या परिवार भी ठीक से नहीं ले रहा सकता। तुम्हारी बहुती छोटी सी टहनी है कि तुम्हारा बेटा भी आशम से सास नहीं ले पा रहा है। तुम्हारी इसी पतली छाया है कि तुम्हारी पत्नी भी आराम से विश्राम नहीं ले पा रही है। उसे भरोसा नहीं है कि यह छाया मुझे पूरी खिलेगी भी या नहीं खिलेगी। ऐसी छाया का कोई अर्थ भी नहीं है कि जहाँ तुम अपनी पत्नी को, पुत्रों को भी छाया नहीं दे सको, और वह जो छाया अनुशय भी कर रहे हैं, वह एक कल्पना है। हजारों-लाखों लोगों को छाया देना तो बहुत बड़ी बात है।

बनार्ड शॉ, एक बहुत बड़ा कवि हुआ है। उन्हीं से रास्ते की घटना है, कोई हजार साल पहले की घटना नहीं बता रहा हूँ। बनार्ड शॉ ने अपनी सेक्रेटरी से कहा - "मैंने जिन्दगी में बहुत काम किया, मुझे कई पुरस्कार-समान निले, मैंने बहुत कुछ देखा है। मगर मैं एक यीज देखना भूल गया।"

सेक्रेटरी ने कहा - "यथा भूल गये! आपने बराने बढ़े नाटक लिखे, उपन्यास लिखे, पथ लिखे, आपका बड़ा रामायण हुआ, प्रसिद्धि दूर, अरबों करपये आपके पास में हैं और धन, दीलत, पत्नी, पुत्र जब कुछ आपके पास में हैं फिर देखना क्या है, मूरे संसार की यात्रा भी तो आप कर दूँगे हैं।"

बनार्ड शॉ ने कहा - "मैं अपनी लेख (प्रृथ्वी) देखना चाहता हूँ। मैं मरना चाहता हूँ।"

सेक्रेटरी ने कहा - "ये आप क्या कह रहे हैं, दिनांक तो दुरस्त है आपका? मरना चाहते हैं।"

उन्होंने कहा - "बिल्कुल! तू अखबार में छाप दे कि 'बनार्ड शॉ डाइड'। मैं पांच दिन के लिये कहीं बहुत जाना चाहता हूँ और कगरे से बाहर निकलूंगा नहीं। और तू कह देना कि बनार्ड शॉ तालाब में बूँद गया।"

सेक्रेटरी ने कहा - "ये होगा कैसे, कल मैं जैल चली जाऊँगी। आज मैं लिख दूँगी मर गये और पांच दिन बाद आप पैसा हो जाऊँगे तो मुझे जेल हो जाएगी।"

उसने कहा - "सेक्रेटरी, या तुम फिर मेरी हरका ही कर दो नहीं तो फिर इसे अखबार में छपाओ। मैं यह देखना चाहता हूँ कि मेरी पूर्ण कैसे होती है। पूर्ण का क्या अर्थ होता है, क्या ध्यान होता है।"

और दूसरे दिन अखबार में बढ़े-बढ़े अख्खों में धन गशा कि 'बनार्ड शॉ हैज डाइड' - यो तौरने के लिये तालाब में गये और दूब गये, उनकी लाश का कुछ पता नहीं। लोगों के टेलीधारा आने शुरू हुए, पत्र अपने शुरू हुए, पत्नी रोई, आखों से आरूपके, पाण्टे-दो घण्टे उदास रही, बेटा भी रोया। आखिर पांच घण्टे बाद बनार्ड शॉ कगरे में से बैठा बैठा सब देखता रहा।

बैठे ने भा को कहा - "तू कब तक भूखी रहेगी, एक दो रोटी तो खा ले।"

उसने कहा - "तुम्हारे पिता खले गये, मैं अनाथ हो गई। कितना बड़ा नाम था उनका।"

बैठे ने कहा - "वो तो भही है, लेकिन रोटी तो खानी पड़ेगी।"

नी हसने कहा - "हाँ वे तो हैं! रोटी के आ।"

मा ने कहा - "तू भी खा ले बेटा।"

बेटे ने कहा - "पिताजी चले गये।"

मा ने कहा - "अब मरने के पीछे तो कोई मर नहीं सकते मरन। याले गये, तो घले गये। यो गये, यो तो जाना ही था। आज नहीं तो दो साल बाद आते। मगर तू यिन्हाँ मरा कर, बहुत धन छोड़कर जावे हैं, खाने-पीने का बहुत साधन है बेटा! अपना जीवन बहुत आराम से कट जायेगा बेटा!"

बनार्ड कगरे में बैठा शोचने लगा कि मेरे बारे में कोई चिन्तन ही नहीं है, ये चिन्तन है कि रोटी आये और खा लें। चिन्तन ये है कि बहुत धन पीछे छोड़कर गये हैं, यिन्हाँ की कोई बात नहीं है।

और मैं तुम्हें भी यही कहता हूँ कि एक बार मर कर देख लो, बहुत आनन्द आयेगा। तुम्हें मालूम पढ़ जायेगा कि जिसे तुम काया समझ रहे हो, पत्ती और पुत्र समझ रहे हो, वे बार घट्टे बाद दोटी खाने लग जायेगे। पत्ती बार घट्टे आसू जल्लर बहायेगी, बार घट्टे सिसकेगी जल्लर गर्देगी, लेकिन दो महिने बाद बापिस राग हो जायेगा, मरता हो जायेगी। और यह तो तुमने देखा है, कि तुम्हारे पिताजी की मृत्यु हुई है, बापाजी की मृत्यु हुई है, सम्बन्धियों की मृत्यु हुई है, उस समय तुमने उनकी परिनियों को, उनके पुत्रों को देखा है। पत्ती की मृत्यु हो जाती है, बापस साल मर बाद शादी कर लेते हैं, बापस सन्तान होने लगती है, बापस जीवन चलने लग जाता है। बेकार तुम समझ रहे हो कि तुम्हारी जाता बहुत सुखद है, शाशद इतरों ज्यादा मृगतृष्णा कुछ नहीं हो सकती। इससे ज्यादा न्यून चिन्तन कुछ नहीं है।

तब बनार्ड शों ने कहा कि मैंने जीवन में पहली बार सत्त्व को जाना और किर उसने अपने जीवन का जो अनितम गंभीर लिखा, यह बहुत अधिक महसूसपूर्ण है। उसमें उसने खुद कहा है - "मैंने आज तक जो कुछ लिखा है, उसे नदी में बहा दीजिये, थेम्स में बहा दीजिये, यूजलेस है। इसलिये कि बिना गुरु के मुझे जीवन में कोई रास्ता बताने वाला ही नहीं था। मुझे किसी ने बताया नहीं कि मरने का बया अर्थ होता है। और मुझे किसी ने बताया नहीं कि मैं किस प्रकार से जिन्दा रह सकता हूँ। और अब तो समय इतना कम रह गया है, कि अगर मैं नाहूँ भी तो जिन्दा नहीं रह सकता हूँ।"

और मैं भी तुम्हे बार-बार अकझीर कर यही कह रहा हूँ कि तुम्हें समुद्र में कूदना है। तुम अगर कूदोगे नहीं तो तुम्हारे हाथ में कंकण-पत्थर के अलाया कुछ नहीं आ सकता। तुम्हारे पास छोटे कागज के टुकड़े जल्लर मिल सकते हैं, पर वे तुम्हारे काम नहीं आ सकते। जो व्यक्ति कमाता है, वह उसका लाभ उठा ही जाती सकता। वह लखार का लियम है। तुम्हें जो कुछ कमाया है, उसका लाभ तुम जानी उठा सकते। तुमने यचीस हजार रुपये कमाये तो सही, पर गंगोत्री के किनारे जाकर कमी बैठ नहीं पाये। बैठ सकते ही नहीं तुम। अगर तुम जाना भी याहोगे तो पत्ती पीछे से कहेगी - "तुम जाना खाहते हो मगर पीछे ये दुकान कौन बलायेगा? दुकान में बैठेगा कौन?"

तुम भी सोचोगे कि हाँ ये बात भी ठीक है। अगर दुकान पर नहीं बैठेंगे तो एक बार जो याहक दृटा कि किर हमेशा के लिये टूट जायेगा। याहक टूट जायेगा, इसलिये दुकान में बैठना ज्यादा जल्ली है, गंगोत्री गई ज़बड़े में। और अगर तुम नौकरी करते हो और अफसर को कहते हो कि गंगोत्री जाना है, तो वह अफसर दो बार देखेगा कि यह कहाँ से आया है और कहेगा - 'आर यू मैड और ऑल राइट,

गोत्री भी कोई जाने की चीज़ है। दिमाग खाराव है पुम्हारा, तनखाह कट जायेगी तुम्हारी। नहीं, तुम गंगोत्री नहीं जा सकते! तो अगर तुमने अपनी जिन्हीं में कुछ कमाया है, तो उसका लाभ तुम नहीं उठा सकते। और तुमने जिसको पैदा किया है उसका लाभ भी तुम नहीं उठा सकते। सच्चान् युम्हे सुख नहीं दे सकती। वर्णोंकि तुमने बैसा ही पैदा किया जैसे कि तुम थे। तुम जीव थे, तुमने जीव को पैदा कर दिया। तुम्हारे पास प्राप्त थे नहीं, तुमने उसमें प्राप्त की धड़कन दी नहीं, चेतना दी नहीं। इसलिये तुम समुद्र के किनारे खड़े-खड़े हिचकिचा रहे हो — कूदूं कि नहीं कूदूं ये गुरुजी कह तो रहे हैं छलांग लगा दो। अब गुरुजी छलांग तो लगा दें, मगर ये पत्ती खड़ी हैं जिन्हारी, आप देखिये इसकी आस में आस हैं गुरुजी, आप छलांग लगाने को कह रहे हैं। मगर मेरे बिना रह नहीं सकती ये गुरुजी। ऐसे कहा यो रह जायेगी, बिना मत कर, तू धब्बा गत, मेरे साथ बल, तेरे साथ मैं भी छलांग लगा देणे के आसू हैं, यो अपने आप आसू पोछ-पाँच देगी, कपड़े बदल देगी। तू धब्बा गत, मेरे साथ बल, तेरे साथ मैं भी छलांग लगा देता है। ऐसा नहीं कि मैं धड़के दे रहा हूं। तुम कहते हो — नहीं गुरुजी! बस एक लड़की की शादी करनी है, लड़की की शादी हो जायेगी तो नैं छलांग लगा दूंगा गुरुजी। आप भरोसा रखो मेरे ऊपर गुरुजी, मेरे ऊपर भरोसा दो रखो। और भरोसा रखते-रखते पुम्हारे और मेरे दीव पन्नीस जन्म निकल गये। बब भरोसा नहीं रख सकता। तुम्हारे ऊपर से गेहू विश्वास उठ गया है। हर बार तुमने मुझे धोखा दिया है। हर बार मैंने तुम्हें कहा है कि तुम ब्रह्म जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो जाओ। ये बार-बार मां के गर्भ से जन्म लेना और तीन-चार साल मल-मूत्र में रहना, तुम विल्कुल एक शूद्र की तरह मल और विश्वास में लिपटे जीवन व्यतीर्ण करते हुए ग्यारह-बारह साल की होते हों और वापस उसी बदकर में घूम जाते हों। किर बर जाते हों, किर जन्म ले लेते हों। और किर में तुम्हें किसी गोद पर भिलता हूं। बार-बार तुम यों ही मुझसे हाथ छुड़ा लेते हों। किर अगली बार तुम कहते हों — गुरुजी आप मुझपर भरोसा देखिये, मैं आपका शिष्य नहीं आप मेरे गुरु हैं, आप मेरे देशता हैं, आप मेरे प्राप्त हैं, गुरुजी आप मुझपर भरोसा देखिये। और किर आख दन्य कर 'त्वमेव माता वै कहता हूं कि तुम ये कथा कर रहे हो?

तुम कहते हो — गुरुजी धोखा सा एक काम और रह गया है, यो बार महिने और लगेंगे। और अभी तुम तो धिल्ला रहे थे कि सौंप दिया जब भार तुम्हारे हाथों में। 'सब सौंप दिया इस जीवन का सब भार' गा भी रहे हैं, नाच रहे हैं और किर जब मैं कह रहा हूं कि तुम्हें बलना है। तो तुम कह रहे हो — 'गुरुजी बलना कहां है, बाढ़ी दो-दो लड़कियां कुवारी बैठी हैं, उनकी शादी भी तो करनी है। वह तो शाम को कह दिया था कि 'सौंप दिया जब सौंप दिया'। अब ऐसे कोई सौंपा थोड़ी ही जाता है गुरुजी। ये तो भजन में सब लोग गा रहे थे अब सौंप दिया तो हमने भी गा लिया — 'अब सौंप दिया, अब सौंप दिया'। ऐसे सौंपा नहीं जाता है गुरुजी!

तुम कहते हो — 'गुरुजी! यो सब तो ठीक है, मगर आप खुद ही रोब लो गुरुजी।' मैं कथा कर सकता हूं। मगर आप भरोसा रखो, बस दो—बार साल की और बात है। पांच साल बाद किर कोई बात नहीं होगी गुरुजी।' इसलिये अब तक तो ये कहता रहा कि तुम अपना हाथ मुझे दे दो, परन्तु अब मैं फहली बार कह रहा हूं कि तुम्हें हाथ नहीं देना है मुझे, बहुत ही गधा अब, अब मैं खुब तुम्हारा हाथ पकड़ूंगा। वर्णोंकि मैं अपना हाथ दूंगा तो किर तुम हाथ छुड़ाकर किनारे हो लोगे और छुड़ा लेते हों। इसलिये हर बार ठगा मैं गधा हूं, छला मैं गधा हूं, तुम नहीं छले गये हों। हर बार धोखा मैंने खाया है, तुमने धोखा नहीं खाया है। हर बार मैंने तुम पर विश्वास किया है। मगर इस बार ऐसा सम्मत नहीं है। अब इस जीवन में ऐसा नहीं हो सकता। अब इस जीवन में तुम्हारे बार-बार जन्म-मरण नहीं देना चाहता। और मैं नहीं चाहता कि तुम खशान में जाकर सो जाओ। और मैं ये भी कहता हूं कि तुम्हें कुछ करने की ज़रूरत नहीं है। वर्णोंकि मैं तुम्हारे पास पैड़ा हूं। तुम्हें किया आवश्यक नहीं है। तुम्हें जीवन को समझना है, तुम्हें दूसरा जीवन को अपने आप भीम लूजा। तुम्हारी धिन्ताए मुझपर है, तुम्हारे दो-दो मुझपर है, मैंने अगर तुम्हारा हाथ अपने हाथ में लिया है तो मैं जिम्मेदारी है। अगर शादी होती है और पत्नी का हाथ पकड़ लेते हैं, तो पति की जिम्मेदारी है कि पत्नी को पूरे जीवन तक यो रोटी खिलाये, उसको कपड़े दे, उसके सूखे-दूखे में शामिल हो।

इसलिये मैं तुम्हारा हाथ पकड़ नहीं रहा था, मैं अपना हाथ दे रहा था। मगर किर मैंने सोचा कि ऐसा बलेगा नहीं। जन्म दिवस पर्व रखने का मेरा धिनान यह नहीं था कि मैं तुमसे कोई बात भीत करूं। मेरा चिनान यह था कि मेरे-तुम्हारे बीच जो एकीमेण होता है, हर बार जो समझीता होता है वह दूष जाता है। लेकिन मैं तुमसे यादा कर चुका हूं और मैं यादा तो करनी चाहता हूं। मैं तुम्हे दिखा देना चाहता हूं। मैं तुम्हे दिखा देना चाहता हूं कि जीवन का ए रखना नहीं बहलता, प्राप्तों से सम्बन्ध रख्यापिता करना चाहता हूं। मैं तुम्हे दिखा देना चाहता हूं कि जीवन का आनन्द क्या है, जीवन की भरती क्या है? जीवन की धड़कन क्या है?

मैं तुम्हें परिचय कराना चाहता हूं, प्राप्तों में उत्तरने की उस किया का जिससे बुझ ने आनन्द प्राप्त किया, जिससे कृष्ण अर्जुन को ज्ञान दे सके, उसे कह सके कि तुम जो देख रहे हो, वह शमशान है। तुम सौंप रहे हो कि तुम आख

हो दो। जीप तो बहने से ही मरा हुआ है, उसे मैं पहले ही मार चुका हूँ। तुम तो केवल निश्चित हो, मैं तुम्हें निश्चित बना रहा हूँ। मैं तो तुम्हें बत कर रहा हूँ कि तुम्हें बुद्ध नैं कूदना है। तुम्हें और कुछ करना नहीं है, तोर तुम बसा ही नहीं चाकता, तुमने तोर चलाने की ताकत नहीं है। अब तैर मैं यहाँ नहीं दैता होता तो तुम कुछ नहीं कर सकते। तुम्हारे यह ताकत, यह क्षमता नहीं है।

और जब अर्जुन तीर बलाता तो कर्ण का रथ एक दग से पांच गज पीछे सरक जाता था। कर्ण भी बहुत बड़ा घोड़ा था, बहुत बहादुर था, लेकिन पिर भी रथ पांच गज पीछे सरकता था, एक तीर से। और जब कर्ण बाण घलाता तो अर्जुन का रथ एक गज पीछे सरकता। अर्जुन गर्व से बहुत पूल कर देता - "कृष्ण! मेरी बाणों की ताकत देखो। तुम कर्ण की बहुत नाजीक जाते हो कि वह तीर बलाने में बहुत ताकतवान है। मैं जब तीर बलाता हूँ तो उसका रथ पांच गज पीछे धकेल देता हूँ। अगर उसके तीर से मेरा रथ केवल एक गज हो पीछे सरकता है।"

कृष्ण ने कहा - "मैं जो दैता हुआ हूँ जो तीनों लोकों का मार लेकर, तुम्हारे ये रथ एक गज ही सरकता है। इसलिये तुम्हारा रथ रुका हुआ है अर्जुन। नहीं तो तुम्हारा रथ कब का घस्त हो गया होता। तुम कुछ नहीं कर रहे हो, लड़ तो मैं रहा हूँ, तीर तो मैं बला रहा हूँ, तुम तो निश्चित नात्र हो।"

मैं भी तुम्हें यही कह रहा हूँ कि तुम्हें केवल नजदीक जाना है। तुम्हें केवल शिष्य बनना है, तुम्हें केवल उपनिषद बनना है, तुम्हें देव बनना है, तुम्हारे प्राणों की घड़कन और मेरे प्राणों की घड़कन एक बननी है। बस और कुछ नहीं करना है, तुम्हें कोई साधन नहीं करनी है, तुम्हें कोई माला-मंत्र जाप नहीं करना है, तुम्हें कोई येरना नहीं करनी, तुम्हें कोई आरती नहीं उतारनी है, कुछ करने की जरूरत नहीं है, तुम केवल नाचों-गाओं और मुस्कुराओ। तुम्हारी सारी विनाश, सारा बोझ मैं लेने के लिये तैयार हूँ, मैं ले रहा हूँ। अगर तुम्हें मुश्कुराना है।

मैंने तुम्हें आवाज देकर बुलाया है, थीढ़ को इकट्ठा नहीं किया है, पत्रिका में लिखकर बुलाया है, बयोंकि मैं जानता था कि तुम्हारे ये जीवन के क्षण फिर उसी तरह व्यतीत हो जायेंगे। लेकिन मैं तुम्हें बुला रहा हूँ क्योंकि मैं तुम्हें यह आनन्द देना चाहता हूँ, जो बुद्ध ने लिया, जो विश्वास्त्र और विश्वामित्र ने लिया। मैं ऋषियों और मुनियों के जीवन को और उनकी आत्माओं को वापस यहाँ बदारना चाहता हूँ। मैं वापस पृथ्वी पर वह युग लाना चाहता हूँ, तुम्हारे माध्यम से। तुम्हें प्राणरबेतना देकर दुनिया को बता देना चाहता हूँ कि मैं इन सारे लोगों को भूर्य बनाकर दिखा राकता हूँ। और मैं दिखा दूगा।

बयोंकि मैं गुरु गुरु नहीं हूँ, मैं शशान में जाने वाला भी गुरु नहीं हूँ, मैं इस प्रकार से हातोत्साहित और निराश होने वाला भी गुरु नहीं हूँ। ऐसा गुरु बनने की मुझे जरूरत नहीं है। न गुज़े बुगरों कुछ लेना है, न तुमसे कुछ आकांक्षा है, बयोंकि तुम गुज़े कुछ दे ही नहीं सकते, बयोंकि तुम्हारे पास कुछ ही नहीं। तुम्हारे पास केवल शरीर है, उसकी गुज़े जरूरत ही नहीं। वह शरीर तुम्हारी पत्नी के पास बंदा हुआ है, बेटों के पास बंदा हुआ है, भाईयों के पास बंदा हुआ है। तुम उसे बाट कर रखो, ये सब तुम्हारी देह से सम्बन्ध रखते हैं। जब तक तुम्हारी देह है तब तक तुम्हारी पत्नी है। और ज्योंहि तुम्हारी देह जाना हुआ है, वह लिख देगी - दिवंशत पतिदेव।

कोई पूछेगा कि तुम्हारा उनके सम्बन्ध का क्या हुआ?

- तो कहेगी, सम्बन्ध था!

तुम्हारा पति कहा है? तो कहेगी - पति थे!

वह 'है' से सीधे 'थे' हो जाता है। 'है' से 'थे' इसलिये हो

जाता है कि तुम्हारा उनका सम्बन्ध कोवल देह का है। एक क्षण में 'है' और एक क्षण में 'थे' बन जाये। और मैं तुम्हें कह रहा हूँ कि मेरा और तुम्हारा सम्बन्ध में 'है' और 'थे' का खेद नहीं है। अगर मैंने आज से पर्वीस जन्म पहले भी तुम्हें आवाज देकर गले से लगाया है तो वह सब वैसा ही आज भी 'है' और आज से पर्वीस साल बाद भी वैसा ही रहेगा। और अगर साथ छुड़ा लिया तो किर अगले जन्म में किर हाथ पकड़ गा, और कोई रास्ता है ही नहीं, अगर मैं ऐसा क्षण लाना चाहता नहीं हूँ।

मैं तुम्हें गणित सिखाने के लिये यहाँ नहीं आया हूँ कि यहाँ ऐसा करना है, और तुम सोचने लगो कि गुरुजी ने ऐसा कह दिया है, वैसे करना होया, अब क्या होया। मैं कह रहा हूँ कि तुमने सोच-विचार में बहुत समय व्यतीत कर दिया। तुमने मानसरोवर में दुबकी लगाई ही नहीं और अगर मानसरोवर में दुबकी लगाई ही नहीं तो इस बन भी नहीं सकते। कोई बन सकते हो, पर्वी में वह ताकत नहीं आ सकती, क्योंकि तुम्हारे पर्व युद्ध हो चुके हैं। उड़ने की समता भूल गये। तुम जल्द विशेष गोत्र के हो, पर्व एवं हजार साल पहले, वह दीरे-धीरे खून बहता-बहता गया, अब उस खून में वह ताकत नहीं है। ताकत इसलिये नहीं रही, कि पांच हजार साल पहले, वह दीरे-धीरे खून बहता-बहता गया, अब उस खून में वह ताकत नहीं है। ताकत इसलिये नहीं रही, कि वे तो उड़ना जानते थे, उन्होंने तो आकाश को नापा, उन्होंने पूरी पृथ्वी को देखा, पूरे ब्रह्माण्ड को देखा, भारद्वाज ने देखा, पर तुम उनकी लगान होते हुए भी मानसरोवर में दुबकी लगाना भूल गये हो।

भूल इसलिये गये हो, क्योंकि पिछले पर्वीस-तीस जन्मों से तुमने दुबकी लगाने की किया ही भूली थी है। किनारे पर सबे रहे। और किनारे पर खड़े रहने वाला हैं जैसे नहीं बन सकता। वह केवल कौआ बन सकता है, वह केवल थोड़ा है। और किनारे पर खड़े रहने वाला है, किर समाप्त हो गया। उसको हंस नहीं बना सकते, और मैं तुम्हें हंस बनाने के सा चला किर बैठ गया थोड़ा जो चला, किर समाप्त हो गया। उसको हंस नहीं बना सकते, और मैं तुम्हें हंस बनाने के सा चला किर बैठ गया। वहोंकि तुम हंस हो, तुम अपनी जापी भूल गये हो। मैं तुम्हें याद दिलाना रहा हूँ कि तुम भारद्वाज लिये यहा छुटा हूँ। वहोंकि तुम हंस हो, तुम अपनी जापी भूल गये हो। मैं तुम्हें याद दिलाना रहा हूँ कि तुम भारद्वाज लिये यहा छुटा हूँ। वहोंकि तुम हंस हो, तुम अपनी जापी भूल गये हो। मैं तुम्हें याद दिलाना रहा हूँ कि तुम भारद्वाज लिये यहा छुटा हूँ। वहोंकि तुम हंस हो, तुम अपने पूर्वजों को भूला चुके हो। मैं उस रटेज को बापस लाना चाहता हूँ, है। पाप तुम भूला चुके हो अपने को, तुम अपने पूर्वजों को भूला चुके हो। मैं उस रटेज को बापस लाना चाहता हूँ, है। मैं तुम्हें याद दिलाना चाहता हूँ कि तुम हंस हो और तुम्हें मेरे साथ मैं तुम्हें अपनी जापी सहित परिवित कराना चाहता हूँ। मैं तुम्हें याद दिलाना चाहता हूँ कि तुम हंस हो और तुम्हें मेरे साथ मैं तुम्हें अपनी जापी सहित समझ लगानी है। और मैं तुम्हें मानसरोवर में दुबकी लगाना चाहता हूँ, उस आनन्द को देना चाहता हूँ, उस भूली मानसरोवर में दुबकी लगानी है। और जीवन में भूल तुम्हारे पास आ जानी नहीं सकती। और अगर तुम्हें भूल आ जाये, किर तुम्हारे अन्दर कोई कमी नहीं है।

मगर न तो तुमने भूली कभी पहिचानने की कोशिश की और न कभी परिचय दिया, न भूले परिचय देने की जरूरत है। न तुम भूली पहिचान सकते हो, तुम्हारी आखों में वह ताकत, वह जगता है ही नहीं। तुम भूले एक सामान्य मनुष्य देने की जरूरत है। न तुम भूली पहिचान सकते हो, तुम्हारी आखों में वह ताकत, वह जगता है ही नहीं। तुम भूले एक सामान्य मनुष्य देने की जरूरत है। तुमने समझ लिया है कि धोती कृता पहने हुए एक व्यक्ति है जो बिल्कुल गेरी तरह ही हंसता है, युस्कुराता है, समझ कर बैठ गये हो। तुमने समझ लिया है कि धोती कृता पहने हुए एक व्यक्ति है जो बिल्कुल गेरी तरह ही हंसता है, युस्कुराता है, धोती लगता है, रोता है, तेरी तरह पत्ती है, बाल बध्ये हैं, वह भी अपनी लदकियों की शादी करता है, धन कमाता है और बैठा हुआ है, भीलता है, रोता है, तेरी तरह पत्ती है, बाल बध्ये हैं, वह भी अपनी लदकियों की शादी करता है, धन कमाता है और बैठा हुआ है। तुमने ऐसा ही समझा। भीष्म, कर्ण, युधिष्ठिर, धूनराज्य, दुर्योधन और अर्जुन भी वैसा ही समझ रहे थे कृष्ण को। अर्जुन ने कृष्ण के से पूछा - "कि मैं उदास होता हूँ तो आप उदास क्यों हो रहे हैं? आपने भूली पिराट रूप दिखाया है, और गीता में कहा है कि मैं खूब नहीं हो, भीष्म कूप नहीं है, भीष्म को तो मैंने भारा है, इस दुर्योधन को मैं भार रहा हूँ, दोषाधार्यों को मैं भार रहा हूँ, तुम तो निपित बन रहे हो। तुम कूप कर नहीं सकते, तुम मैं ताकत नहीं हो। और जब ऐसा है तो मैं पूछता हूँ कृष्ण कि आप किर उदास होते हो रहे हैं? किर आज भी गेरी तरह परेशान क्यों हो रहे हैं?"

कृष्ण ने कहा - "मैं इसलिये उदास हूँ कि मैं तुम्हारे बीच में रहना चाहता हूँ। अगर मैं बिल्कुल अलग हो गया, तो तुम भूली बात सुन राकोगे नहीं। मैं तुम्हारे रथ पर बैठा हूँ, इसलिये तुम मेरी बात सुन रहे हो। इसलिये मैं तुम्हारे साथ उदास भी हो रहा हूँ। मैं तुम्हारे साथ उदास होता ही रहा हूँ। मैं तुम्हारे साथ उदास भी हो रहा हूँ कि तुम मेरी बात समझ सको।"

कृष्ण को अपमान भी निला, गालियां भी निली, शायद जितना अपमान कृष्ण को निला, उतना तो सासार में किसी व्यक्ति को निला ही नहीं। इतना निलने के बाद भी वह अपने आप में मुस्कुराता रहा। किर भी बैठत्य बना रहा। हजारों डार्जों गोपियों से उसने प्रेम किया, उसके बाद भी वह बोगे शबर बना रहा। कृष्ण बन्दे जगद्गुरु! - उसको जगता का गुरु कहा गया। इसलिये कि वह अपने आप में जीवित जाग्रत व्यक्तित्व था। महाभारत मुद्द हुआ तो कृष्ण ने कहा - 'अर्जुन! तू जीतोगा, क्योंकि मैं तेरे साथ हूँ तो तू हार नहीं सकता!'

और मैं भी कह रहा हूँ कि जीवन के इस महाभारत मुद्द में तुम हार नहीं सकते, मैं तुम्हारे साथ मैं हूँ। तुम जीवन जीना भूल गये हो, मैं तुम्हें प्रत्येक क्षण याद दिला रहा हूँ कि तुम्हें युस्कुराता है। तुम्हें इस बात की जिन्हा नहीं करी है कि क्या होगा। वह तो अब मेरे हाथ में है। वहा हो गया, वह तुमने कर दिया, वह तुम करके आये हो, बध्ये पैदा करने थे वो कर दिये वहा होगा, वह तो अब मेरे हाथ में है।

- बहु हुए, छोटे हुए, बुरे हुए, सापुत्र हुए, पत्नी जैसी गिल गई - वह सब तुम कर पुके हो।

बहु हो गया होगा, वह जिम्मेदारी मेरी है। वहमान में तुम्हें बहा करना है, तो मैं तुम्हें इतना ही कह रहा हूँ कि तुम्हें कृष्ण

हुए, हर काल आनन्दगमन होते हुए। यह मन होने की किया ही प्राणों ने क्या जाने की किया है। एक तरफ व्यडे होने से प्राणों ने नहीं बचाया जा सकता। इसके लिये तुम्हें प्रसन्न होना चाहे गा, खिलाफ़ पढ़ेगा। जब गुलाब खिलता है तो अपने आप सुखन्य फैल जाती है, अबर गुलाब यहाँ से पवीस गज दूर खिला है, तो सुखन्य करने जाप फैल जायेगा। उसके लिये गुलाब को पास लाने की जरूरत नहीं है। और अगर तुम मेरे प्राणों में सभा जाना चाहते हो तो तुम्हें कुछ करने की जरूरत नहीं है। माला या मंत्र जाप करने से कुछ नहीं हो पायेगा। वह मैं अपने आप कर लूँगा, ज्योंकि मैंने दुर्करण डाय पकड़ा है तो मैं रामझटा हूँ कि मुझे श्वा करना है।

मैं तुम्हें डराना ही कह रहा हूँ, कि तुम्हें मुस्कुराना है, हर काल तुम्हें खिलान्दूल रहना है। हर काल तुम ऐसा समझ लो कि मेरे दरबन ने है, हर धड़कन में मेरे पास गें है, एक एक आसू की बूद भे ने भास है, मेरी बेतना में, मेरी धड़कन में, मेरे प्राणों में हैं। ज्योंकि मैं तुम्हें अन्दर उत्तारने की किया समझाना चाहता हूँ। मैं तुम्हें प्राणगत जड़स्था में ले जाना चाहता हूँ, ज्योंकि जब तुम प्राणगत अवस्था में हो गे तो तुम देख सकोगे अपने आपको, अपने पिछले जीवन को, उससे पिछले जीवन को भी, तुम देख सकोगे कि पिछले जीवन में मैं तुम्हारे साथ कहा था, वह तुम स्कूल देख सकोगे। मैं तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि तुम देख सकते हो। तुम्हारी इसी आखों में वह ताकत है। तुम्हारे प्राणों में जो ताकत है, तुम बेतनायुक्त हो, ज्योंकि तुम मेरे शिष्य हो, इसलिये तुम देख सकते हो।

और यदि तुम मेरे शिष्य दुए भी अपने मन से, अपने वृन्दन से, अपने प्राणों से, अपनी चेतना से और उसके बाद भी मैं तुम्हें एकदम से हीरा नहीं बना सका, तुम्हें स्पर्ण भी नहीं बना सका, तो तुम्हारा कोई दोष है ही नहीं। तुम्हारी आवश्यकता यह है कि अगर तुम लोहा ही भी तो तुम वस पारस के पास पहुँच सको। पारस राक पहुँचने की यात्रा तुम्हें करनी चाहेगी। पारस अपनी जगह है, समुद्र तक पहुँचने की यात्रा तुम्हें करनी होगी। तुम्हें अपने पांवों से गानसरोवर तक पहुँचना है। जिर मैं तुम्हारा इष्ट पकड़ कर अन्दर कूद जाकरा, तुम्हें छिलकिलानों की ज़रूरत नहीं है। तुम्हें कुछ गीचों की ज़रूरत नहीं है। तुम्हें जो कुछ भी किया हो - अच्छा या बुरा। फ़िर तुम अन्दर चारमुद्र में कट लोगे तो मैं तुम्हारे साथ मैं हूँ, इसले तुम्हें जहाँ चुका। यीव में अपरे लही छेष्ठा, मदायाम में तुम्हारा हाथ जहाँ छेष्ठा। मदायाम में तुम्हें अलग नहीं होने द्वारा। हर दोपा, हर पल, हर वड़कन में मैं तुम्हारे पास हूँ, ज्योंकि मैं तुम्हारा जुरु हूँ और तुम कैपल और कैयल में हो।

इसीलिये अमृत का लातपर्य है जीवित होना, तुम यहाँ आये हो गुर्दा होकर, तुम्हारे बेहरे पर खिलखिलाहट है नहीं क्योंकि गूल बुक ही तुम। गुर्दा व्यक्ति गुर्दा को ही पैदा कर सकता है। पैदा तो करता है, जीव तो बालता है, उसको मुस्कुराहट नहीं दे सकता। क्योंकि तुम्हने पैदा किया तो रोते हुए पैदा किया, हसते हुए पैदा नहीं कर सकते। हंसते हुए पैदा करना जीवन की एक चेतना है। इसलिये गुरु वापस जन्म देता है, तो 'द्विज' कहा जाता है। 'जन्मना जायने शुद्ध, रासकारात् द्विज उच्यते' - गुरु वापस दूसरी बार जन्म देता है, मैं तुम्हें वापस दूसरी बार जन्म दे रहा हूँ। क्योंकि तुम यहाँ हुए पैदा हुए हो, मैं तुम्हें मुस्कराने की कला शिखा रहा हूँ, इसना-खिलखिलाना शिखा रक्षा हूँ, हर काल यापन होने की कला शिखा रहा हूँ।

जब यहाँ गायन हो तो तुम नृथ कर सको, शूम सको, गरती में खिलक सको, तुम्हें कोई 'भूर्भुयः रथः लत्यविन्दुर वर्णयम्' करने की ज़रूरत नहीं है, वह मैं अपने आप कर लूँगा। तुम्हारे जितने भी मंत्र जाप हैं, जो मैं करूँगा, तुम्हारी जो साधनायें हैं जो मैं करूँगा। तुम्हारी खिलाए, तुम्हारी बाधाए, तुम्हारे दुःख, तुम्हारी परेशानी वह सब मैं अपने ऊपर छेलूँगा, तुम्हें गुरु कहोना है, मेरे प्राणों के साथ रहना है हर काल। और हर धड़कन के साथ, हर खिलान के साथ मुझमें सभा जाना है।

और अवश्य ही मैंने जो वामदा तुमसे किया है, उसे वाष्पद को मैं पूरी तरह निमालगा। तुम्हें उस जगह पहुँचाकर्णा जिससे कि प्रत्येक काण तुम्हारा आनन्दगमन हो सके, उत्सर्वगमय हो सके, मैं तुम्हें ऐसा ही आशीर्वाद देता हूँ, कल्याण करना करता हूँ।

- तुम्हारा नदियुक्तदेव

नि
र

अपनों से अपनी बातें

नि

खिल जयती विशेषांक के रूप में प्रस्तुत है आप के समझ अप्रैल माह का यह अंक।

प्रति वर्ष इसी माह की २१ तारीख को प्रसंग उपस्थित होता है उन पूज्यपाद गुरुसदेव परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी के अवतरण दिवस का जिनके विषय में कभी सिद्धांश्म के अद्वितीय योगी परमहंस विश्वानन्द जी ने अत्यंत माध्यमिक शब्दों में कहा था - यदि एक वाक्य में निखिल जी के विशेष व्यक्तित्व को बांधना हो तो मैं वस इतना ही कह सकूँगा - उनके सारे शरीर में सिर से पांव तक केवल इद्य ही इद्य है।

स्वामी विश्वानन्द जी के ये शब्द कहीं से भी अतिशयोत्तिपूर्ण नहीं हैं और न इस बात की सत्यता में कहीं से भी संशय के लिए कोई स्थगृहन है।

यह गुरुसदेव का अपने शिष्यों से प्रेम का ही कोई नाम बाना था जिसके वशोभूत होकर उन्होंने इस जगत में ३०० नारायणदत्त श्रीमाली जी के रूप में अवतरण लिया और जिस मूल संदेश को वे इस जगत में छोड़ कर गए हैं, वह भी वस एक वाक्य में है - तुम प्रेमय बनो, प्रेमसित बनो सम्पूर्ण अर्थों में प्रेम ही बन जाओ, यही तो बहा से साकालकार है।

गुरु को नि-स्वार्थ प्रेम के अतिरिक्त किसी अन्य उपाय से समाहित नहीं किया जा सकता है लेकिन इस प्रेम का अर्थ गुरु की ही भक्ति प्रारम्भ कर देना नहीं है। यह भी पूज्यपाद गुरुसदेव ने बताया और आकेठ भक्ति में इन समाज के सम्मन भक्ति के स्थान पर साधना जैसी विद्रोह से भरी धारणा को रखना - किनना कठिन कार्य था यह। समाज तो अपनी धारणाओं के अनुकूल ही कुछ सुनना चाहता है क्योंकि उसमें अहं की तुच्छि जो होती है लेकिन कुछ ऐसे भी व्यक्तित्व होते हैं जो वही करते हैं जिसे करने के लिए वे आते हैं इस जगत में। न कोई उन्हें कुछ सकता है और न कोई उन्हें उनके पथ से डिगा सकता है।

ऐसे ही व्यक्तियों को कालोत्तर में समाज युग-पुरुष कहता है, उनके जान और उनकी चेतना के प्रति प्रणाल्य होता है किंतु प्रणाल्य होने के साथ-साथ यदि इस बात को भी ध्यान में रखा जाए कि क्या वेदना सहनी पढ़ी होगी उन्हें तो भविष्य के प्रति एक दृष्टि भी बनी रहती है।

जो जमीन ऊपर पढ़ी हो उसमें से तपती धूप में एक-एक नुकीले पत्थर को चुनकर निकालने में जो बेदना होती है उसे वही समझ सकता है जो कभी ऐसे क्रम से होकर आया हो लेकिन जिन्हें समाज युग-पुरुष की संज्ञा देता है वे वर्तमान की पीड़ाओं न देखकर एक स्वप्न देलते हैं।

उनकी दृष्टि में ऊपर जमीन के स्थान पर एक पुष्टिन और घलघिन उपर्यन शिलापिला रड़ा होता है जिसमें खिले होते हैं गुलाब के सहजे पुष्प। अपनी सुगंध और बहुरंगी छटा को बिखेरते हुए ...

वे अपने जीवन में जितने भी सूजन के क्षण मिलते हैं उनमें ऐसा ही कुछ करके नहीं है और यह तो समाज के ऊपर है कि वह उन्हें बितना अवकाश देता है।

सदगुरुसदेव ने एक बार कहा था - मैंने बहुत परिश्रम किया है तपते हुए रेगिस्ट्रेशन में गुलाब की सुगंध को बिखेर देने के लिए।

और जिस अनकहीं बात को वे एक दायित्व के रूप में हम सभी शिष्यों के लिए शेष छोड़ गए हैं वह यह है कि उन गुलाब के पौधों को निरंतर जल देकर मुरझाने से बचाए रखा जाए उनकी शाइ-झंखाड़ से सुरक्षा की जाती रहे नहीं तो पूज्यपाद का स्वन अधूरा रह जाएगा और अभी बहुत कुछ करना शेष है।

ऐसा कुछ दृढ़ संकल्प के साथ करना उस अद्वितीय गुरु की जयंती को वास्तविक रूप में सम्पन्न करना होगा जिस गुरु ने प्रत्येक विसंगति पर पूरी क्षमता से प्रहार करने की बात कही है अपने शिष्यों से।

साधना और गुरु-चेतना के गुलाबों को बचाना है तो क्षमता उत्पन्न करनी होगी भक्ति व दृश्य रूपी शाइ-झंखाड़ों से उलझा कर उन्हें नष्ट करने की और शाइ-झंखाड़ों से उलझने में हथेलियों पर कुछ खुराकों तो आंखी ही। अज इतना भी कुछ करना कम न होगा क्योंकि ...

माना कि इस जमीं को न गुलजार कर सके कुछ खार कम कर गए गुजरे जिधर से हम

(गुलजार, धरा-धरा, खार-कट)

आखिर सद्गुरु क्या हैं?

स्या

स्वयं करना तो शास्त्रकारों का कार्य रहा है। और जहां जहां भी गुरु शब्द का प्रयोग हुआ है, वहां तो हजारों पाँच रच दिये गये हैं। गुरु की इतनी अधिक, महिमा वर्णित की गई है कि गुरु और शिष्य के बीच में दूरी बढ़ती ही नहीं, जबकि गुरु का वास्तविक तात्पर्य है जो प्यार दे, अपने हाथों से अपशपाकर शिष्य को तैयार करे। जहां मन की दृष्टि हुई वहां शिष्य एकाकार नहीं हो सकता, आनन्द प्रलयेक शिष्य को यह जानना आवश्यक है कि उसके सदगुरु क्या हैं? उनका पूरा अर्थ क्या है? वे साकार हैं या निराकार? वे देवता हैं, भगवान् हैं या ब्रह्म हैं — इन्हीं प्रश्नों को उत्तरित करने का यह प्रयास है।

सद्गुरु के सम्बन्ध में प्रथम उत्तर यह है कि वे ही मेरे प्रिय सद्गुरुदेव हैं, जिनके माध्यम से मैं परमात्मा की शक्ति का बोध कर सका, उसे अपने भीनर उतार सका, उस विराट सत्ता का अंग बन सका, जिन्होंने जीवन भर योग अर्थात् मन को मनस से अर्थात् परमात्मा से नोडाना सिखाया। सद्गुरु तो वह शक्ति है, जिन्होंने जीवन के अन्धकार को समाप्त करते हुए अपने जान के माध्यम से जान चक्षुओं को जाग्रत किया और जब जान चक्षु जाग्रत हुए तब मैं पहिचान सका कि मैं कौन हूं, इस संसार में मैं क्यों आया हूं और मेरी किया का स्वरूप क्या रहेगा, वे ही तो मेरे सद्गुरुदेव निखिल हैं।

संसार में व्याप्त परम चेतना जो पूर्ण आनन्द देने वाली है, उस चेतना का एक स्पर्श मंत्र के माध्यम से, दीक्षा के माध्यम से अनुभव किया है, उस कथी न समाप्त होने वाली चेतना के समृद्ध सप्त ही तो मेरे सदगुरुदेव निखिल हैं।

ज्ञान शक्ति समारूढं तत्य माला विभूषितं । भुक्ति भुक्ति प्रदातारं तस्मे श्री युश्वे नमः ॥

मेरे सद्गुरुदेव निखिल तो वह है, जो जान और शक्ति में स्थित है और उन्होंने कोई मनकों की माला नहीं धारण की है। उन्होंने तो जीवन तत्व और सिद्धान्तों की माला धारण की है, जिनके द्वारा मुझे संसार में 'भूक्ति' अर्थात् इस जीवन को किस प्रकार से भोगना है, किस प्रकार से मुझे धौतिकता का वरण करना है, इसका जान दुआ और इसके साथ यह भी जान दुआ कि जीवन में हर बन्धन से 'मुक्ति' किस प्रकार सम्प्रव है। दोनों ही स्थितियों को उन्होंने प्रदान किया, वे ही जो गेरे सद्गुरुदेव निखिल हैं।

वेतनं शाश्वतं शाश्वतं व्योमातीतं तिरंजलं । विद्वनाऽक्षातीतं तस्मे श्रीजर्वे लभः ॥

मेरे सदगुरदेव निखिल तो वह शक्ति है जो मुझे निरन्तर शास्त्रवत् स्वरूप से येतना देते रहते हैं, जो अपने शान्त स्वरूप के अनुरूप शान्ति प्रदान करते हैं। जो आकाश से धी परे हैं अर्थात् किसी नोक में स्थित न होकर के अपने शिष्य के हृदय में स्थित हैं, जिन्हें किसी बिन्दु द्वारा, किसी कला द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता व्योंकि उभका स्वरूप तो शिष्य के तेज में व्याप्त है। ऐसे ही प्रिय सदगुरदेव मेरे निखिल हैं।

जो परम तत्व को बोध करने वाले हैं, जिनके जीवन में आने से अनधिकार, आर्त, विषाद समाप्त हो जाते हैं और मन में परम तत्व का परमानन्द समा जाता है और जो हर समय यही कहते हैं -

੩੫ ਪੂਰਮਦ: ਪੂਰਮਿਤੁ ਪੂਰਨਾਤੁ ਪੂਰਮੁਡਵਤੇ। ਪੂਰਸਚੁ ਪੂਰਮਾਦਾਵੁ ਪੂਰੁ ਮੇਰਾਵ ਕਿਲਵਤੇ॥

अर्थात जो स्वयं तो पूर्ण है ही, अपने शिष्य को भी पूर्णता प्रदान करते हुए उसे भग्नपूर्ण अर्थात पूर्णतायुक्त व्यक्ति बनाते हैं, जो शिष्य रूपी श्रेष्ठ रचना का निर्माण करते हैं, वे ही तो मेरे प्रिय सदगुरु निखिल हैं, जिनके बारे में केवल और केवल इनमा ही कहा जा सकता है ॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव ब्रह्मशब्द सर्वतो त्वमेव । त्वमेव विद्या द्विषिणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं सम त्रेव त्रेव ॥४५॥

21.4.2000

या किसी भी २१ तारीख का।

गुरु प्राण धारण साधना



तः स्नानादि नित्य किया से नियूच होकर पूजा
स्थान में शुद्ध धोनी पहन कर आसन पर बैठें।
सामने चोकी पर इकेन या पीत वस्त्र बिछा कर
सुन्दर गुरु चित्र स्थापित करें। अपने सभी पक्षी साधना भास्यो—
सुन्दर गुरु चित्र स्थापन यंत्र, 'बेतना माला', 'रुद्राक्ष' एवं 'गुरु गुटिका'
तथा पूजन की अन्य सामग्री रखें। गुरु चित्र के सामने किसी
थली में कुंकुम से स्वस्तिक बनाकर उस पर 'गुरु स्थापन यंत्र'
को स्थापित करें। यंत्र के दाहिनी ओर गुटिका तथा बाई ओर
रुद्राक्ष को रख कर भूम्, दीप प्रज्ज्वलित करें। यहले पवित्रोंकरण
और आचमन करके दोनों हाथ जोड़ कर गुरु प्रार्थना करें।

प्रार्थना

ॐ सर्वे ग्रन्थानां ग्रन्थानां चैतन्यं वरदं गुरुम् ।
नारायणं नमस्कृत्य गुरुं पूजां समाचरेत् ॥
अपने सामने किसी पात्र में धोड़ा जल लेकर उसमें
कुंकुम, अक्षत, और पुष्प की पंखुडियां मिला लें, उसके बाद
उसमें सभी तीर्थों का आवाहन करें—
ॐ गंगे च यमुने वैष्ण गोदावरि सरस्वति ।
नमस्ते सिन्धु कावेरि जले उस्मिन् सत्तिर्धि कुरु ॥

भूतापसारण

बाएं हाथ में अक्षत लेकर दाएं हाथ से ढक दें तथा
निम्न मंत्र बोलते हुए सभी दिशाओं में अक्षत छिड़के—
अपसर्वन्तु ते भूता ये भूता भूवि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शियात्या ॥

इसके बाद 'सर्व विघ्नान् उत्सारय— हूं फट रुद्राक्ष'
का उच्चारण करते हुए दाएं पैर की पढ़ी से ३ बार धूमि पर
आधात करें। तत्पश्चात समस्त गुरुओं को दोनों हाथ जोड़कर
प्रणाम करें और आगे दिये प्रणाम मंत्रों का उच्चारण करें—

गुरु जब्द विवर पर समाझ की जाले वाली इस साधना के
महत्व के लारे में पत्रिका के मार्ये-२००० अंक में विवेदन
लिखा गया था, उसी साधना की पूजा विधि प्रस्तुत है।

अ 'अंगूल' 2000 मंत्र-तत्र-यंत्र विज्ञान '20' ल.

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः ।

ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः ।

ॐ ऐं परात्पर गुरुभ्यो नमः ।

ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः ।

गुरु पंक्ति को प्रणाम करने के बाद अपने हृदय में शुरु
तत्त्व को स्थापित करें—

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं यं शं षं सं हं हंसः श्री
निरिलेश्वरानन्द देवतायाः प्राणा इह प्राणाः ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं यं शं षं सं हं हंसः श्री
निरिलेश्वरानन्द देवतायाः जीव इह स्थितः ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं यं शं षं सं हं हंसः श्री
निरिलेश्वरानन्द देवतायाः सर्वनिदियाणि ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं यं शं षं सं हं हंसः श्री
निरिलेश्वरानन्द देवतायाः वाऽमनश्च चक्षु श्रोत्र जिहा
धाण प्राणा इहान्त्य सुखं विरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

अब अपने को गुरुन्त बेतना से सम्पन्न अनुभव करें।

मातृका व्यास (विनियोग)

दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें—

ॐ अस्य मातृका भंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री
छन्दः, मातृका सरस्वती देवता, ह्रीं दीजामि, रुवरा यत्तत्यः
अव्यतीं कीलकं सर्वाभीष्ट रिष्ट्ये मातृका व्यासे विनियोगः ।

इसके बाद निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए विभिन्न
अंगों को दाएं हाथ से स्पर्श करें—

ॐ छहणे ऋषये नमः:

ॐ गायत्रीछन्दसे नमः:

ॐ मातृका सरस्वत्यै देवतायै नमः:

ॐ हृष्ट्यो दीजेभ्यो नमः:

ॐ स्वरेष्यो शतिष्ठ्यो नमः:

ॐ अव्यतीं कीलकाय नमः:

— सिर

— हृदय

— मुख

— मूलाधार

— दोनों पैर

— सभी अंग

गुरुदेव का दोनों हाथ जोड़कर आवाहन करे—
आवाहयामि रकार्थं पूजार्थं च मम कुतोः।
इहानन्यं गृहाण तवं पूजां यागं च रक्षये॥
श्री गुरुदेवाय नमः आवाहनं समर्पयामि।

आसन

यंत्र व चित्र को पुष्प का आसन दे—

ॐ सर्वभूतान्तरस्याय सर्वभूतान्तरस्याये।
कल्पयाम्युपवेशार्थमासनं ते नमो नमः।
इदं पुष्पासनं समर्पयामि नमः।

पाठ्य

चित्र के समाझ दो आचमनी जल चढ़ावे—
यत् भक्तिलेश सम्पर्कात् परमानन्द सम्पलवः।
तस्मै ते परमेशान पापं शुच्याय कल्पये॥
इदं पापाय समर्पयामि नमः।

अद्य

दुर्बक्षत समाधुक्तं विलवं पत्रं तथा परम्।
गृहाणाच्चनीयं तवं मया भक्त्या निवेदितम्॥
अद्यं समर्पयामि नमः।

आचमन

मन्द्याकिन्यास्तु यदवारि सर्वं पापहरं शुभ्रम्।
गृहाणाच्चनीयं तवं मया भक्त्या निवेदितम्॥
आचमनीयं समर्पयामि नमः।

स्नान

इदं सुशीतलं वारि स्वच्छं शुद्धं मनोहरम्।
स्नानार्थं ते मया भक्त्या कल्पितं प्रतिगृहाताम्॥
स्नानं समर्पयामि नमः।

यंत्र के साथ कृताक्ष एवं गुरु गुटिका का भी उपरोक्त प्रकार से पूजन करते रहें, उन्हें भी स्नान, अध्यत, धूप आदि से पूजन करते रहें।

दृढ़त्र

मायाचित्रं पटाच्छत्रं निजगुडोपं तेजसे।
मम वृद्धा भक्ति वासं युम्यं गृहाताम्॥
वरनोपवरत्रं समर्पयामि नमः।

यदि साधन किसी कारणवशा इस साधना को २१ अप्रैल को प्रारम्भ नहीं कर पाएं, तो किसी भी माह की २१ तारीख को प्रारम्भ कर सकते हैं। ऐसा करने में कोई न्यूनता नहीं ब्यक्ति की साथकी के लिए प्रत्येक २१ तारीख नदगुरुदेव का जन्म दिवस ही है। यदि साधना सामग्री नहीं मंगा सके हैं, तो किन्हीं दो व्यक्तियों की परिचिका की सदस्यता आरण करता कर इस सामग्री को निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए आप अपने किन्हीं दो परिचितों के डाक पते को पोस्टकार्ड के दो पृष्ठ (पृष्ठ १४, अप्रैल अंक) पर लिख कर जोधपुर कार्यालय भेज कर उन्हें परिचिका का सदस्य बना दें। आपको ४३/- की बी.पी. डारा साधना सामग्री भेज दी जाएगी तथा आपकी ओर से आपके परिचितों को वर्ष पर्यन्त परिचिका भेजी जाती रहेगी।

तिळक

महावाक्योत्थं विज्ञानं गन्धार्घं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरक्षेष्ठं चन्दनं प्रतिगृहाताम्॥
चन्दनं समर्पयामि नमः।
संकुंकुमं अक्षतान् समर्पयामि नमः।
चन्दनं दर्पं अक्षतं चवाणं
पुष्पमाला

पुष्पमाला

तुरीयं चन्दनं सम्पत्रं नानाशृण मनोहरम्।
आनन्दं सौरभं पुष्पं गृहातामिवमुनम्॥
पुष्पमालां समर्पयामि नमः।

धूप, दीप

मैत्रेयं

शक्तं राधूतं संयुक्तं मधुरं स्वादुचोलयं।
उपहारं समायुक्तं नैवेचं प्रतिगृहाताम्॥
ऋतु फलानि समर्पयामि नमः।
शुद्ध जल से पान बार आचन्न करावें।
इसके बाद मुख शुद्धि के लिए पान समर्पित करें—
ताम्बूलं समर्पयामि नमः।

इसके बाद चैतन्य माला से निम्न मंत्र की एक माला जप सम्पन्न करें—

॥ उ॒ हौं हैं यशत्पशय यशमहंसाय निश्चिलेश्वराय
धीमहि रैं हौं उ॒ नमः ॥

Om Hreem Ayem Paraaparaay Parashmijahsay
Nikhileshwaraay Dhceemahi Ayem Hreem Om Namah

फिर गुरु आरनी सम्पन्न करके पुष्पांजलि समर्पित करें। यह ३ माह की साधना है, इसमें नित्य उपरोक्त मंत्र की एक माला जप करना अनिवार्य है, नित्य पूजन सम्पन्न करने की आवश्यकता नहीं है। उपरोक्त पूजन को हर माह की २१ तारीख को दुहरा लै तथा प्रसाद घर में सभी को दितरित करें। ३ माह बाद सभी सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

इस साधना द्वारा शनैः शनैः साधन के अन्दर गुरुदेव की समस्त शक्तियां स्वतः ही उतरने लगती हैं, जावश्यकता है तो धैर्य और संयम की।

वसन्त भावयेद् हृषि

(इदय में सात्त्विक मावों का उदय ही वसन्त कहा जाता है।)

जरा सिर उठा कर तो देखो!

वसंत फिर आ गया है

शिष्य का क्या है, जब गुरु की सुमधुर वाणी उसके कानों में गूँजी, जब उसके प्राणों को गुरु रूपी पुरवाई ने स्पर्श कर लिया, जब कहीं प्रेम की सुगंध फैली-तभी उसके लिए वसंत है और ऐसा वर्ष में बस एक बार नहीं बार-बार है . . .



यह बोल रही है।

वह देखो कोयल बोल रही है . . .

हाँ! यह तो मैं भी सुन रहा था कि

असमय कोयल की मीठी खोली से बन का वह उपखंड गुजरित हो रहा है किन्तु इसमें रोने की क्या बान हो सकती है, मैं यह समझने में स्थिर को असमर्थ या रहा था उधर स्वामी असंगानंद जी ये कि वे बस रोए जा रहे थे तो रोए ही चले जा रहे थे।

एक बयोवृद्ध संन्यासी को इस तरह से रोते देखना मेरे लिए किसी अचरण से कम नहीं था और वह भी स्वामी असंगानंद जी जैसे अख्यवड संन्यासी को जिन्हे पीठ पीछे अन्य संन्यासी स्वामी पंगानंद कह कर पुकारते थे क्योंकि शायद ही कोई दिन ऐसा जाता हो जिस दिन उनका किसी अन्य संन्यासी से विवाद न होता हो।

कुछ लोग उन्हें स्वामी पंगानंद भी कह कर बुलाते थे क्योंकि जहाँ कहीं भी कोई विवाद की स्थिति हो वहाँ वे बिन बुलाए पहुंच कर समाधान देने को प्रस्तुत हो जाते थे।

जीवन में आनन्द के क्षण सुनित करने की दो प्रमुख स्थितियां होती हैं हास्य एवं विनोद। हास्य का सूजन तो एक सामान्य व्यक्ति भी कर सकता है किन्तु विनोद का सूजन करना तो मानो बस संन्यासी ही जानते हैं और इस रूप में वे अपने जीवन को और भी अधिक आनन्द युक्त बनाने हुए गतिशील रहते हैं।

स्वामी असंगानंद जी भी इसके अपवाह नहीं थे किन्तु उस दिन तो वे कोई विनोद करने नहीं लग रहे थे, न कहीं से उनकी भाव-धनिमाओं से भी ऐसा लग रहा था। उनकी अर्धश्वेत जटा खुल कर बिश्वर शर्यो थी और अमृतों का प्रवाह

उनकी घनी श्वेत-श्याम जटा के मध्य में यूं लुक़ करहा था मानों अधी-अधी अलकनंदा ने अपने उद्गम से प्रवाह लिया है और वह उबड़-खबड़ चट्ठानों के मध्य से अपना मार्ग पाने के लिए छटपटा रही है।

भारी कद-काठी के असंगानंद जी के एकाएक बैठ जाने से भूमि का एक माग धसक सा गया था और उनकी आंखें शून्य में स्थिर हो गयी थीं। रुदन तो उनका स्क चुका था किन्तु जैसे कोई बालक जिद में आ जाने पर रोते-रोते फिर अंत में हिचकी भरते हुए सुब ही चुप हो जाता है, वही उनकी भी स्थिति हो रही थी। मैंने उनका यह रूप पहले कभी नहीं देखा था अतः स्वामानिक था कि मैं भी गंभीर हो जाता।

दोनों के गंभीर हो जाने से बातावरण में कुछ बोझिलता सी व्याप्त हो गयी थी जिसे स्वयं स्वामी जी ने तोड़ते हुए पूछा— क्या बात हो गयी है?

मैं तो मानो इसी क्षण की प्रतीक्षा में था और प्रत्युत्तर में मैंने भी पूछ लिया— वही तो मैं आप से जानना चाहता हूँ।

स्वामी जी तब तक प्रकृतिस्थ हो चुके थे और स्वर को संयत करके बोले— ऐसा ही होता है, गुरु का आना और जाना दोनों ही रुला जाता है।

मैंने सहज भाव से पूछा— क्या गुरु जी आए हैं? कहाँ रुके हैं? कब तक रहेंगे? मैं भी उनसे मिलना चाहता हूँ।

मेरा प्रश्न करना या कि वे अपने पूर्ववत् रूप में विफल पड़े— सुना नहीं तुने कोयल बोल रही थी।

तो क्या उस कोयल के रूप में गुरुजी थे?

मेरा यह प्रश्न करना और प्रत्युत्तर के रूप में स्वामी जी का वण्ड केक कर मुझ पर प्रहार करना-दोनों बातें एक ही

लाल छटित हुई। येरा संन्यास जीवन में इन बातों का कोई विशेष कुरा नहीं मतला जाता किन्तु मेरी विज्ञाना तो अधूरी रह गयी थी।

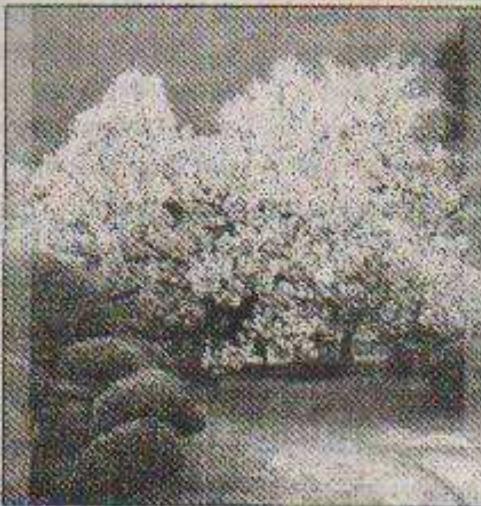
कैसा बज मूर्ख भेजा है नुस्खावी तुमने मेरे पास! कहता है कि नुस्खारे पास रहा है और मुझसे पूछ रहा है कि क्या गुरुजी को यत्न बन कर आए थे? इसे इतना भी नहीं पता कि जब आप पधारते हैं तो सारी प्रकृति में बस बसत साधा जाता है, कोई समझ या न समझ कोयल तो कुछ समझ कर कुकने लग जाती है, और! इनसे अच्छे तो ये पशु-पक्षी तब्दे, बात करते हैं... न जाने कहाँ कहाँ से आ जाते हैं...

वे मुझे कुछ सुनाना चाह रहे थे या कि गुरु जी को, वह स्पष्ट तो नहीं हो पा रहा था लेकिन कुछ-कुछ समझ में जाता सा लग रहा था। कभी पूज्यपाद गुरुदेव ने उपने किसी विष्णु से कहा था कि गुरु का आशीर्वाद तो फलदायक होता ही है, उसका आप भी फलदायक बन जाता है। स्वामी जी को दंड फेंक कर मारने का कुछ जोश हो रहा था उत, वे सहज ही मुझसे बातानाप करने की चेष्टा करने लग गए।

मैं कुछ दिन स्थान परिवर्तन करने एवं बहता पानी निरमला के वृष्टिकोण से पूज्यपाद गुरुदेव से अनुमति लेकर उत्तराखण्ड की उस पावन भूमि पर चला गया था जो सदा से मुझे अतिशय प्रिय रही है।

जाते समय गुरुदेव ने मुझे उपने एक संन्यासी विष्णु का पता देकर कहा था कि उसी के सान्निध्य में स्वना और इस तरह से मैं स्वामी असंगानंद जी के सान्निध्य में पहुंचा था। इस मध्य में न तो गुरुदेव ने मुझे किसी साधना को सम्पन्न करने का निर्देश दिया था और न मैंने ही किसी साधना को सम्पन्न करने का मानस निर्मित किया था क्योंकि प्रकृति के सान्निध्य में रहना स्वयं में किती साधना से कम नहीं होता, वह मेरा दृढ़ विश्वास रहा है।

संन्यास जीवन में और कोई विशेषता ही या न हो एक बात तो मुझे बहुत अधिक सुखद प्रतीत हुई है कि उस जीवन में न तो किसी प्रवचना के लिए स्थान होता है और न ही उस समाज की भाँति किसी झूठी औपचारिकता की। जो होता है वह दो दूक होता है और स्पष्ट होता है। स्वामी जी भी



इसी भाव में जो कुछ कहने लग गए थे प्रकटते, उसमें कोई संवर्पन नहीं था किन्तु मेरे लिए तो वह संवर्पयुक्त था।

... गंगा के किनारे बैठ कर गंगा का महत्व समझ में नहीं आता-गुरुजी सही कहते हैं। नहीं तो इतनी विराट सत्ता के सहचर्य में रह कर इतनी पूर्वतापूर्ण बात कैसे कोई कर सकता था?

योगी और विशेषकर संन्यासी जिस शैली में बात करते हैं वह एक प्रकार से आत्मालाप की शैली होती है अर्थात कहने वाले को यह बोध ही नहीं होता कि वह क्या कह रहा है, क्यों कह रहा है।

—उसे कोई सुन रहा है या नहीं सुन रहा है-वह इसकी चिंता से भी मुक्त होता है, इन बातों का मुझे जान था और मैं यह भी जानता था कि ऐसे क्षणों में जो कुछ भी प्राप्त होता है वह बास्तव में उसी गुरु द्वारा निःसृत ज्ञान का अमृत बिंदु होता है जिसे सहस्र पादार्थि शिरोरुबाह्ये अर्थात् सहस्र पैरों व सहस्र बाहुओं वाला कह कर प्राप्त किया जाता है।

—उन्हे उन्हें एक सामान्य सा गुरु या अधिक से अधिक एक प्रकांड ज्योतिरी और तंत्र-मंत्र वेत्ता भर ही समझ रखा है-मुझे तो ऐसा ही लग रहा है। और! वह तो अखिल रूप में व्याप्त होता हुआ भी निखिल है और परम प्रसन्न भी है तभी तो उसे कहते हैं हम-परमहंस स्वामी निखिलेश्वराननद।

—अतिम बाक्य को नाटकाय रूप में कहते-कहते और एक धप्पा मेरी पीठ पर मारते हुए स्वामी जी ठठा कर दंस पड़े और सारा बातावरण भी एकाएक खिलखिला सा गया। संन्यासियों के जीवन या मानस में कोई और तो दूसरा होता नहीं इसी से उनका हास्य-विनोद, क्रोध, प्रेम-सब कुछ आधरित होता है अपने गुरु पर और स्वामी जी भी इसका अपवाह नहीं थे।

बातावरण स्निग्धता और आत्मीयता से परिपूर्ण हो गया था और यही अवसर था कि मैं अपने मन में तन्त्राल उठे प्रश्न का समाधान स्वामी जी से प्राप्त कर लूँ। कोयल बोलने का नात्पर्य तो मैं गमध गया था कि अवश्य ही कुछ क्षणों पूर्व पूज्यपाद गुरुदेव मृदग रूप में उपस्थित हुए थे किन्तु यह अखिल और निखिल शब्द का मेद?

सचमुच मैंने तो कपी इस दृष्टिकोण से पूज्यपाद के नाम पर विचार किया ही नहीं था और सहज सी धारणा रखता कि उनके इस नाम के पीछे जो तात्पर्य है वह मात्र इतना ही है कि वे समस्त सचाचर प्रकृति को स्वयं में समाहित करते हुए गतिशील हो रहे द्वारे पूज्य और प्रिय गुरुदेव हैं।

जीवन को कोई भी कला क्यों न हो, प्रत्येक की अधिक्षिति उनके द्वारा इस रूप में सम्बद्ध होती थी कि लगने लगता था—वे बस इसी कला में पूर्ण रूप से निराजन हैं किन्तु अगले ही पल वे किसी अन्य भाव में आरूढ़ होते हुए इस प्रकार समझ आते थे कि उनका पूर्ण रूप विस्मृत हो जाता था और लगता था कि जो कुछ अभी कुछ क्षण पहले देखा वह एक स्वप्न था। इसी से तो आज तक उनके साथ व्यतीत हुए एक-एक पल किसी स्वनिल जगत में व्यतीत हुआ पल लगते हैं जिनकी स्मृतियाँ इस जगत की विसंगतियों में चित्र को ओर भी अधिक दग्ध कर जाती हैं।

मैं स्मृतियों में लोन हो रहा था कि सहसा अल्पकलनदा में निरी किसी भारी चट्ठान की घट्टनि ने मुझे सचेत कर दिया और मैं पुनः सचेत होकर सोचने लग गया कि अवश्य ही कोई गृह भेद है गुरुदेव के इस विशेषण के पीछे क्योंकि संन्यस्त जीवन में शिष्य को जो नाम अपने गुरु से प्राप्त होता है वह मात्र नाम न होकर एक विशेषण ही तो होता है।

मैं इस गहन विवेचन में खो गया कि पर्याप्त पूज्यपाद गुरुदेव को ऐसा विशेषण उन्हें अपने गुरुदेव परमहंस स्वामी सचिवालानन्द जी द्वारा प्राप्त हुआ है तो अनाद्यास तो नहीं हो सकता, वे उन्हें परमहंस स्वामी अस्तिलानन्द का नाम भी तो प्रदान कर सकते थे।

वोनों ही पदों का भाव सब कुछ स्वयं में समाहित कर लेने में अथवा सभी के मध्य स्वयं को विस्तारित कर देने में ही तो निहित है, कम से कम मैं अन्यज शिष्य तो यही समझता था। व्याकरण के आचार्य इस विश्वय में कथा कहते हैं, यह न तो मुझे और न मुझ जैसे अनेक शिष्यों को जान होगा।

मेरे नेत्रों के समझ पूज्यपाद गुरुदेव का विष्व अपने सम्पूर्ण हास्य के साथ उपस्थित था मानों वे भी नेत्री इस उल्लास का आनन्द ले रहे हों और जैसे बस इतने में ही उनका कोतुहल पूरा न हो रहा हो तो वे स्वामी असंगानन्द जी को भी मंद-मंद मुस्कराने के लिए उत्प्रेरित कर रहे हों।

अस्तिलानन्द और निखिलेश्वरानन्द? ऐसी पहेली तो मैंने पहले कभी नहीं चुनी थी और अपने समस्त ज्ञान विज्ञान को लगाने के बाद जब मैंने पराजय स्वीकार करने के भाव में

स्वामी जी की ओर देखा तो वे सहज स्वर में बोल पड़े—अरे भाई! जो एक पल में सब जगह समाया हुआ हो वह हुआ अस्तिल और जो समाते हुए भी न समा रहा हो, उन्मुक्त हो वह हुआ निखिल—जैसे वह उन्मुक्त आकाश सारा ब्रह्माण्ड इसी में समाया है लेकिन वह तो किसी में नहीं समाया है। नहीं समाया है न?

अंतिम वाक्य स्वामी जी ने कुछ इस तरह से पुचकार भेर एवर में कहा मानों कह रहे हों—जीता तो मैं ही हूं पर जलो मैं तुम्हें हारा नहीं मानता।

—और उनके स्वर में छिपे शिष्युन्द्र व ममत्व को अनुभव करके मेरा अन्तर्भूत तक मुस्करा गया...
मैं आज भी एकांत में जब स्वामी जी के शब्दों का स्मरण करता हूं तो प्रत्येक बार एक नया अर्थ समझे जा जाता है। शब्दों में ऐसी ही स्थिति को ब्रह्मविद्-वरिष्ठ की अवस्था के रूप में वर्णित किया गया है और इसे ही साधना का सर्वोच्च सोपान माना गया है। सामान्यतया, साधक जिस ब्रह्म तत्त्व की प्राप्ति कर के उसके आनन्द में आत्मलीप हो जाते हैं, जगत के कर्तन्यों से कुछ विपुल से हो जाते हैं, तब ऐसे उच्चतर ही नहीं सर्वोच्च सोपान पर गँड़े साधक जैसे कि पूज्यपाद गुरुदेव हुए हैं वे अपनी आत्मलीनता के सुख को त्याग एक प्रकार से कहे तो केवल विष पीने के लिए इस धरा पर अवतरित हुए हैं।

शिष्य गुरु को कथा दे सकता है? शिष्य तो स्वयं ही गुरु के सम्मने धार्चक होता है। वह उनका धन न लूटना चाहता हो तो उनके नाम का प्रताप लूटना चाहता होगा। वह उनके वर्वस्व को न लूटना चाहता हो तो उनके ज्ञान को लूटना चाहता होगा और गुरु भी अजानी सा बन अपने को लुटाता चला जाता है क्योंकि वह तो ही है ही निखिल!

सबमें रमते हुए भी उसका चित नहीं रहा हुआ है अपने शिष्यों के अतिरिक्त किसी अन्य भावभूमि में। उसे कुछ स्मृता भी नहीं है अपने शिष्यों से किसी बात की।

न वह यह दायित्व लाद गया है कि तुम मेरे नाम का प्रचार करो ही या मेरे ज्ञान को केलाओ ही लेकिन जिस बात की गुरुदेव ने स्वैव स्पृहा की वह मात्र इतनी ही है कि उनका शिष्य विषाव युक्त न रहे और न वह उनसे किसी रूप में छल करे—वही उनकी साधना उपासना आत्मधना या जो भी संज्ञा दें, सभी का सर्वोच्च रूप है। ऐसा करने पर ही जीवन में वष बसत स्थायी हो सकता है जो बसंत स्वयं में कोई विलास न होकर दूसरा रूप है नित्य नवसृजन के प्रतीक परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी का।

जीवन के समस्त विकारों को समाप्त करने में समर्थ

पंचतत्त्व साधना

किसी भी साधना को सम्पूर्ण करने का हमारे पास बस एक ही माध्यम है-
पंच तत्वों से सुजित हमारा यह शरीर और किसी भी साधना में जो सबसे बड़ी
बाधा हो सकती है वह भी है- हमारा ही यह शरीर।

क्या मूक हैं हमारे शाख इस मौलिक विसंगति के प्रति? क्या यह सम्भव है
कि प्राचीन काल में गुरुजन का ध्यान इस ओर न आकृष्ट हुआ हो . . .



धना एक ऐसा शब्द है जिसे सुन कर या पढ़कर
किसी का भी मन सहन ही इसके प्रति आकृष्ट
हो जाता है क्योंकि जो बात इसके मर्म में छिपी
है वह मात्र यही है कि व्यक्ति को यह विश्वास हो जाता है वह
अपना अधीर्षण प्राप्त कर सकता है।

उसे वह उपाय या माध्यम मिल गया लगता है जिससे
उसके मनोरथ पूर्ण हो गए लगने लग जाते हैं, किन्तु साधना
से पहले एक अन्य शब्द या ग्राव का अस्तित्व है और वह है-
संस्कार।

यह संस्कार ही होने हैं जो किसी व्यक्ति को प्रेरित
करते हैं कि वह साधना के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण
को अपने मन में रखना दें।

यह निश्चिन तथ्य है कि किसी भी व्यक्ति के जीवन
निर्माण में संस्कारों की एक बहुत बड़ी भूमिका होती है और
यही कारण है कि भारतीय जीवन शैली में जीवन को बोडश
संस्कारों- पुंसवन से लेकर अन्त्येष्टि- के मध्य यत्नियमित
करने की युक्ति निर्मित की गयी है किन्तु संस्कार का अर्थ
केवल किन्हीं कर्मकांडों का पालन न होकर उससे कहीं अधिक
विस्तृत होता है।

बचपन से शिशु के मन पर अपने आस-पास के

परिवेश का जी प्रभाव निरंतर पड़ता है वास्तव में वही उसके
संस्कार निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिवेश
के अभाव की पूर्ति कर्मकांड करपि नहीं कर सकता किन्तु
कोई आश्वासन सा अवश्य दे सकता है और जीवन में किसी
सकारात्मक आश्वासन का मिल जाना भी किसी उपलब्धि से
न्यून नहीं होता।

व्यक्ति का जो प्रारब्ध होता है वह तो उसे ही सहन
करना पड़ता है किन्तु श्री सदगुरुवेद की उपस्थित में वह उस
में केवल एक वृद्धा भर बन जाता है, भोक्ता नहीं।

वस्तुतः संस्कारों का अभ्युवय श्री सदगुरुदेव की
कृपा से ही हो सकता है क्योंकि संस्कार का वास्तविक अर्थ है
शोधन और प्राचीन काल में जहाँ गुरुजन अपने शिष्य के
अन्तर्मन का शोधन करते थे वही उसकी पंचभूतात्मक देह का
भी परिशोधन करते थे।

बोडश संस्कारों में से एक संस्कार होता है- उपनयन
संस्कार। आज भी यह संस्कार समाज में उल्लास पूर्वक,
समारोह के साथ सम्पन्न किया जाता है किन्तु जो इसका मूल
माव है, क्या उसका समरण शेष रह गया है?

उपनयन का केवल एक अर्थ बहुआर्दी किशोर को
आचार्य के समीप ले जाना या जनेऊ भर पहना देना ही नहीं

सही अर्थों में यह केवल पंच तत्व साधना ही नहीं बरन् उपनयन साधना है किसी भी शिष्य के ज्ञान चक्षुओं को उन्मीलित कर देने में समर्थ और इसी रूप में है यह एक सशक्त एवं पूर्ण प्रामाणिक गुरु साधना भी।

होता बरन् यह भी होता है कि अब गुरु अपने शिष्य को उप अर्थात् साहायक, नशन अर्थात् नेत्रों से युक्त करने की किया समझ करेंगे अथवा दूसरे शब्दों में कहें तो वे उसे ज्ञान चक्षुओं से युक्त करेंगे।

किन्तु जिस प्रकार से वृक्षित धड़े में शुद्ध जल भरने का कोई अर्थ नहीं होता उसी प्रकार से अशुद्ध वेह में भी ज्ञान की कोई भावधूमि स्पष्ट नहीं की जा सकती और शास्त्र प्रमाण है कि प्राचीन काल में जब ड्राह्याचारी उपनयन हेतु अपने गुरु के समीप जाता था तो वे उसे तीन विन तक अपने साहचर्य में रखने के बाद विदा देते थे।

तीन विन के पश्चात गुरु अपने शिष्य या उस ड्राह्याचारी को क्यों विदा के देते थे? अथवा उसे क्या ज्ञान देकर विदा करते थे? इसका आज कोई विवेचन नहीं मिलता।

उस अवसर पर गुरु अपने शिष्य को जो ज्ञान देकर एक अल्प अवधि के लिए विदा करते थे वस्तुतः वह ज्ञान साधनात्मक होता था। उस ज्ञान के माध्यम से अपने पंचभूतात्मक शरीर को शोधित करता हुआ शिष्य जब पुनः कुछ समय के बाद गुरु के समझ उपस्थित होता था तब गुरु अत्यन्त प्रसन्नता के साथ उसे ज्ञान प्रदान करने का क्रम प्रारम्भ करते थे।

हमारा यह पंचभूतात्मक शरीर (जो साधनाओं की आधार भूमि है) उसका निर्माण होता है हमारे मातृकुल व पितृकुल के रुक्ष द्वारा। हमारे पूर्वजों के कृत्यों का एक अंश हमारे भीतर भी विद्यमान रहता है, यह हमारे समाज की एक सुखाधित मान्यता रही है।

साथ ही साधना के क्षेत्र में इस बात का भी विशेष महत्व माना गया है कि किस व्यक्ति का किस प्रकार के उपर्याप्ति

बन के माध्यम से पोषण होता है।

इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि इस बात की कोई सुनिश्चितता नहीं कि साधन के लिए हमारा शरीर पूर्ण रूप से शोधित अवस्था में है ही और जब तक शरीर ही नहीं शोधित हुआ है तब तक किसी सफलता की आशा करना व्यर्थ है।

दूसरी ओर पंचभूतात्मक प्रकृति का भर्ता भूमि, वायु, जल, अथि एवं आकाश तत्व से निर्भित होने के कारण यह एक अपरिहार्य स्थिति बन जाती है कि इन पंच तत्वों से सम्बन्धित लक्षण भी व्यक्ति के शरीर में होंगे और यही कारण है मनुष्य में काम, क्रोध, मद, लोभ व मोह जैसे दुरुणीयों के होने का भी।

गुरु परम्परा में सुरक्षित 'तत्त्वानुब्राम-मीमांसा' ग्रंथ के अनुसार प्रत्येक तत्व अपने में एक ओर से जहाँ सकारात्मक होता है वहीं दूसरी ओर से नकारात्मक भी होता है जिस प्रकार से अग्रि एक ओर जहाँ उष्मा देने में समर्थ होती है तो वहीं दूसरी ओर भस्म कर देने में भी।

किसी भी व्यक्ति के शरीर में उपस्थित इन पंच तत्वों में से जहाँ भूमि तत्व कारण बनता है मोह का तो वहीं जल तत्व कारण होता है उसके अंदर काम का, अद्वि तत्व के कारण होता है क्रोध तो वहीं वायु तत्व के कारण होता है लोभ तथा आकाश तत्व के कारण उत्पन्न होता है मद।

भूमि तत्व का गुण होता है गुस्तवाक्यर्ण (gravity), इसी आकर्षण के कारण ही व्यक्ति को धूम्र आकर्षणों में बांधे उसे कभी भी उन्मुक्त नहीं होने देता किन्तु जहाँ यही तत्व अपनी विशदता में अवस्थित हो जाता है तो यही बन जाता है ममत्व अर्थात् जहाँ सभी अत्यवत् ही लगने लग जाते हैं।

जल तत्व का सहज गुण होता है एक प्रवाहशीलता और काम भी स्वयं में एक अनियन्त्रित प्रवाह होता है। जिस प्रकार से जल जिधर ढलाव पाना है उसी ओर लुढ़क जाता है उसी प्रकार से मनुष्य के मन का यह माय (काम) भी बिना भर्याशा का ध्यान किए किसी भी ओर प्रवाहित हो सकता है किन्तु अपने विशद रूप में संशोधित व परिवर्धित होकर यही तत्व बन जाता है प्रेम। ऐसा निश्चल भाव जो मानवता

विकारों की जड़ मूल से समाप्ति सम्भव ही नहीं, यह केवल संशोधित हो सकती है बुद्ध अर्थों से पृथक हो सकती है और इसी रूप में सहायक सिद्ध होती है यह साधना-पंचतत्व साधना।

का सर्वोच्च भाव होता है।

अग्रि तत्त्व का सामान्य गुण होता है किसी भी वस्तु को जला कर गम्भीर देना और यही किसी भी व्यक्ति का भ्रातृ बन जाता है जिस भ्राता वह क्रोधयुक्त होता है, कूपरी और जिस प्रकार से अग्रि अपने नियन्त्रित रूप में सुखद उष्माभ्रातृवक्त गुण से भी दूर होती है उसी प्रकार से क्रोध भी अपने नियन्त्रित रूप में परिवर्तित हो जाता है तेजस्विता में। तेजस्विता ही वह माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति ऐसे अनेक कार्य कर जाता है जो अनेकानेक हेतु कल्याणप्रद बन जाते हैं।

बायु तत्त्व का सहज गुण होता है इधर से उधर विचरण करते रहना। स्वछन्द तो जल का प्रवाह भी होता है किन्तु बायु का प्रवाह तो मानो किसी भी बंधन को स्वीकार नहीं कर पाता है। जिस प्रकार से बायु का प्रवाह सर्वथा उन्मुक्त होता है उसी प्रकार से मनुष्य के मन की बायु सदृश्य एक ब्रह्मि होती है उसका लोभ जिसमें उलझ कर मनुष्य का मन कभी एक वस्तु से आकर्षण को अनुभव करता हुआ उसे छन्तगत करने की चेष्टा करता है तो कभी किसी दूसरे में। लोभ की पूर्ति हो जाने पर मन में प्रमाद का जन्म होता है और पूर्ति न होने पर कुट्रा का तथा ये दोनों ही स्थितियां श्रेयस्कर तो ही कहीं जा सकती हैं।

लोभ नहीं गुरु संस्पर्श से अपनी परिशोधित अवस्था में आ जाता है वहाँ वह लालसा में बबल जाता है। लोभ व लालसा ये दोनों ही शब्द व्यापि सुनने में समानार्थक प्रतीक होते हैं किन्तु साधना के क्षेत्र में लालसा उस अवस्था को कहा जाया है जहाँ साधक उन्मनो (मन के आधिपत्य से मुक्त होना) अवस्था में आकर अपने इष्ट से साक्षात्कार करने की कामना को मन में स्थान देता हुआ शैने, शैने, सांसारिक प्रपञ्चों से बिलग होना प्राप्तम् कर रहा है।

और सर्वोपरि मानव शरीर में जो सबसे संवेदनशील मावभूमि से युक्त तत्त्व है, जिस तत्त्व के आधार पर निर्मित होता है उसका सूक्ष्म शरीर, उसकी चेतना, उसका आध्यात्मिक विकास वह होता है आकाश तत्त्व जो अपने सहज गुण में एक

विशालता का परिवाप्त होता है और वही कारण बनता है किसी भी व्यक्ति के शरीर में उसके अहंकार या मरव का।

अहंकार से मद की उत्पत्ति होती है और मद से बहा उमर्जन सम्भवतः कोई दूसरा नहीं हो सकता क्योंकि मद व्यक्ति के विवेक को इस प्रकार से उत्पन्न कर लेता है कि व्यक्ति स्वयं अपने ही हित के विषय में सोचने में असमर्थ हो जाता है। मद से जुड़ा शब्द है मदाधारा और वास्तव में मद व्यक्ति वो दृष्टि की छीन लेता है।

यहाँ एक बात स्पष्ट करनी आवश्यक है कि जन्म से मनुष्य के शरीर में प्रत्येक तत्त्व अपनी उदातता में न होकर सुप्त अवस्था या lower phase में होता है। उसका विकास गुरु संस्पर्श से सम्भव हो पाता है और इसी विकास के क्रम में आपे के पश्चात व्यक्ति के अंदर का आकाश तत्त्व अपने अहंकार से परिवर्तित होता हुआ वर्चस्व के भाव में अभिवृक्त होने लग जाता है।

वर्चस्व अर्थात् समताधान, पौरुषवान् होने हुए अपने लहर को पूर्ण करने की चेष्टा में संलग्न हो जाने का भाव और इसी कारणवश पिछले वर्ष के प्रारम्भ में दिनांक १.३.१९९९ को जो दीदा पूज्यपाद गुरुदेव ने प्रदान की थी वह श्री-ब्रह्म वर्चस्व दीक्षा। 'आपके पत्र' के अन्तर्गत नित्य ही पत्रिका कार्यालय में इस विषय से सम्बन्धित अनेक पत्र प्राप्त होते हैं कि माधकों के साधना क्रम में ऊर्जे किस प्रकार से अनेक रूप में बाधाएं आ रही हैं। इस बात पर विचार करना आवश्यक है कि क्या ही वह समाधान जिसमें साधना के मार्ग में आने वाली इस प्रकार की बाधाओं का निराकरण किया जा सके?

इस प्रकार की स्थितियों पर नियन्त्रण प्राप्त करने के लिए यहाँ निस पंच तत्त्व साधना की प्रस्तुति की जा रही है वह गुरु परम्परा में सुरक्षित व अप्रकाशित साधना विधि रही है क्योंकि तत्त्व सम्बन्धी साधनाएं इनी गृह मानी गयी हैं कि उनको केवल अधिकारी पत्र की प्रदान करने का विधान रहा है।

यह अप्रैल माह है और इसी माह में घटित होता पूज्यपाद गुरुदेव के अवतरण दिवस २९ अप्रैल का पावन अवसर। इस विशेष अवसर पर गुरु परम्परा में सुरक्षित रही इस साधना को प्रस्तुत करते हुए (विशेषकर महाविद्या साधनाओं एवं गुरु साधना में संलग्न साधकों द्वारा) हमें प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है क्योंकि साधनाएं स्वयं में ज्ञान व गुरु का दूसरा रूप होती है और इस अवसर पर पूज्यपाद गुरुदेव की ओर से इस प्रकार की साधना का सूत्र प्राप्त होना उनकी ही अनुकूलता का एक रूप है।

गुरु साधना का केवल एक रूप गुरु मंत्र का जप तक ही सीमित नहीं होता वरन् वे सभी साधनाएं जो साधक के जीवन की न्यूनताओं को दूर कर उसे गुरुत्व के भाव को आत्मसात करने में सहायक हों, गुरु साधनाएं ही होती हैं। आत्मसात करने में सहायक हों, गुरु साधनाएं ही होती हैं। आवश्यकता है तो एक भानसिक रूप से स्वस्थ व गंभीर विवेचन को। प्रस्तुत साधना उस बहालत कोटि की साधना है जिस कोटि की साधनाएं सिद्धांशमें सम्पन्न करने का विधान रहा है अतः साधना के भाव को गंभीरता एवं आस्था के साथ शुद्धण करें।

साधना विद्यान

यह साधना 21.6.2000 अवधा किसी भी गुरुवार से प्रारम्भ की जा सकती है। इसके लिये साधक के पास ताप पर औंकिन एवं प्राण प्रतिष्ठित गुरु साधुज्ञ चंद्र होना आवश्यक है साथ ही उसके पास मंत्र जप हेतु शुद्ध स्फटिक की माला व तीन लघु नारियल भी होने चाहिए। समस्त साधना सामग्री का पहले किसी साधना में प्रयोग न किया गया हो।

आसन व बलों का रंग श्वेत हो तथा दिशा के निर्धारण के रूप में साधक का मुख उत्तर की ओर रहे। यह भ्यारह दिवसीय रात्रिकालीन साधना है जिसे साधक दस बजे के आस-पास प्रारम्भ करे। मंत्र जप के काल में गुरु धो का दोपक लगा होना चाहिए।

साधक स्नान आदि से शुद्ध होकर साधना प्रारम्भ करे तथा जिस रूप में नित्य संस्कृत गुरु पूजन करते हों उस विधि से सम्पन्न कर निम्न प्रकार से न्यास क्रम सम्पन्न करें।

अद्यादि न्यास:

शिरसि चतुर्मुखाय चतुर्ये नमः:

(दोषे हृषि की उत्तिर्णी से चिर का स्थान अन्ते हुए उच्चित करें)

मुखे देवी गायत्रीचतुर्दशे नमः:

(मुख का स्पर्श करते हुए उच्चित करें)

इदि दक्षिणा मूर्तये देवतायै नमः:

(इदि का स्पर्श करते हुए उच्चित करें)

कर न्यास:

ॐ आं ॐ अंगुष्ठाम्या नमः:

(दोनों अंगुष्ठों को परस्पर मिलाते हुए)

ॐ ई ॐ तर्जीभ्या स्वाहा

(दोनों तर्जीभ्यों को परस्पर मिलाते हुए)

ॐ ऊं ॐ भृत्यमाम्या वषट्

(दोनों भृत्यमाओं को परस्पर मिलाते हुए)

ॐ ऐ ॐ अनामिकाम्या तुं

(दोनों अनामिकाओं को परस्पर मिलाते हुए)

ॐ 'अप्रेत' 2000 भेद-तर्त्र-यत्र विज्ञान '28'

ॐ आं ॐ कनिष्ठकाम्या वौषट्

(दोनों कनिष्ठकाओं को परस्पर मिलाते हुए)

ॐ आं ॐ करतल करपृष्ठाम्या फट्

(दोनों करतलीयों के पृष्ठ तथा को परस्पर मिलाते हुए)

इवादि न्यासः

ॐ आं ॐ इवादि नमः:

(हृष्ट पर दाढ़ होयें स्खते हुए बोलें)

ॐ ई ॐ शिरसे स्वाहा

(सिर का दाढ़ हाथ से स्पर्श करते हुए)

ॐ ऊं ॐ शिवायै वषट्

(शिवा पर दाढ़ हाथ रखते हुए)

ॐ ऐ ॐ कवचाय तुं

(दोनों कवचों का स्पर्श करते हुए)

ॐ आं ॐ भेत्र चत्राय वौषट्

(दोनों भेत्र चत्रों का दोनों हाथों द्वारा लगाती से एक साथ स्पर्श करें)

ॐ आं ॐ अलाय फट्

(आले हाथ की उत्तिर्णी में कुरके बालों हुए सिर के दरों कोर घुमाते)

इसके पश्चात यंत्र व तीनों लघु नारियलों का श्री सद्गुरुदेव परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी, पारमेष्ठि गुरुदेव परमहंस स्वामी महिलानन्द जी व आधिगुरु गगवाल शिवजी के रूप में कुंकुम, अक्षत व पुष्प से संस्कृत पूजन कर निम्न प्रकार से ध्यान उच्चित करें—

ॐ नमः शिवाय गुरुवे सच्चिदानन्द मूर्तये

निष्प्रपञ्चाय शांताय निरालम्बाय तेजसे

पूज्यपाद गुरुदेव से अपने अज्ञ, रक्त व पिन् दोष के परिहार की प्रार्थना करते हुए निम्न मंत्र की '३ माला नप करें—

मंत्रः

॥ ॐ आं तत्त्वद्वाणे हं सद्गुरु देवेभ्यो नमः ॥

Om Am Tat-tvadwane Namau Sadguru Devebhyo Namah
मंत्र नप के पश्चात रात्रि शवन साधना स्थन के समीप ही करें। इन भ्यारह दिनों में भूमि-शयन करने व पूर्ण रूप से द्वाष्टर्य का पालन करना अनिवार्य है। भोजन धया सम्प्रब्रह्मेव एक बार और साम्बिक रूप में यहण करें। दिन में साधक अपने कार्य पर जाने, व्यापार आदि करने के लिए स्वतंत्र हैं। नित्य मंत्र जप यथामूर्त्यव निष्वित समय पर ही करें। भ्यारह दिनों के पश्चात यंत्र को किसी नदी या किसी स्वच्छ सरोवर में विमर्जित करें।

साधक को विकारों से निर्भल करते हुए यह कायाकल्प-साधना के सातुल्य प्रभावों से युक्त साधना भी है।

....जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात छिजः उच्चते-
जन्म से तो सभी एक समान मल-मूत्र के मध्य से होकर आ रहे हैं अतः कौन थेष्ट और कौन निम्न? यह तो गुरु का संस्पर्श होता है जो व्यक्ति को कुछ से कुछ बना देता है।

साधना सामग्री पैकेट - 390/-

गुरु आहान स्तोत्र

स्नोत्र स्वर्ग में मत्र ल्यस्प होने हैं-इस तथ्य भे प्रत्येक साधक परिचित है किंतु मंत्रों की अपेक्षा एक अन्य विशिष्टता होती है कि इसी भी स्नोत्र में कि जहां मंत्र वर्णों का विशिष्ट संयोजन होता है वही किसी भी स्नोत्र में एक लयवर्जना भी होती है तथा इसी लयवर्जना के कारण यह सहन स्वाधारिक हो जाता है कि साधक के इदय के भ्रात्र पूर्णता से प्रस्फुटित हो सके। इदय के मात्र प्रस्फुटित हो सके, वही तो स्मरन साधनाओं का भी मर्म है। मात्र स्तोत्र पात्र से ही जीवन में कई प्रकार की अनुकूलनायी प्राप्त हो जाती है।

य

6 माह है पूर्णपाद गुरुदेव के अवतरण का माह और किसी भी शिष्य के लिए वह सम्पूर्ण माह उनी प्रकार में धूपता और पवित्रता का माह है ज्यों किसी शिव-भक्त के लिए श्रावण का माह होता है।

यह सम्पूर्ण माह गुरु साधनाओं को सम्पदन करने का माह है और जहां गुरुदेव की साधना की जाए वहां वह आवश्यक है कि उनका सम्पूर्ण गरिमा व पवित्रता के साथ आहान भी किया जाए। गुरु शब्द के साथ देव शब्द लोहने का अर्थ ही यही है कि गुरुदेव, व्यक्ति का संज्ञा से आगे बढ़ देवत्व की विशिष्टतम भित्ति होने हैं।

शिष्यगण, पूर्णपाद गुरुदेव का भास्त्रान यथोचित विधि से कर सके। इस हेतु इस मात्र में जिस गुरु आहान-स्तोत्र की प्रस्तुति की जा रही है वह एक दूनीम स्तोत्र है। इस स्तवन के पाठ अथवा श्रावण मात्र से गुरुदेव सूक्ष्म रूप में उपस्थित होने हों, यह एक अनुभव जन्म प्रमाण है अनेकानेक साधकों व शिष्यों का अतः इस स्तवन का पाठ अन्यत भावविहलना, शुद्धता एवं विगलित कठ से करें।

प्रयोग-विधि : जब कभी भी इस स्तवन का पाठ करने का धार्म मन में उमड़े तब शुद्ध वर्ण धारण कर उत्तरमुख्य हो आसान पर बैठे, बातावरण को धूप अग्रसरकी के द्वारा नुगंधमय कर लें तब अपने स्माक किसी बाजौट पर वर्ण विछाकर पूष्य की पंखुड़ियों को गुरुदेव हेतु आसन के स्थान में स्थापित करें।

सामूहिक अथवा व्यक्तिगत भूक-पूजन गुरु साधना के अवमर पर इन स्तोत्र का पाठ गुरुदेव का यथोचित विधि से पूजन करने के उपरान्त करें, गच्छ में अथवा प्राप्ताघ में नहीं—ऐसा सिद्धांशम् गुरु-पूजन क्रम में उल्लिखित है।

मात्र परोक्षण के रूप में, किसी कौतूहल या किसी भी प्रकार से अग्रिमामय रूप में इस स्तवन का पाठ करना सर्वथा वर्जित है। आगे इस स्तवन को जिस प्रकार से पूर्णपाद गुरुदेव ने ल्पाए किया है, उसी रूप में प्रकाशित किया जा रहा है—

पूर्ण सतान्ये परिपूर्ण रूप
गुरुर्वै सतान्ये दीर्घीं वदान्यम्।
आविर्वतां पूर्ण मदेव पुण्यं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥१॥

त्वमेव माता च... (लोक के १६ प्राप्ति)

न जानामि योगं न जानामि उद्याने
न मंत्रं न तंत्रं योगं कियान्वे।
न जानामि पूर्णं न देहं न पूर्वं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥२॥

त्वमेव माता च...

अनाथो दिश्मो जरा रोग शुक्तो
महाशीण दीनं सदा जाड्य वक्त्रः।
विषति प्रविष्टं सदाऽहं भजामि
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥३॥

त्वमेव माता च...

त्वं मातृ रूपं पितृ स्वरूपं
आत्म स्वरूपं प्राण स्वरूपं।
चैतन्यं रूपं देवं विष्वनं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥४॥

त्वमेव माता च...

त्वं नाथं पूर्णं त्वं देवं पूर्णं
आत्म च पूर्णं जानं च पूर्णम्।
अहं त्वां प्रपदे सदाऽहं भजामि
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥५॥

त्वमेव माता च...

मम अशु अर्थं पृथ्यं प्रसन्नं
देहं च पृथ्यं शरण्यं त्वमेवम्।
नीवोः वदां पूर्णं मदेव रूपं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥६॥

त्वमेव माता च...

आवाहयामि आवाहयामि
शरण्यं शरण्यं सदाऽहं शरण्यं।
त्वं नाथं मेवं प्रपदे प्रसन्नं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥७॥

त्वमेव माता च...

न तातो न माता न बन्धुर्भूतं भ्राता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता।
न जाया न वित्तं न वृत्तिर्भवेत्
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥८॥

त्वमेव माता च...

आवध्य रूपं अशु प्रवाहं
धीयां प्रपदे हृष्यं वदान्ये।
देहं त्वमेवं शरण्यं त्वमेवं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥९॥

त्वमेव माता च...

गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।
एको हि नाथं एको हि शब्दं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥१०॥

त्वमेव माता च...

कान्तां न पूर्वं वदान्यै वदान्यं
कोऽहं सदान्यै सदाऽहं वदामि।
न पूर्वं पतिर्वै पतिर्वै सदाऽहं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥११॥

त्वमेव माता च...

न प्राणो वदार्वै न वेङ्गं नवाऽहै
न नेत्रं न पूर्वं सदाऽहं वदान्यै।
तुच्छं वदां पूर्वं मर्वेव तुल्यं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥१२॥

त्वमेव माता च...

पूर्वो न पूर्वं न जानं न तुल्यं
न नारि नरं वै पतिर्वै न पतन्यम्।
को कत् कवा कुञ्ज कदेव तुल्यं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥१३॥

त्वमेव माता च...

गुरुर्वै गतान्यं गुरुर्वै शतान्यं
गुरुर्वै वदान्यं गुरुर्वै कथान्यम्।
गुरुमेव रूपं सदाऽहं भजामि
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥१४॥

त्वमेव माता च...

आत्र वतां अशु वदेव रूपं
जानं वदान्यै परिपूर्णं नित्यम्।
गुरुर्वै द्रजाहं गुरुर्वै भजाहं
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम् ॥१५॥

त्वमेव माता च...

त्वमेव भाता च पिता त्वमेव
त्वमेव लंघुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव लर्वं मम देव देव ॥१६॥

त्वमेव माता च...

सत्यपूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त, पूर्ण स्वरूप वाले निश्चित रूप से जो सत् चिद् स्वरूप हैं, अखण्ड स्वरूप हैं, संसार में जलविभूत होने वाले सबसे अधिक पुण्यवान् हैं, ऐसे दिव्य गुणों के परिपूर्ण गुरु चरणों की मैं शरण ग्रहण करता हूं ...॥१॥

योग क्या है, मैं नहीं जानता हूं, न मैं ध्यान को जानता हूं, न मन्-तंत्र आदि कियाओं को ही जान पा रहा हूं। पूर्ण शक्ति स्वरूप ब्रह्म शक्ति को भी नहीं जानता हूं। इस शरीर के पूर्व और पश्चात् की गति को भी नहीं जानता हूं। केवल मैं शरणागत हूं, यही मेरा एकमात्र चेतना है ...॥२॥

मैं अनाथ और दरिद्र हूं, जरा और रोग से श्रस्त हूं, मैं विल्कुल आश्रयहीन हूं तथा स्पष्ट रूप से बोल भी नहीं पाता हूं, निरन्तर विपत्तिहस्त हूं। आपकी आराधना करता हूं, हे गुरुदेव! आपकी शरणागत हूं, आप मेरी रक्षा करें ...॥३॥

हे गुरुदेव! आप ही मेरे माता, पिता, आत्मा और जन्म हैं। आप चैतन्य स्वरूप हैं, देवाधिदेव हैं। मैं सदैव आपकी शरणागत हूं, आप मेरी रक्षा करें ...॥४॥

हे गुरुदेव! आप पूर्ण स्वरूप हैं, देव स्वरूप हैं, आत्म स्वरूप एवं ज्ञानमय हैं, चैतन्य स्वरूप एवं विद्य चेतनमय हैं। मैं सदैव आपकी शरणागत हूं, आप मेरी रक्षा करें ...॥५॥

हे प्रभु! मेरे अशुद्धों का अर्द्ध आपको अर्पित है, यह देह ही पुष्ट है, आपके शरणाभत हूं। बारम्बार वेह धारण करके पूर्णता प्राप्त कर सकूं, क्योंकि मैं आपके चरण शरण हूं ...॥६॥

हे प्रभु! आप मेरे हृदय में स्थापित हों, आपका आवाहन करता हूं। हे नाश! मेरी स्थिति से आप परिचित हैं, जीवन में मैं प्रसन्नता चाहता हूं, मुझे अपनी शरण में ले लें ...॥७॥

माता, पिता, भाई तथा कोई भी साक्षन्धी इस संसार में मेरे नहीं हैं। पुत्र, पुत्री, पति तथा सेवक आदि भी नहीं हैं। पत्नी, धन या जीवनयापन के किसी भी साधन को मैं अपना नहीं जानता हूं। हे गुरुदेव! मैं आपके शरणाभत हूं ...॥८॥

अनन्त प्रवाहगान अशु ही मेरे हृदय में स्थापित हैं,

सिद्धार्थम् प्रणीत यह स्तोत्र, मात्र एक स्तवन गर नहीं है। यह स्वयं में पूज्यप्राप्य सद्गुरुदेव की सूक्ष्म रूप से उपनिषेत् कर लेने का प्राणों से किया गया एक आहान है, अतः इसका पठन-पाठन पूर्ण मर्यादा से किया जाना आवश्यक है। यूं भी कभी मन्त्री मैं, विस्तर में लेटे-लेटे, रास्ते चलते, बाधरूप में नहाते समय इसका उच्चारण किसी गीत की गांति करना अग्रद है और ऐसा करना विपरीत कलदायक भी हो सकता है। शिष्यगण इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखें।

और ये ही आप के विमल स्वरूप का प्रमाण है। यह मेरा शर्मीर भी आप का ही है, जिसे रुक्षा के लिये चाहें तो आप उपयोग करें। पुनः पुनः निवेदा है कि मैं आपकी शरण में ही रहूं ...॥९॥

मैं आपकी ही शरणागत हूं, आपके ही अधीन हूं, जाप ही मेरे रहक है, पालक हैं, आप ही मेरे पक्षमात्र आराध्य हैं, स्तुत्य हैं। आप नदा मुझे अपनी शरण में रखे रहें, ऐसी प्रार्थना करता हूं ...॥९॥

कोई भी वस्तु इस संसार में ऐसी नहीं है, जिसकी मुझे आपके समझ कामना हो। मैं कौन हूं, यह भी नहीं जानता हूं। इससे पूर्व मेरा कोई व्याप्ति था भी या नहीं, मैं नहीं जानता हूं। मैं तो बस जानता हूं कि आप ही मेरे सर्वस्व हैं, और आपकी शरणागत की ही कामना करता हूं ...॥१०॥

यह प्राण, देह तथा नेत्र आदि इन्द्रियों निन्हें मैं अपना समझता था — ये अनिन्य और तुच्छ हैं, नाशवान हैं, संसार में केवल आप ही सारभूत तत्त्व हैं। प्रभु! मैं आपकी ही शरण में हूं ...॥११॥

सुषि की उत्पत्ति से पूर्व का मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। ये नर, नारी, पत्नी और पति का भाव कैसे हुआ — यह भी नहीं जानता, मैं कौन हूं, कब से इस संसार तक मैं हूं, कब तक ऐसा चलता रहेगा, यह भी नहीं जानता, केवल आपकी शरणागत हूं, यही जानता हूं ...॥१२॥

गुरु ही गति है, गुरु ही शक्ति है, गुरु ही स्तुति योग्य है, गुरु ही कथा योग्य है, गुरु ही वर्णन योग्य है, उनका ही मैं सदा रमरण करता हूं उन्हीं की शरणागत चाहता हूं ...॥१३॥

मैं आर्त हूं, आँखों में अश्रु हैं, मैं प्रार्थना कर रहा हूं कि आपके स्वरूप का मुझे ज्ञान हो, मैं पूर्णता प्राप्त करूं, गुरु का ही धजन करूं, और एकमात्र उनकी शरण में रहूं ...॥१४॥

गुरुदेव! आप ही माता, पिता, बन्धु, सखा, विद्या और धन आपसे अलग न मेरा कोई भाव है और न मैं चाहता हूं, इसी रूप में आप मुझे पूर्णता प्रदान करें। हे प्रभु! आप ही मेरे सर्वस्व हैं, सर्वस्य हैं ...॥१५॥

सहज सहज सब कोई कहें,
सहज न चीन्हें कोई

निखिलं मधुरं, ज्ञानं निखिलं,
योगं निखिलम् परमं निखिलम्
निखिल योग

सहजता ही जीवन है

- योग, कुण्डलिनी जागरण के बाद आज तीव्रता से लोकप्रियता प्राप्त कर रहा शब्द है - सहज योग। क्या है इस शब्द या शब्द से भी पृथक योग की इस शैली का मूल अर्थ? क्या एक उन्मुक्त जीवन जीने की कामना? क्या एक स्वच्छन्दता पाने की लालसा? क्या अपने व्यवहारों को आवरण देने की इच्छा? समाज के नियमों से विद्रोह अथवा . . .

Sक क्या है . . . एक पिता-पुत्र, पशुओं की किसी हाट में गए और वहाँ से उन्होंने बोझ ढोने के लिए एक गधा खरीदा। गधे को लेकर वे दोनों पैदल ही अपने गांव की ओर चल पड़े। रास्ते में लोगों ने उन्हें देखा और कहने लगे - 'कैसे मूर्ख लोग हैं वे! गधा पाल में है और पैदल चल रहे हैं।' जब लोगों के नामे बढ़ गए तो पिता ने पुत्र को गधे पर बैठा दिया। कुछ दूर चलने पर लोगों ने किर ताना कसा - 'देखो तो जरा! बाप बेचारा पैदल चल रहा है, लड़का गधे पर बैठा है, बड़ों की तो इन्हें का नामना ही नहीं रह गया।' जब लड़के से ज्यादा देर नामे नहीं सह गए तो उसने सुन उत्तर कर अपने पिता को बैठा दिया। पिता के बैठों पर, कुछ ही देर बाद यह टिप्पणी सामने आयी - 'बेचारा कामल बच्चा तो पैदल चल रहा है, ये तो पके पकाए हैं, क्या ये पैदल नहीं चल सकते? तभी तो आज बुजुर्गों की कोई इन्जल नहीं रह गयी है।' खीझ कर पिता-पुत्र दोनों ने नया किया कि दोनों ही गधे पर बैठ जाने हैं, देखें भव कोई कमा कह सकेना, लेकिन थोड़ा दूर चलते ही . . . 'इसान में इंसानियत नहीं है मर गयी है, एक अकेली जान गधे पर देखो दो-दो लोग केरे लड़े बैठे हैं।' यह व्यंग्य सामने आया।

कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति कुछ भी क्यों न करे, अपनी ओर से अच्छा से अच्छा क्यों न करे उसे

आलोचना, टिप्पणी, व्यंग्य, उत्ताहने नामे सुनने पड़ ही जाते हैं। निर्विवाद रूप से चलना शायद ही किसी के लिए सम्भव हो पाना हो और व्यक्ति की उर्जा का एक बहुत बड़ा मार्ग, जो कि अन्यथा रचनात्मक कार्यों में व्यतीन होता, वह व्यर्थ के द्वंद्वों से उलझने में नष्ट हो जाता है।

सम्भवतः कोई विरला ही होगा जो यह अनुभव करता हो कि उसकी गति उन्मुक्त है, वह सहज हंग से अपने जीवन को जी पा रहा है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक ऐकांतिकता या privacy ही है जिसके माध्यम से वह अपने मस्तिष्क व शरीर के बाक गए तत्त्वों में एक नवीन उर्जा भरने की क्रिया करता है किन्तु क्या ऐसा उसे सुलभ हो पाता है? ऐकांतिकता या privacy में यहाँ नापर्य किसी एकांत में बने सुसंजित कभरे ने नहीं है। ऐकांतिकता में नापर्य है किसी विज्ञ की ऐकांतिकता क्यों कि यदि मन में विचारों का झंडावात चल रहा हो तो न एकांत में बना कोई सुसंजित कथ सुख देता है न ही मनोरंजन का कोई अन्य साधन। ये सुख के बाह्य साधन हैं और कोई अस्वश्यक नहीं कि बाह्य साधनों से अन्तर्मान भी सुख की अनुभूति कर सके। दूसरे ओर जब मन से सुख उपजता है तो अपने साथ-साथ सारा संसार हमता हुआ लगने लग जाता है . . . और ऐसा नव होता है जब जीवन में सहजता होती है - आप मना तो जग मला।

सहज योग अपने मूल रूप में है—तत्त्व योग! योग का कोई भी रूप नहीं जा सकता, आवश्यक है साधक को महसुस ज्ञान ही लय योग का, बतों कि लय-योग ही तो है सम्पूर्ण योग शास्त्र का आधार।

जब मन में कोई गुननुनाहट पुट रही होती है तभी नहीं की लहरों में कोई संगीत सुनाई देता है नहीं तो वह पानी का एक प्रवाह बन कर रहा जाता है, जब खुद अपने मन में कुछ दूसरा रहा होता है तभी पेड़ पौधों के झूमने में कोई नृत्य दिखाई देता है नहीं तो वे भी जल झाड़ झाड़ ही दिखते हैं, जब मन किसी लय में बंधा होता है तभी किसी की हँसी-चिलचिलाहटों में झरने का संगीत सुनाई देता है नहीं तो वे चिलचिलाहटें, कर्ण कटु बन कर कानों में चुप्पने लग जाती हैं। सब कुछ व्यर्थ सा, बोझिल और नीरस बन उसहज हो जाता है।

सहज कहे या लयबद्ध कहे, कोई अंतर नहीं क्योंकि दोनों एक दूसरे पर अधिकत भाव हैं। जो सहज होना वह लयबद्ध होगा और लयबद्ध होना, सहजता के अभाव में आ हो नहीं सकती। जीवन में सहजता लानी है तो पहले लय लानी होगी और जो शब्द आज बहुप्रचारित हो रहा है—सहज योग, वह भी योग की परिभाषा के अन्तर्गत मूल रूप से लय योग है।

निस तरह से योग का परिवर्तन हुआ योगा! और योग का अर्थ सोमिन हो गया केवल कुछ आसनों या शारीरिक व्यायाम तक उसी प्रकार से लय योग का सहज योग में परिवर्तन, व्यक्ति का अपनी सुविधा से गढ़ा गया एक शब्द है क्योंकि इस माध्यम से व्यक्ति अपने किसी भी उन्मुक्त आचरण को एक आवरण देने के लिए स्वतंत्र जो हो जाता है।

यद्यपि यह आज की बात नहीं है। यदि यह आज की बात होती तो आज मेरे साथ चार सौ वर्ष पूर्व कर्नार को यह कहने की विवशता न होती—

सहज सहज सब कोई कहें, सहज न छीनें कोश
जिन सहजे विषया त्यजी, सहज कहीजे सोय

... क्या आज तक विनी लच्छे ने अपने मैंह से बोल कर कहा है कि वह बच्चा है और इसीलिए वह अलोध हरकतें कर रहा है। बच्चे को तो इस बान का बोध भी नहीं होता कि वह बच्चा है, वह अपने ही आनंद में लीन रहता है। इसी प्रकार से जो लय से तादात्म्य कर चुके होते हैं वे योगिना कुछ कहे, सहजता के गुणों से भर जाने हैं। एक तरंग आधी तो रुठ गए, फिर एक तरंग आयी तो मान गए, यही बच्चे का गुण

होता है और यही सहजता भी होती है। यही सहज योगी का भी लक्षण होता है। जो केवल बुद्धि तत्त्व के साथ रहना जानते हैं, सहज योग का विषय उनके लिए कभी भी गाल्प नहीं हो सकता।

दुष्पार्थ से हम सभी युवा होते हुए जब तक गुरु चरणों तक पहुंचते हैं तब तक जीवन का एक बड़ा भाग बुद्धि तत्त्व के साथ इस तरह से जी चुके होते हैं कि वह हमारे संस्कारों का एक भाग बन चुकी होती है।

इस अवस्था में यह सम्भव नहीं कि हम शिशुवत् सहज रह सकें और न शिशुवत् सहज रह कर हम इस कट्टकपट से भरे संसार में रह सकते हैं किन्तु इसका यह भी तो अर्थ नहीं कि हम आप व्यक्ति की तरह छल-प्रपञ्च को जीवन मान दें, गणित करने को जीवन का लक्ष्य बना दें।

ऐसी स्थिति में प्रश्न उठता है कि ऐसा क्या किया जाए कि जिससे मन से लयबद्ध, सहज, गुरु चरणों में शिशुवत् सरल रहते हुए भी संसार के विष और वैमनस्य के मध्य रहा जा सके?

जैसा कि प्रारम्भ में कहा लय, व्यक्ति को कहीं बाहर से नहीं मिल सकती, इसे स्वयं के धीतर से ही उद्भूत करना होता है। प्रत्येक व्यक्ति में मूलभूत रूप से तीन शक्तियां होती हैं—आत्म शक्ति, प्राण शक्ति एवं इच्छा शक्ति। प्रथमतः तो अधिकांश व्यक्तियों में ये तीनों शक्तियां जाग्रत ही नहीं होती हैं और यदि जाग्रत भी हो तो उनमें परस्पर तालमेल नहीं होता है। परस्पर तालमेल का यह अभाव ही व्यक्ति को सैव उग्र, व्यव, पीड़ाग्रस्त और तनावयुक्त बनाए रखता है।

व्यक्ति यह समझ नहीं पाता है कि क्यों उसका चित्त सदैव उद्धिन बना रहता है, क्यों उसके प्रयास उसफल हो जाते हैं और कुंडा में वह लय प्राप्ति के लिए मुख्य रूप से जिन दो साधनों की ओर बढ़ जाता है—सेवन या नशा, वे उसे और भी अधिक अव्यवस्थित कर जाते हैं क्यों कि इनका प्रभाव क्षणिक जो होता है।

जीवन में विषम स्थितियों को साध लेना साधना है। बाध्य रूप में इस प्रकृति ने जो लय है, उसे ही शास्त्रों में आहव बहा गया है, हम अनहव की स्थिति को जीवन में उतार लेना लय योग का वास्तविक अर्थ है।

लय योग, मुख्य रूप से कुण्डलिनी नागरण से सम्बन्धित विषय रहा है किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि यह एकमात्र कुण्डलिनी नागरण से सम्बन्धित विषय है अबवा किसी चक्र विशेष से इसका सम्बन्ध है। यिस प्रकार से

सावर भंडों का रहस्य एिपा होता है एक तय में, इसी कारणवश सावर भंड शीघ्र प्रभावशाली सिद्ध होता है लय योग में... और यही तो रहस्य है नाथ पंथ के साधकों की जलमस्ती का भी।

कुण्डलिनी जागरण मूल रूप में हठयोग का विषय रहा है उभी प्रकार से लय योग(या आज की परिभाषा में सहज योग) भी हठयोगियों का विषय रहा है। नाथ योगियों का सदैव अलमस्त बने रहना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। जिसने प्रकृति की लय से ही सामंजस्य कर लिया, उसके लिए कौन सी वाधा और कौन सा शोक?

लय योग साधना

साधकगण, लय योग की प्राथमिक भावभूमि से साक्षात्कार कर सके इस छेत्र इसी पंथ से सम्बन्धित एक साधन। प्रस्तुत की जा रही है। इच्छुक साधक के पास 'गुरु रहस्य सिद्धि यंत्र' (जो ताप पर पर अंकित एवं नवनाथ भंडों से चेतन्य हो), एवं नवनाथों के प्रतीकरूप में 'नौ हकीकी पत्थर' होने आवश्यक हैं। साधना में बहों का रंग सफेद हो तथा दिशा उत्तर रहे। यह ब्रह्म मुहूर्त में की जाने वाली साधना है। सबसे पहले गुरु यंत्र का संक्षिप्त पूजन करें, उस पर चंद्रक का टीका लगाएं त तुष्टि में करें फिर यंत्र के चारों ओर हकीकी पत्थर रखपित करें ऐसा ही समस्त हकीकी पत्थरों पर भी पूजन करें। समूर्ण पूजन काल में 'ॐ गु शं गु ॐ' मंत्र का मानसिक रूप से जप करते रहें। संक्षिप्त पूजन के उपरान्त निम्न मंत्र का क्रेवल एक बार जप करें—

मंत्र

अन्नमो आदेश, गुरुजी को आदेश। ॐ गुरुजी कहां थे पवन कहां थे पानी, कहां थे नर कहां थे नारी, कहां ब्रह्मा कहां विष्णु कहां शिव की परनामी। कहां चंद्र थे कहां सूर्य कहां नवलक्ष तारा जब हुई अगम वेद की बानी। ॐ गुरुजी असंख युग बरते अलील रहते, उपने आपो आपना सुभय धाम कमल में विश्राम। आसन से उपजी मनसा धाती जिसने तीन रत्न पैदा किए ब्रह्मा, विष्णु, महेश। अलख का मेला हुआ, रत्न मिल सिद्ध कियो अलील का जाप। माता कुआंरी पिता यती। लोह में काया बज में पाणी। अनंत कोटि सिद्धों की मनमानी। जड़े पारा पिवे योगी पानी उल्टे पल्टे काया सिद्धों का

ज 'ओंत्रे' 2000 मंत्र-तत्र-यंत्र विज्ञान '34' ल

मार्ग साधक ने बाया। ॐ गुरुजी प्रथम अलील नाम द्वितीये उदक नाम तृतीये तुरे नाम चतुर्थे जल नाम पांचवे पाणी नाम षष्ठे ब्रह्म नाम सप्तमे अचल नाम अष्टमे आव नाम नवमे नीर नाम दशमे बींध नाम एकादशे ऋद्ध नाम द्वादशे जिन्दा पीर बोलिए। ॐ गुरुजी जल जागो थल जागो जागो जलविन्दी की काया। अलील पुस्तकी तुम जागो शरण तुम्हारी आया। इतनी अलील गायत्री का जो प्राणी सिमरण करे सो प्राणी भवसागर तरे। अलील गायत्री का जप सम्पूर्ण भया। श्री नाथ गुरुजी आदेश आदेश।

किसी भी गुरुवार से प्रारम्भ करके, एक नियत समय पर, यह निरन्तर ध्यारह दिन तक की जाने वाली साधना है। साधना के अंत में समस्त सामग्री को विसर्जित कर दें।

यह नाथ पंथ की बह मूल साधना है जिसे कभी नाथ पंथ के गुरुजन अपने पास आने वाले प्रत्येक शिष्य को सर्वप्रथम सम्प्रसन्न करवाते थे, जिसने शिष्य-साधक तनावमुक्त रहने को कला सीख सके। कैसे भी धोर संकट या मानसिक तनाव की स्थिति बचों न हो, इस मंत्र का (जिसे नाथ पंथ में अलील गायत्री की उपमा ही गयी है) केवल एक बार का उच्चारण व्यक्ति को सहन ही मनोवृछित प्रभाव दे जाता है।

साधना सामग्री पैकेट - 342/-

कार्य नं० ४ (जिराम - ४ दोस्रिए)

- | | |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|--------------------------------------------------------------|
| १. प्रकाशन | : विल्सनी |
| २. प्रकाशन अवधि | : मासिक |
| ३. मुद्रक | : नील आट विल्सन, 10/2 DLF
इंड. परिया, योती नगर, नई दिल्ली |
| ४. प्रकाशक | : श्री केलाश चन्द्र श्रीमाली |
| ५. सम्पादक का नाम | : श्री नन्द किशोर श्रीमाली |
| क्या भारत के नागरिक हैं? : हाँ | |
| पूरा पता : | |
| ८०० श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट | ३०६, कोहाट एन्कलेय, |
| कालोनी, नोएपुर (शनौर), | पीतम्पुरा, नई दिल्ली-३४, |
| फोन : ०२९१-४३२२०९ | फोन : ०११-७१८२२४८ |
| ६. उन व्यक्तियों के नाम और पते, जो समाचार पत्र के उद्वाली में नाम जो समस्त पृष्ठी के एक प्रतिशत से अधिक के सामेवार या हिस्सेवार हैं— श्री नन्दकिशोर श्रीमाली, श्री केलाश चन्द्र श्रीमाली, श्री अश्विन श्रीमाली। | |
| मैं केलाश चन्द्र श्रीमाली एवं ब्रह्मा धोपित करता हूँ, कि मेरे अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार विष ब्रह्म विवरण सत्य हैं। | |
| दिनांक : 31.03.2000 | केलाश चन्द्र श्रीमाली (प्रकाशक) |

यदि आप यहां पर्याप्त नहीं रहते हैं तो वामपात्र सामग्री की ही विलीन विवरण सत्य हैं जिसके लिए आप विवरण सत्य हैं कारबाह, फोन : ०२९१-४३२२०९ या टेलीफोन : ०२९१-४३२२०९ या आपको लिए जाने की जाग्रत्त नहीं है।

शक्ति उद्भवं भय नाशनं

शक्ति के उद्भव से भय का नाश होता है।

कालाहमी : 26.5.2000

बटुक भैरव जयंती : 11.6.2000

तीव्र प्रभाव युक्त

भैरव साधना



लिख्यम मेरव साधना जलदी से सिद्ध होने वाली है। 'तत्रात्मोक' मेरव शब्द को उत्पन्नि 'भैशीमादिभि अवतीति भैरव' अर्थात् शीषण साधनों से भी रक्षा करने वाले भैरव हैं। 'शिव महापुराण' में बताया गया है कि भैरव भगवान शिव के अवतार हैं—

भैरवः धूर्णस्थपते हि शंकरः पश्चात्मकः।

मूढास्ते वै न जानन्ति मौहिता शिव मात्रवदा॥

अगले ये माह मेरव साधनाओं के लिये विशेष उपयुक्त हैं, इनमें भी कालाहमी (26.5.2000) और बटुक भैरव जयंती (11.6.2000) किसी भी प्रकार की भैरव साधनाओं के लिये श्रेष्ठतम द्विष्ट हैं। आगे छः साधनाएं प्रस्तुत की जा रही हैं, जिन्हें वर्ष धर में कभी भी सम्पन्न कर सकते हैं, परन्तु इन द्विष्टों पर प्रारम्भ करना विशेष अनुकूल है।



करने के लिये यह साधना अनुकूल रिक्ष मानी जाती है।

३. मानसिक तनावों और धर के लड़ाइ-जागड़े, गृह क्लेश आदि को निर्मूल करने के लिये यह साधना उपयुक्त है।

४. आगे बालों किसी बाधा या विपत्ति को पहले से ही हटा देने के लिये यह साधना एक श्रेष्ठ उपाय है।

५. राज्य से आने वाली हर प्रकार की बाधाओं या सुकर्म में विनाय प्राप्त करने के लिये यह श्रेष्ठतम साधना है।

६. इस साधना से साधक की मध्यपति को चोर-लुटेरों से भय नहीं रह जाता, चोर उस ओर नगर भी नहीं करते।

साधना विधान

इस साधना को 11.6.2000 या किसी भी दशमी को प्रारम्भ करें। अपने सामने काले तिल की ढेगी पर 'बटुक भैरव यंत्र' को स्थापित करें। धूप, दीप जलाकर यंत्र का लिन्दूर से पूजन करें। दोनों हाथ जोड़कर बटुक भैरव का ध्यान करें—

अ 'अप्रैल' 2000 मंत्र-तत्र-यंत्र विज्ञान '37' ॥

भवत्या नवाभिं बदुकं तरुणं विनेत्रं,
कामं प्रदानं वरं कपालं त्रिशूलं दण्डान्।
भवतार्ति नाशं करणे वधतं करेषु,
तं कोस्तुभा भरणं भूषितं दिव्यं वेहम् ॥

**Om Hreem Battuksay Aupad Eddhnarannasy Kuru Karu
Battuksay Hreem Om Swaha**

**Om Hreem Battukasy Aapad Iddhaareenay Kuru Kuru
Battukasy Hreem Om Swakar**

साधना समाप्ति के बाद यथा व माना का जल में विसर्जित कर दें। शीघ्र ही अनुकूलता प्राप्त होती है।

साधना सामग्री पैकेट - 170/-

उन्मत्त भैरव साधना

कश्मीर में अमरनाथ के दर्शन करने के बाद साधक उन्मत्त भैरव के भी दर्शन करते हैं, यह प्रसिद्ध भैरव पीठ में से एक पीठ है, शंकराचार्य ने स्वयं इस पीठ को स्थापना कर इस मूर्ति का प्राण संजीवन किया था। अमरनाथ मन्दिर के दक्षिण में लगभग आधा किलोमीटर आगे उन्मत्त भैरव की पीठ है। इस पीठ से सम्बन्धित रौकड़-हणारों घटकारिक कथाएं भारत में विख्यात हैं। कहते हैं कि यदि साधक अद्वा के साथ नंगे पांव इस पीठ तक पैदल जाकर उन्मत्त भैरव को भोग लगाता है, तो उसकी मनोकामना पूर्ण होती है। इस भैरव मन्दिर के पीछे के भाग में गर्म पानी का स्रोता है, इस पानी में नहरें से किसी भी प्रकार की डाइबिटिंग या ज्वांस की बीमारी ऐं और भी प्रकार के रोग दूर हो जाते हैं। उन्मत्त भैरव का स्वरूप ही रोग हर्ता और कल्पाणकारी होता है।

साधना के साथ

१. इस साधना को करने से दीर्घ काल से ठीक न हो रही बीमारियों पर भी नियंत्रण प्राप्त होता है, तथा शीघ्र ही रोग का निवारण होता है।

२. श्रेष्ठ सन्तान की प्राप्ति के लिये मी इस साधना को बहुत से व्यक्तियों द्वारा सफलता पूर्वक आगमाया गया है।

साधना विद्यालय

इस साधना को किसी भी सोमवार की सात्रि से प्रारम्भ करना चाहिये। साथक सफेद धोती पहन कर तेल का एक दीपक प्रज्ञवलित कर ले। दीपक के सामने किसी तम्भ पात्र में 'उम्मत भैरव यंत्र' (ताडीज) को स्थापित करें। सार्वजन के सामने अक्षत की एक ढेरी बगाकर उसपर 'शुभ रुक्मिणी मणि' स्थापित करें। दोनों हाथ जोड़कर भैरव ध्यान सम्पन्न करें—

आच्छा भैरव भीषणो निगदितः श्री कालराजः क्रमाद्
श्री संहारक भैरवोऽप्यथ रु रुभ्यो-न्मत्तको भैरवः ।
क्रोधप्रचण्ड उन्मत्त भैरव वरः श्री भूत नाथसत्तो,
ज्ञाप्ती भैरव मर्त्यः प्रतिदिनं दद्धः सदा मंगलम् ॥

फिर दाहिने हाथ में जल लेकर संकल्प करे कि—
 “मैं अमुक नाम, अमुक गोत्र का साधक अपने (अयवा परिवार
 के किसी सदस्य के लिये) लिये उन्नत भैरव की साधना में
 प्रव्युक्त हो रहा हूँ, शिव के अवतार भगवान भैरव मेरे रोगों का
 शमन करे (अयवा श्रेष्ठ सन्तान प्राप्ति का वरदान है)” ऐसा
 बोलकर जल को भूमि पर छोड़ दें और तावीज व मणि पर
 काजल एवं सिं-दूर से तिलक करे। फिर ‘खेफट इकीक माला’
 से दो सप्ताह तक निम्न मंत्र का नित्य ५ माला जप करे—
 उन्नत भैरव मंत्र

॥ ਤੁਝੇ ਤੁ ਉਨਮਜ਼ਾਵ ਪ੍ਰਿ ਪ੍ਰਿ ਮੈਰਦਾਵ ਜਮੁ ॥

Om Uc Ummatiyan Bhram Bhram Bheiravay Namah

दो सप्ताह बाद माला व मणि को जल में विसर्जित कर दें तथा तावोज को सफेद धागे में पिरोकर रोगी के गले (यदि रोग मुक्ति के लिये प्रयोग किया गया हो) या मां (यदि सन्तान प्राप्ति के लिये प्रयोग किया गया हो) के गले में धारण करा दें। एक माह धारण करने के बाद जल में विसर्जित करें।

साधना सामग्री पैकेट - 390/-

कालभैख साधना

भैरव का नाम भले ही डरावना और तोक्षण लगता हो, परन्तु अपने साधक के लिये तो भैरव अत्यन्त सीम्य और रक्षा करने वाले देव हैं। जिस प्रकार हमारे बांडी गार्ड लख्ये ढील ढील बाले भयानक और बन्दूक या शस्त्र साथ में रखकर चलने वाले होते हैं, पर उसमें हमें भय नहीं लगता। ठीक उसी प्रकार उनकी बजह से भैरव भी हमारे जीवन के बांडी गार्ड की तरह हैं, वे हमें किसी प्रकार से तकलीफ नहीं देते अपितु हमारी रक्षा करते हैं और हमारि लिये अनुकूल स्थितियाँ पैदा करते

पैरव साधना सम्पन्न करते समय साधक को एक कटीरी में धी और गुड़ मिलाकर नेवेद्य अवश्य अर्पित करना चाहिये। इससे पैरव प्रसाद होता है।

साधना काल में यदि ताजी रोटी में धीं को चुपड़ कर कुसे (भैरव याहन) को खिलाया जाये, तो भैरव प्रसन्न होते हैं।

५। यह साधना सरल और सीध्य साधना है, जिसे पुरुष व स्त्री कोई भी बिना किसी महसून के सम्पन्न कर सकता है। नव्य प्रदेश के उज्जैन शहर में आज भी काल भैरव एक मन्दिर है, जिसे 'चमत्कारों का मन्दिर' कहा जाता है। तंत्र अनुभूतियों के सैकड़ों सत्य घटनाएं इससे जुड़ी ही हैं।

साधना के लाभ

१. तांत्रिक ग्रंथों में इसे शब्द स्तम्भन की व्येष्टि साधना के रूप में प्रकल्प से संबोधित किया गया है।

२. यदि शत्रुओं के कारण अपने प्राणों को संकट हो अथवा परिवार के सदरयों या भात-बच्चों को शत्रुओं से धर्य हो, तो वह साध्या एक प्रकार में आत्म रक्षा करने का दावा करती है। शत्रु की बुद्धि ज्ञान, हो भष्ट हो जाती है और वह परेशान करने को सोचता ही बन्द कर देता है।

३. यदि जाप ऐसा ग्रन्थ कार्य करते हैं, जहां हर क्षण मृत्यु का स्वनाम बना रहता हो, एकसीडेप्ट, दुर्घटना, आगजनी, गोली-बन्दूक, इस्तम में या किसी भी प्रकार की अकाल मृत्यु का भय हो, तो 'काल भैरव साधना' अत्यन्त उपयुक्त सिद्ध होती है। वस्तुतः यह काल को ठाकुर की साधना है।

४. स्वेच्छा इस साधना को अपने बच्चों परं सुहाग की दीर्घियि परं प्राणरक्षा के लिये भी सम्पन्न कर मुक्ती है।

साथीगा विद्यालय

कालान्टरी का रात्रि काल यक्ष को उपने अधीन करने की रात्रि है, काली और काल मैरव दोनों की संयुक्त सिद्धि रात्रि है। इस साधना को 'कालान्टरी' (26.5.2000) या किसी भी अन्टरी को रात्रि में प्रशस्ति करना चाहिये। साधक लाल (अथवा पीली) धोती धारण कर लें। स्वियां लाल साफ़ी धारण कर सकती हैं। इसके बाद लाल रंग के आसन पर बैठ कर दक्षिण दिशा की ओर मुख्य कर लें। उपने सामने एक बाली में कुरुक्षेत्र पासिन्दूर में 'ॐ भं भैरवाय नमः' लिख दें। फिर बाली के मध्य 'काल भैरव यश' और 'महामूर्त्युजय गुटिका' को स्थापित कर दें। जोहे को कुछ कीले उपने पास पहले से ही मंगा कर रख लें। यदि आपके परिवार में घान भद्रस्य हैं, तो उन सबकी रक्षा के लिये सात कीले फौजिन होंगी।

प्रत्येक कील को गौली के टुकड़े से बांध दें। बांधते समय भी 'उठ भै भैसाथ नमः' का जप करें। फिर इन कीलों को अपने परिवार के जिन सदस्यों की रक्षा कामना आपको करनी है, उनमें से प्रत्येक का नाम एक-एक कर बोलें और साथ ही एक एक कील यंत्र पर बढ़ाते जाएं। यह अपने लिये आप रक्षा लघ या कवच प्राप्त करने का प्रयोग है। फिर भैस के निम्न स्तोत्र मंत्र का १२ बार उच्चास्पत करें—

ये ये ये यक्ष रूप दशा विशि अदिति भग्नि कम्पायमन् ।

सं सं सं संहार प्रति शिर मकांड जटा शेखर चन्द्र विनाम् ।

दं दं दं दीर्घ काय विकाय नस माय उद्धर्योम करान् ॥

ॐ तत् त्वं पाप नार्थं प्रणामन् सदवेदं शैववेदं शैवायाम् ॥

दायें हाथ की गुट्ठी में काली सरसों लेकर निम्न मंत्र का ११ बार उच्चारण करें—

ॐ काल भैरव, उमशान भैरव, काल रूप काल भैरव!
मेरो थेरी तेरो आहार रे। काढ़ि करेगा चखन करो कट कट।
ॐ काल भैरव, बदुक भैरव, भूत भैरव, महा भैरव, महा भूत
यिनाशन देवता। सर्व भिजिभवित।

फिर अपने सर पर से सरसों की तीन बार धुमाकर सरसों के वानों को एक कागज में लपेट कर रख दें। इसके बाद निम्न मंत्र का एक घण्टे तक नप करें—

काल भैरव मंत्र

॥ उमे भैरवाय वं वं वं हां क्षरो नमः ॥
 Om Bhairavay Vam Vam Vam Hraam Kahrom Namah
 यह केवल एक दिन का प्रयोग है। जप के बाद साधन
 आसन से उठ जाये, और भैरव के सामने जो भोग रखा है
 उसे तथा धूप पर नो कीले चढ़ाइए हैं, उन्हें और सरसों के दान
 को दंत व शटिका के साथ लेकर किसी चौराहे पर रख आएं।

सांख्या सामग्री पैकेट - 360 /

भैरव प्रत्यक्ष दर्शन साधना

१. इस माध्यमा रो भैरव शीघ्र प्रसन्न होते हैं, और साधक को मनोविधि वरदान देने में समर्थ होते हैं।

२. मैरव के प्रत्यक्ष दर्शन के लिये यों तो अन्य कई और साधनात्मक विद्याएँ भी हैं, परन्तु इस साधनाका प्रयोग मैरव के दर्शन और प्रत्यक्षीकरण के लिये किया जाना है।

३. साधक को पूरे जीवन भर के लिये मैरेव सिद्ध हो जाने हैं और निरन्तर इर प्रकार के खतरों से उसकी रक्षा करते हैं तथा जब भी साधक को आवश्यकता पड़े तब मैरेव सहायता को उपल्ब्धि होते हैं।

डिप्पे
असक

बात न
उसे उ
प्रयोग
साधा

साधन
बीच
साधन
साधन
राक्षत
विद्या
और
शत्रु व
उच्चा
ले। ति

मारव
कस्य
तं, स
भैरव,
सर्वसि

माला
विकर
॥
Om B
विसि

मे सा
महावि
जाना

साधना विद्यान

इस साधना के लिये काले वस्त्रों को धारण करना चाहिये तथा काले आसन का ही प्रयोग करना चाहिये। साधना काल में ब्रह्मचर्य भालन भी अनिवार्य है। इस साधना को 22.6.2000 अथवा कृष्ण पक्ष की चंचली से प्रारम्भ किया जा सकता है। यह रात्रि कालीन साधना है। संन्यासियों के पक्ष्य इस साधना को केवल नवीं टट, शमशान अथवा शिवालय में ही करने का विधान है, परन्तु गृहस्थ साधकों के लिये इस साधना को घर रात्रि के समय किसी एकान्न कक्ष में बिना किसी संशय के सम्पन्न किया जा सकता है।

अपने सामने सिन्दूर की एक ढेरी पर 'भैरव यंत्र' को स्थापित करें। फिर गौली भिंडी से एक छोटी सी मानवकार मूर्ति बनाएं और उसे सिन्दूर से रंग कर यंत्र के ऊपर स्थापित कर दें। संक्षिप्त मुरु पूजन कर लें। फिर बाएं हाथ में अक्षत के कुछ ढाँचे लेकर आत्म रक्षा मंत्र का सम्पर्क उत्तरारण करने हुए अक्षत को चारों दिशाओं में बिखरे दें—

आत्म रक्षा मंत्र

ॐ हां ही हूं नमः पूर्वे । ॐ हां ही हूं हो नमः आमेन्ये । ॐ ही श्री नमः दक्षिणे । ॐ ग्लू ब्लू नमः नैकृत्ये । ॐ प्रू प्रू सं सः नमः पञ्चिमे । ॐ ध्रौ ध्रौ नमः वायव्ये । ॐ ध्रौ ध्रौ ध्रौ ध्रौ फट् नमः ऐशान्ये । ॐ ग्लू ब्लू नमः ऊर्ध्वे । ॐ ध्रौ ध्रौ ध्रौ नमः अधोवेशे ।

इसके बाद काजल से अपने मस्तक पर तिलक करें और यंत्र तथा मानवाकृति पर तिलक करें। अपने ललाट पर, यंत्र तथा मानवाकृति पर सिन्दूर से बिन्दी लगाएं। फिर 'काली इक्षीक माला' से मंत्र जप प्रारम्भ करें। इस साधना में प्रथम मन्त्र अत्यन्त तीक्ष्ण और शक्तिशाली है, अतः केवल दृढ़ चित्त और साहसी व्यक्तियों को ही इस साधना को करना चाहिये। स्त्रियां, वृद्ध, या बालक इस साधना को न करें। यह रात्रिकालीन साधना है और इसमें एक लाख मंत्र जप का अनुष्ठान करना होता है। इस हेतु नित्य किनाना मंत्र जप करना है, यह अपनी सुविधानुसार निर्धारित कर लें। बाहें तो चालीस दिन तक नित्य २१ माला भी जप कर सकते हैं।

भैरव प्रत्यक्षीकरण मंत्र

ॐ हां ही हूं हः । क्षां क्षीं क्षुं क्षः । ख्वां ख्वीं ख्वुं खः । ध्रां ध्रीं
ध्रुं ध्रः । भ्रां भ्रीं भ्रुं भः । भ्रों भ्रों भ्रों भ्रों भ्रों भ्रों भ्रों । श्रों श्रों श्रों श्रों श्रों श्रों । हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं हुं
फट् सर्वं तो रक्ष रक्ष रक्ष रक्ष भैरव नाथ नाथ हुं फट् ।

साधना काल में जप करते समय भैरव की धुधली

आकृति अनुभव हो सकती है। जिस भी दिन किसी प्रकार की अनुभूति हो, उसके दूसरे दिन भैरव को उस मूर्ति (भिंडी की मानवाकृति) को नाले रंग का बल्ब अपित करें, उस तेज में सिन्दूर मिलाकर तिलक लगावें। नैवेद्य के साथ आठ और गुड़ का बना हुआ पुआ, तेल से चुपड़ी हुई आटे की रोटी, गुड़, मीठे पकोड़े, उड़द की दाल के बने पकोड़े शाली में भगाकर धूप बस्ती जलाकर अपित करें। फिर मंत्र जप प्रारम्भ करें।

यदि उस दिन भैरव के दर्शन न हो, तो दूसरे दिन भी ऐसी ही करें। यदि दूसरे दिन भी दर्शन न हो, तो तीसरे दिन भी करें, तीसरी रात्रि में अवश्य ही भैरव के दर्शन हो जाते हैं। फिर जब भैरव वरदान मांगने को कहें, तब साधक अन्यन्त विनम्र भाव से अपनी कामना प्रकट कर दें। इस साधना के बाद कोई भी शत्रु, तांत्रिक या कोई भी व्यक्ति फिर साधक पर छावी नहीं हो पाता है। साथ ही साधक को कई प्रकार की शक्तियां भी प्राप्त हो जाती हैं।

साधना समाप्ति के बाद यंत्र व माला को किसी निजीन स्थान में रख आयें।

साधना सामग्री पैकेट - 410/-

विकराल भैरव साधना

वर्तमान समय यहां की दृष्टि से पर्याप्त विनायनक है। पिछले कई वर्षों से ज्योतिशिरों में वर्ष २००० के मई माह में पढ़ने वाले षड्यजी योग, गुलाई में तीन ग्रहण आदि कुयोगों को लेकर विश्व पुरुष छिड़े, घातक शस्त्रों के दुरुपयोग तथा इन यहां की वजह से भोग्य प्राकृतिक प्रक्रियों में भयंकर जनधन की हानि की आशंका व्यक्त की जा रही है। यह आशंका निर्मूल भी नहीं है, क्योंकि विश्व भर में इसी तरह का वातावरण बहुत पहले से ही बनने लगा है। व्यक्तिगत रूप से भी ऐसे कुयोगों की चपेट में ६० प्रतिशत से अधिक लोगों के अनेकों आशंका होने से पूर्य गुस्तव ऐसे अनेक उपाय शिविरों और प्रविकार के माध्यम से प्रस्तुत कर रहे हैं, जिनसे ऐसे दुर्योगों के दुष्प्रभावों को यदि पूरी तरह रोका जाना सम्भव न भी हो, तो उसके दुष्प्रभावों का विकराल भैरव की साधना है।

साधना के लाभ

१. यह साधना केवल ग्रह बाधा से ही नहीं किसी भी प्रकार के तांत्रिक, मांत्रिक, दुष्प्रभावों, मूर्त-प्रेत बाधा, अथवा

दिव्येशम (जीवन में हताशा) या किसी भी प्रकार की असफलता जन्य निराशा को दूर करने के लिये रम बाण है।

२. यदि आपका कोई प्रियजन किसी कारण आपकी बात नहीं नाम रहा है, किसी अन्य के प्रभाव में आ गया है, उसे अपनी बात मनवाने के लिये भी इस साधना का अचूक प्रयोग किया जा सकता है।

साधना विधान

यह उत्तम साधना है। अतएव गुरु दीक्षा लेकर ही इस साधना में प्रवृत्त होना चाहिये। 7.4.2000 से 13.5.2000 के बीच किसी भी शुक्रवार, रविवार या मंगलवार की रात्रि में यह साधना प्रारम्भ करना ज्यादा अच्छा है। इसके अनिरिक्त इस साधना को किसी अपावस्था की रात्रि में भी प्रारम्भ किया जा सकता है। काले वर्त्त धारण कर, काले आळान पर दृष्टिंश दिशा की ओर मुख कर बैठ जाएं, अपने सामने 'भैरव गुटिका' और 'तांत्रोक्त नारियल' रख लें। जिस व्यक्ति की तंत्र बाधा, शत्रु बाधा या अन्य बाधा से मुक्ति चाहते हों, उसका नाम का उच्चारण कर दाएं हाथ की मुख्यी में सरसों के बाने लंब कर नें। फिर निम्न मंत्र बोलते हुए सरसों को बारों ओर फेंक दें—

ॐ आं ही ही ही सर्व बाधा नाशय नाशय मारय
मारय उच्चाटय उच्चाटय, मोहय मोहय, वशं कुरु कुरु सर्वार्थ
करुर चिदिरुपं त्वं विकरात्। काल भक्षणं महावेद स्वस्पं
त्वं, सर्व सिद्धिभवेत्। ॐ विकरालं भैरव, महाकालं भैरव, कालं
भैरव, महाभैरव, महाभव, सर्व तंत्र बाधा विनाशनं देवता।
सर्वसिद्धिभवेत्।

फिर 'काली हकीक माला' से निम्न मंत्र की १४ माला नित्य ८ दिन तक जप करें—

विकराल भैरव मंत्र

॥ उ॒ँ भ॒ँ भ॒ँ हु॑ हु॑ विकराल भैरवाय भ॒ँ भ॒ँ हु॑ हु॑ फ॒ट॥
Om Bhram Bhram Huni Hum Vikaral Bheiravay Bhram
Bhram Hum Nam Phat

साधना समाप्ति के बाद समस्त सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

साधना सामग्री फैक्ट - 330/-

स्वर्णकर्षण भैरव

'सद्यामल तंत्र' में उल्लेख है कि प्रत्येक महाविद्या से सम्बन्धित परम्पर एक-एक भैरव भी हैं। भगवती कमला महाविद्या से सम्बन्धित भैरव को 'नारायण भैरव' के नाम से जाना जाता है। जिस प्रकार भगवती कमला महालक्ष्मी का ही

ऋ 'अप्रैल' 2000 मंत्र-तंत्र-त्रिवेदि विज्ञान '41'

स्वरूप है, ठीक उसी प्रकार नारायण भैरव भी दारिद्र्य मिवारण, धन प्रदाता, और सुख सीधार्य विद्धि आदि गुणों से युक्त है। इन्हीं गुणों के कारण इह है स्वर्णकर्षण भैरव भी कहा जाता है, जिनकी साधना अधिक तीव्र और ज्यादा अचूक है।

साधना के लाभ

१. इस साधना से साधक को अकस्मात् स्वर्ण की प्राप्ति नहीं होने लग जाती परन्तु आकस्मिक धन प्राप्ति, आप वृद्धि के साधनों में वृद्धि भावि के सुयोग जरूर बनने लगते हैं।

२. यदि आपका कोई धन रक्का हुआ है या कंसा हुआ है अथवा कोई आपसे धन उधार ले गया है और वापस करने नाम नहीं ले रहा है, वा आनाकाना कर रहा है। इन सभी स्थितियों के लिये स्वर्णकर्षण भैरव मंत्र अनुकूल है।

३. यदि व्यक्ति कण के दल-दल में कंस गया हो, तो उसे कण मुक्ति मिलती है, उसकी विद्वता दूर होती है।

साधना विधान

रात्रि में स्नान कर पीली धोती धारण कर लें तथा उत्तर दिशा की ओर मुख कर बैठ जाएं। सुगन्धित धूप व अग्रसरसी जला लें। संक्षिप्त मुकु पूजन कर अपने सामने 'स्वर्णकर्षण भैरव यत्र' रख लें। उस पर कुंकुम से एक त्रिकोण बनाएं और उसके तीन कोनों में '३ कमला बीज' रखें।

फिर दोनों हाथ जोड़कर भैरव का ध्यान करें—

ॐ करकलित कपालः कुण्डली वण्डपाणिम्,
तरुण तिमिर नीलो व्याल यज्ञोपवीती ।
क्रतु समय सप्तर्णा विच्छ विच्छेद हेतु,
र्जयति भैरवनाथ सिद्धिदः साधकानाम् ॥

इसके बाद 'कमलगड़ की माला' से निम्न मंत्र का १६ दिन तक नित्य ३ माला मंत्र जप करें—

स्वर्णकर्षण भैरव मंत्र

॥ उ॒ँ ऐं कली कली कलूं हां हीं हैं सं व आपद उद्भारणाय
उरजामल बद्धाव लोकेश्वराय स्वर्णकर्षण भैरवाय मम
दारिद्र्य विद्युष्याय उ॒ँ हीं हीं महाभैरवाय नमः ॥

Om Ayam Kleem Kleem Klem Hreem Hreem Itram Sab
Vam Aspad Uddhaarannay Ajamul Baddhay
Lokeswaray Swarnuakarshannay Bheiravay Mama
Daaridrya Vidveshaanay Om Hreem Mahaas Bheiravay
Namah

जब साधना समाप्त हो जाए, तब यंत्र व माला को जल में विसर्जित कर दें तथा कमला बीजों को एक पीले कपड़े में बांध कर जिसी मन्दिर में चढ़ा दें।

साधना सामग्री फैक्ट - 480/-

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान पत्रिका आपके परिवार का अग्रिम तंत्र है। इसके साथनात्मक सत्य को समाज के सभी स्तरों में सगान रूप से दर्शीकर किया जाया है, क्योंकि इसमें प्रत्येक कार्य की समस्याओं का स्वल्प और सहज रूप में समाप्ति है।

गौरवशाली हिन्दी मासिक पत्रिका

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान की

वार्षिक सदस्यता

इस पत्रिका की वार्षिक सदस्यता को प्राप्त कर आप यार्योंगे

अद्वितीय और विशिष्ट उपलब्ध

गृह कलेश गिरुति यंत्र

जिस तरह आज शिक्षा बढ़ती जा रही है, जागरूकता बढ़ती जा रही है, उसी दर से मानवीय मूल्यों में दृष्टि नहीं हो रही है। यही कारण है, कि आज पति और पत्नी दोनों पढ़े-लिखे और शिक्षित होने के बावजूद भी एक दूसरे से प्रेम पूर्ण सम्बन्ध दीर्घ काल तक बनाये नहीं सक पाते हैं। शाहरी जीवन में घरेलू तनाव एक आम बात सी ही चुकी है, पति कुछ और सोचता है, तो पत्नी कुछ और ही उम्मीदें बाधे रहती है, उसकी कुछ और ही दुनिया होती है। पति-पत्नी एक गाड़ी के दो पहिये होते हैं, दोनों में असनुलग हुआ तो असर पूरी गाड़ी पर पड़ता है। और आपसी कलेश का विपरीत प्रभाव बर्द्धों के कीमल मन पर पड़ता है, जिससे उनका विकास क्रम अवरुद्ध हो जाता है। यदि पति-पत्नी में आपसी समझ न हो, तो भाई-बन्धु या रिश्तेदार, अन्य सम्बन्धियों के कारण संयुक्त परिवारों में आये दिन जित्या कलेश की स्थिति बनी रहती है। इस प्रकार के घरेलू कलह का दोष किसी एक व्यक्ति को नहीं दिया जा सकता, कई बार भूमि दोष, स्थान दोष, यह दोष, भावय दोष तथा अशुभ चाहने वाले शत्रुओं के गुप्त प्रयास भी सम्मिलित रहते हैं। कारण कुछ भी हो, इस यंत्र का निर्माण ही इस प्रकार से हुआ है, कि मात्र इसके स्थापन से बातावरण में शान्ति की महक बिखर सके, सम्बन्धों में प्रेम का स्थापन हो सके, और लहाई-झगड़ों से मुक्ति मिले तथा परिवार के प्रत्येक सदस्यों की उन्नति हो।

साधना विधि – किसी मंगलवार के दिन इस यंत्र को स्नान करने के पश्चात प्रातः कल अपने पूजा स्थान में स्थापित कर दें। नित्य प्रातः यंत्र पर कुंकुम व अक्षत चढ़ाएं तथा 'ॐ कर्त्ता कलेशनाशाय कली' ऐं फट' मंत्र का 'ॐ बार उच्चारण करें, तीन माह तक ऐसा करें, उसके बाद यंत्र को जल में विसर्जित कर दें।

यद्युल्म उपहार तो आप पत्रिका का वार्षिक सदस्यता आपने १५० रुपये, रिटेलर या रखजल को बनाकर ही प्राप्त कर सकते हैं। यद्युल्म पत्रिका के सदस्य नहीं हैं, तो आप स्वयं भी रखजल बनाकर यह उपहार प्राप्त कर सकते हैं। आप पत्रिका में प्रकाशित योटटकार्ड नं ४ को रपए अक्षरों में भरकर हमारे पास भेज दें, शेष कार्य हम उचित करेंगे।

वार्षिक सदस्यता शुल्क - 195/- छाक स्वार्थ अंतिरिक्त 30/- Annual Subscription 195/- + 30/-postage



मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर - 342001, (राज.)

संस्थान : Mantra-Tantra-Yantra Vigyan, Dr. Shrimali Marg, High Court Colony, Jodhpur-342001, (Raj.), India.

Phone: 0291-432209 Fax: 0291-432010

शिष्य धर्म

... धर्म कोई नड़ धारणा नहीं, मनुष्यों के समूह को भी धर्म नहीं कहते... क्योंकि धर्म कोई मृत वस्तु नहीं होती, किसी विशेष बाद की चट्ठान पर कपड़े धोते रहने से कपड़े उबले नहीं होते...

- ऐ शब्द है पूज्यपाद गुरुदेव के जिन्हें उनकी अमर कृति 'गुरु-सूत्र' से यहां उच्छृंत किया गया है। जो किसी भी शिष्य के लिए श्रीमद्गवतभीता से कम पवित्र पुस्तक नहीं है।

पूज्यपाद गुरुदेव की धर्म के सम्बन्ध में दो टूक शब्दों की गई टिप्पणी हमें यह सोचने के लिए विवश कर देती है कि यदि धर्म किसी विशदता में जाकर सम्पूर्ण होता है तो क्या यही बात शिष्य धर्म के प्रति भी व्यवहृत नहीं होगी?

क्या अपने विशद स्वरूप में शिष्य धर्म केवल कुछ एक नियमावलियों के पालन कर लेने के पश्चात इति पर पहुंच जाता है अथवा किसी विशदता में अवस्थित होता हुआ सम्पूर्ण होता होगा?

पूज्यपाद गुरुदेव ने अपने शिष्यों को सदैव नवीन धृष्टिकोण से सोचने की चेतना दी है और उन्होंने ही चेतना दी थी कि गुरु का तात्पर्य किसी व्यक्ति से न होकर उस जीवनता से होता है जो प्राणशेतना के रूप में शिष्य को निरंतर गतिशील बनाए रखती है।

समाज के संस्कारों में रचे-पचे आए शिष्य को गुरु सानिध्य में रहने पर मर्यादा सिखाने के लिए यह आवश्यक था किसी नियमावली की रचना की जाए जिससे सभी शिष्यों के लिए एक आचार-संहिता बन सके किंतु इसका यह अर्थ तो नहीं कि शिष्य सदैव उन्हीं नियमों के धेरे में बंधा धूमता रहे?

इस प्रकृति में सब कुछ परिवर्तनशील है और प्रकृति में हो रहे परिवर्तन के साथ वे ही परिवर्तित हो सकते हैं जो प्रकृति से निरंतर सम्मंजस्य बनाए रखने की कला को जानते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेव ने एक प्रबन्धन में कहा है कि जिस दिन शिष्य मेरे सामने पहली बार आकर खड़ा होता है मैं उसी दिन उसके बारे में समझ जाता हूं कि वह कहाँ तक मेरे साथ चलेगा लेकिन मैं मुंह से कुछ नहीं बोलता।

... और कोई शिष्य कैसे सदैव गुरु चरणों में नत बना रह सकता है, इसके लिए पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा ही बताया गया एक सूत्र है कि यदि शिष्य को सदैव यह स्मरण रहे कि जिस प्रश्न दिन वह गुरुदेव से मिला था उस दिन उसकी क्या मनस्थिति थी तो उसे कभी प्रश्न नहीं हो सकता है।

वास्तव में शिष्य धर्म एवं गुरु धर्म दो पृथक स्थितियां नहीं हैं। जिस प्रकार से किसी भी नदी का अस्तित्व अंततोगत्वा समुद्र में मिल कर सम्पूर्ण होता है उसी प्रकार से किसी भी शिष्य की पूर्णता तब होती है जब वह अपने गुरु में विसर्जित हो जाता है। अर्थात् उनके समझ संकल्प-विकल्प से रहित हो जाता है।

नदी जब तक समुद्र में विसर्जित नहीं होती है तब तक उसका धर्म होता है निरंतर छटपटाते हुए किनारों को तोड़कर बहते रहना और जब वह विसर्जित हो जाती है तो उसका धर्म बन जाता है समुद्र के प्रवाह में घुल-मिल कर उमड़ते रहना।

आइए इस निरिवल जयंती के पर्व पर शिष्य धर्म के प्रतिपूरक गुरु धर्म की चर्चा करें क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव सदैव यही कहते थे कि अभी बहुत मार्ग तय करना है और मेरे कार्य तुम्हें ही पूरे करने हैं।

- श्रीगगृ

गुरु वाणी

की ते
मेरे स
पहिच
तुम्हा
पैदा

किया
पगड़
पगड़

में रि
होता

रूप
है, उ
शि
निग
अल
गय
गी,
है।
नह
है।

हू
यह
से
उस
वह
कम
बान
नह
है,

नह

ॐ जो सब कुछ दे दे, जो सब कुछ पूर्ण कर दे, जो शिष्य को एक कण से आकाश बना दे, जो एक मामूली से वाष्प को बादल बना दे, गमोत्री बना दे, वह गुरु है।

ॐ जीवन का मूलभूत तात्पर्य ही विरह है... और विरह के माध्यम से ही एक शिष्य पूर्ण रूप से अपने गुरु में आत्मसात हो सकता है। गुरु तक पहुंचने के लिये शिष्य के अन्दर एक बेग, एक तीव्रता होनी चाहिये, मन में एक ज्वार होना चाहिये कि उत्तू और मिल जाऊँ।

ॐ जीवन तो फना होने की ललक है, दीवाना बन जाने का जुनून है... और जो ऐसा नहीं कर सकता वह तो जमा हुआ बर्क है, ऐसा जीवन वहती हुई नदी नहीं बन सकता, जो अपने आप में सिमट कर रह गया। उसके जीवन का कोई अस्तित्व नहीं है।

ॐ और शिष्य वह है जो जिसमें एक तखफ हो, एक बैवेनी होनी चाहिये, वह अपने आप को कितना ही काढ़ करे, मगर हर क्षण उसके मन में एक मायना, एक विन्तन विवार बना रहे कि मुझे अपने जीवन में वह प्राप्त करना ही है, जो मेरा लक्ष्य है। क्योंकि मैं पगड़ण्डी के प्रारम्भ से शुरू हुआ हूँ और मुझे पगड़ण्डी के अंत तक पहुंचना है और पगड़ण्डी के अंत तक पहुंचने में ही मेरे जीवन की पूर्णता है। ऐसा विन्तन शिष्य का हो सकता है।

ॐ एक सामान्य मनुष्य का ब्रह्म में लीन हो जाना, अपने आप की परिपूर्णता है, वह एक जर्रे को आफताब बना देने की क्रिया है, गुरुता है, श्रेष्ठता है, दिव्यता है। और जब शिष्य के जीवन में ऐसा हो जाता है, तब वह बैरान्य हो जाता है, तब वह राहकों पर उत्तर जाता है और ज्ञानता हुआ आगे बढ़ता है। लोग उसे पागल कहते हैं, पत्थर फेंकते हैं, गालियां देते हैं, जहर देते हैं, डाकझोरसे हैं, मगर वह इस बात की परवाह नहीं करता।

ॐ जब तक वह अपने इष्ट से गुरु से साक्षात् नहीं कर लेता, तब तक उसके अन्दर विरह की एक आग धधकती रहती है, और उसका इलाज फिर किसी दैदार के पास नहीं होता, उसका इलाज तो इष्ट के पास ही होता है, प्रिय के पास ही होता है, कि जब वे आयेंगे तब मैं उसमें अपने आप को समाहित कर दूँगा, कर दूँगी। जब प्रियतमा का यह भाव साधक में आ जाता है, तब उसमें कोमलता आ जाती है।

ॐ भावनाओं की खुगारी में यह केवल एक बात कहती है, कहता है कि यदि मैं जीवन में उस ब्रह्म को प्राप्त नहीं कर सका, तो फिर जीवन का मकसद ही क्या रह जायेगा, जीवन का उद्देश्य ही कुछ नहीं रह जायेगा। और मैं उसे प्राप्त करने के लिये सब कुछ खोने को तैयार हूँ, अपने आप को फना कर देने के लिये तैयार हूँ, अपने आप को विसर्जित कर देने को तैयार हूँ। मैं तो तैयार हूँ, वह मुझे मिले, क्योंकि उनका मिलना ही मेरे जीवन की पूर्णता है।

ॐ जिस दिन यह दिल काबू में नहीं रहे, जिस दिन लोग समझायें, पावों में बैड़ियां लाल दें, और उसके बावजूद भी वह रुक नहीं सके... तब समझना चाहिये कि उसका हृदय जागत हुआ है, तब समझना चाहिये कि उसके दिल में एक क्लान्ति की विनगारी पैदा हुई है, तब समझना चाहिये कि वह गुरु से एकाकार हो जाने के लिये और प्रमु में अपने आप को विसर्जित करने के लिये तैयार हो गया है और विसर्जित कर देने की यह क्रिया उस दिन प्रारम्भ होती है, जब उसका अपने हृदय पर काबू नहीं रहता।

ॐ जब जीवन गुरु से और इष्ट से एकाकार हो जाने की तीव्र प्यास पैदा हो जाती है, तब वह साफ कहता है कि तुम्हारा प्रेम मेरे सीने में दफन है, मैं तुम्हें जानता हूँ, मैं बहुत अच्छी तरह से तुम्हें लहिचानता हूँ, तुम कहो तो मैं इस बात को पूरी दुनिया में फैला दूँ, मैंने तुम्हारे प्यार को अपने हृदय में छिपा कर रखा है, मेरे हृदय में एक जज्बा पैदा हुआ है।

ॐ गुरु को प्राप्त करने की क्रिया है — वह है गुरु के अन्दर उत्तरने की क्रिया, और उत्तरने के लिये कौन सा रास्ता है, कौन सी पगडण्डी है — वह पगडण्डी है प्रेम की, वह पगडण्डी है प्यार की, वह पगडण्डी है कना होने की, वह पगडण्डी है अपने आप को मिटा देने की।

ॐ जब गुरु से निकटता बनती है, तब उनकी धाद आते ही आंखों से आंसू छलक जाते हैं, आंखों के कोर में रिमटे आंसू की बूँद में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड समाया हुआ होता है, उस आंसू की बूँद में प्रेम का सागर लहरा रहा होता है . . . जो गालों पर लुढ़क कर नीते उत्तर जाती हैं।

ॐ अगर प्रिय का स्मरण हो, और आंख में आंसू झिलमिलाये ही नहीं तो फिर जीवन का कोई अर्थ ही नहीं यदि हम आंख बढ़ करें और प्रिय का एहसास ही न हो, तो फिर प्रेम ही कैसा हुआ? क्योंकि प्रेम तो सम्पूर्ण रूप से रिमटा हुआ एक अश्रुकण ही तो है, जो आंख की कोर से निकलता है और पूरे संसार में व्याप्त हो जाता है, अकङ्काश देता है, प्रेमी के मन को, आत्मा को, वह प्रेमी चाहे ईश्वर हो, वह प्रेमी वाहे गुरु हो।

शिष्य की उल्लाहना — गुरुदेव! खास निगाहों से तुमने गुड़ी देखा, देखा और मैं अलमस्त हो गया . . . और मैं अलमस्त हो गया तो अब गुड़ी इस दुनिया की परवाह नहीं नहीं है कि ये दुनिया गुड़ी क्या कहेगी और क्या नहीं कहेगी, इस बात की मुझे चिन्ता नहीं है। संसार की निगाह में मैं बुरा हो सकता हूँ, पर येरा हृदय तो गुलाब की तरह है, यह हो सकता है कि हया के कूर थपेड़ों से गुरदा गया हो। यह हो सकता है कि उसमें वह खिलखिलाहट, वह मुस्कराहट, वह छलछलाहट नहीं रही, यह तो तुम्हारा कसूर है, मेरा कसूर नहीं है, मगर उसके बावजूद मी मैं किसी के हृदय में खटका नहीं हूँ, किसी से अपने गम को कहा नहीं है, गुड़ी उम्मीद है कि तुम्हारी वह रहम नजर एक दिन फिर मेरी ओर उठेगी।

ॐ जिनको सर कटाना ही नहीं आता, जिसको अपने आप को लुटाना ही नहीं आता, उसके दिल में चोट कहाँ लग सकेगी, उसमें तड़फ और बेवैनी कहाँ से आ सकेगी . . . आशिकी में तो अपने आप को जला देना पड़ता है, रीद डालना होता है, और तब वहाँ जो अकुर फूटेगा, वह प्रेम का अकुर होगा।

ॐ यहाँ सब कुछ मिटा देने की क्रिया होगी, वहाँ प्रेम का पौधा पनपेगा। जो अपनी हस्ती को मिटा सकता है वह सब कुछ पा सकता है।

ॐ साधना में सिद्धि प्राप्त करनी है, तो तुम्हें प्रेम करने की कला भी सीखनी होगी, एक-एक सांस को उसे समर्पित कर देने की क्रिया सीखनी होगी। और जिस दिन से तुम गुरु से प्यार करने लग जाते हो, उस क्षण से वह सांस तुम्हारी नहीं होती, वह तो गुरु की अमानत होती है और गुरु उस सांस को तपस्या में बदल कर के तुम्हारे अन्दर समाविष्ट कर देता है।

— रात्नगुरुदेव परमहरा रवामी
विश्वालंश्वरसलब्द जी ■

ओंपूजा के पत्र

- शहडोल से संतोषी चन्देल ने सदगुरुदेव के प्रति अपने भावों को कविता के रूप में लिख गुरु चरणों में भेजा है— कहुं सखी जब मैं गुरु पूजन, सदगुरु के गोहे होवे बरसि। जो सदगुरु शरण में जाये, मनवाहित कल वो या जाये। जिस विन से गुरु नेह लगी, सब दुःख बह देराव गयो री।
- बिलासपुर (हि.प्र.) जिले के निवासी श्री कुलदीप चन्देल, जो कि दैनिक समाचार पत्र 'जनसत्ता' के संचाददाता है लिखते हैं— 'मेरा इकलौता पूजा दो बार मैट्रिक की परास्ता में केल हो चुका था, पढ़ाई से बिषुख था, शारारतों व गंधी संगत में ही समय व्यतीत करता था। मैं उसे समझा बुझा व मार-पीट कर हताश व निराश हो चुका था। इस बीच मैं मंत्र-तंत्र यंत्र विज्ञान परिका के माध्यम से गुरुदेव के सम्पर्क में आया।

इसे प्यार नहीं तो और क्या कहें?

नव वर्ष के प्रारम्भ में, उसके कुछ विन पूर्व और कुछ विन बाद तक कई पत्र, कई ग्रीटिंग कार्ड प्राप्त होते ही रहे, और हाक व्यवस्था की यह अनुकूल्या है कि कुछ कार्ड तो पूरे एक महीने बाद भी प्राप्त हुए। परन्तु जो भी हो, पूरे जनवरी अन्त तक देश भर से प्यार भरे कार्ड आते ही रहे, और पूर्ण गुरुदेव व माताजी के हाथों में आकर उन्हें मन्द मुस्कान लिखने के लिये विवश करते ही रहे, पूरे एक माह तक, किसका ऐस्य मात्र आपको ही है।

उडीसा से श्री जगन्नाथ हों, कर्नाटक से अजय भारद्वाज या ए.पी. बिंगे हों, हरियाणा से श्रीरामनाथ हों, उ.प्र से कृष्ण नारायण यादव हों, मुरेना, भ.प्र. से श्री सूशील श्रीवास्तव हों, पंजाब से मुख्तार सिंह गिल हों, राजस्थान से श्री माधव सिंह शेखावत हों, हिमाचल से सुरेश चन्द्र गुप्ता हों, या बिहार के प्रमोद महानन हों, बंगाल से सोतीश मुखर्जी हों, गुजरात के धीरेशमार्इ हों, विशेषों से भी कार्ड प्राप्त हुए और सुदूर तमिल नाडू मद्रास से भी प्राप्त हुए, आसाम से भी प्राप्त हुए, तो देश की सीमा पर तैनात फौजियों से भी प्राप्त हुए, किस किस का नाम लै।

कुछ कार्ड छोटे ये तो कुछ बहुत बड़े आकार के थे। छोटे-छोटे बच्चों ने भी अपनी अस्पष्ट लिखावट में कार्ड भेजे थे तो बहुत सुन्दर लिखावट और रंगों से संयोजित करके भी कार्ड भेजे थे। कोई सिर्फ 'चरण स्पर्श' और 'नव वर्ष पर अभिनन्दन' लिखकर ही मैंन हो गया था तो किसी ने 'बहुत बहुत प्यार' लिखा था और प्यार के पहले 'बहुत' इतनी अधिक बार लिख दिया था, कि पूरे कार्ड में कम से कम १०८ बार बहुत तो लिखा ही गया था।

यही प्यार होता है, शिष्य का सदगुरु के प्रति, गुरु माता के प्रति, शब्दों का संयोजन, वाक्य विन्यास और कार्ड के आकार रूप तो मात्र व्यक्त करने का एक जरिया भर ही होते हैं। प्रथेक शिष्य चाहे वह हिन्दी भाषी हो, चाहे उडीसा, तमिल नाडू, कर्नाटक, आंध्र, गुजरात, बंगाल या विदेश के रहने वाले अंग्रेजी भाषी हों, सदगुरु के हृदय में प्यार तो सबके लिये समान ही होता है। जो भेज सका नव वर्ष पर उसने कार्ड भेजा, देश के ग्रामीण अंचल के किसी छोटे से गांव में रहने वाला एक शिष्य कार्ड नहीं भी भेज सका, लेकिन शिष्यता का भाव तो दोनों का एक ही है। दोनों को ही, और सभी को सदगुरुदेव का, माताजी का और गुरु त्रिमूर्ति का सदगुरु निखिल जन्मोत्सव २१ अप्रैल पर बहुत बहुत प्यार भरा आशीर्वाद है।

मैंने अपने पुत्र को पत्रिका में प्रकाशित साधना सफलता के अन्तर्गत दिया गया विद्या प्राप्ति के लिये भगवान शिव से सम्बन्धित एक प्रयोग सम्पन्न करवाया। उसे गुरु चरणों में अपनी बुद्धि लगाने को प्रेरित किया। फिर पत्रिका में सरस्वती दीक्षा के बारे में पढ़कर अपने पुत्र का फोटो जोधपुर घेजकर फोटो द्वारा उसे दीक्षा दिलवाई।

दीक्षा प्राप्त करने के बाद मेरे पुत्र में धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा। उसकी प्रतिदिन की शिकायतें लोगों से सुन-सुन कर मैं परेशान हो गया था। दीक्षा के बाद उसमें सुसंस्कारों की छाप लिखने लगी है। और इस बार वह गुरु कृपा से मैट्रिक में पास भी हो गया है। मुझे ही नहीं मेरे १८ वर्षीय पुत्र को भी अब विश्वस्त हो गया है कि यह सफलता केवल गुरु कृपा से ही सम्भव हुई है।"

• छिन्दवाडा से नरेश बुनकर ने गुरु चरणों में लिखा है— तेरे दर के पुजारी हैं, तेरी चौखट पे आये हैं। हम अकेले नहीं हैं, साथ मैं गमो-दुःख लाये हैं॥ या रब हम और कहें भी किससे बिगड़ी बनाने के लिये। तू ही तो है सुनने के लिये, हम तो बस सुनाने के लिये॥ करम की मार है, तू एक बार रहम कर दे, तो बेड़ा पार है।

साधक साक्षी हैं

नुसधाम के साधना हाल वाला वित्त
हृष्टुर्णी तेजस्वी संन्यासी का था

मैं लगभग

१५ वर्षों से अपनी
आध्यात्मिक प्यास
को बुझाने के लिये
ओम्य सद्गुरु की
स्वोज कर रहा था,
कि एक दिन मुझे गुरु
माई से 'कुण्डलिनी
नाद ब्रह्म' पुस्तक
पढ़ने को मिली।

पुस्तक पढ़ते ही मेरो
आंखों से अशुधार

प्रवहित होने लगी, मुझे ऐसा लगने लगा कि वर्षों से मुझे
जिनकी स्वोज थी, वे यहाँ हैं, रास दिन मेरी बेहेंडी बढ़ती ही
गई कि कब जाकर मैं उनसे मिल सकूँ।

दीपबली-1995 के शिविर के लिये मैं जोधपुर रवाना
हो गया। जब मैं बिजुरी स्टेशन में टहलने के लिए उत्तरा, तभी
एक ने जस्वी साधु हाथ में कमण्डल तथा जले में सदाश माला
धारण किये हुए मेरे सामने आए। उनके शरीर से निकलती
तीव्र सुगन्ध और विद्युत तरंगों से मेरा तन-मन झङ्कूत हो उठा।
उनके नेजरकी मुख्यमण्डल की वेखते ही हाथ जोड़कर मैं
रामोहित सा उनके खड़ाऊं पहने चरणों में घिर पड़ा। उनका
आशीर्वाद युक्त हाथ मेरे कन्धों पर पहुँचे ही मैं अन्यत तरंगित
त अपील आवन्द से भर गया तथा उन्होंने मुझसे कहा—
“बेटा! कहाँ जा रहे हो?”

मैंने हाथ जोड़कर रोते हुए कहा—“बाबाजी, मैं गुरु
दर्शन करने वाला लेने जोधपुर जा रहा हूँ।”

“बेटा प्रसन्न होकर जाओ, तुम्हारी जीवन यात्रा
सफल होगी, तुम्हें गुरु दर्शन अवश्य होगे, मेरा आशीर्वाद
तुम्हारे साथ है।” — ऐसा बोलकर वे पीछे मुड़कर चले गये।



उस तीव्र सुगन्ध का स्परण कर मैं पूनः भाव विहल हो उठा और जब ट्रेन से जोधपुर पहुँचा और नुसधाम के साथना हौल में प्रवेश किया तो पूज्य गुरुदेव के मन्त्रस्न स्वरूप का
भव्य विव देखकर भव्यमित रह गया। स्टेशन में जो साधु
मुझे मिले थे, वे माझात यहीं तो थे। काफी देर तक मैं रोता रहा
इस बात पर कि मैं सद्गुरुदेव जी को पहिचान न सका। इससे
पूर्व मैंने पत्रिका में सद्गुरुदेव के गृहस्थ स्वरूप का ही विव
देखा था। शिविर के अन्तिम सत्र में गुरुदेव के चरण स्पर्श
करने के बाद मेरे पैर का दर्द, जिससे मैं पिछले पांच वर्ष से
परेशान था, सदा के लिये खत्म हो गया।

— गीताराम कुर्ये, खोनापानी कौलरी, कोरिया (म.प्र.)

बचपन में जिनके दर्शन हुए, उनके दहस्य को
पचास वर्ष बाद बानपुर शिविर में समझा सकी

मेरी उम्र इस समय साठ से कुछ अधिक है, बचपन
से ही आध्यात्मिक प्रवृत्ति थी, जगन्त अवस्था में मुझे हवा में
रंगबिरंगी साढ़ियां, कुकुम, हल्वी, गुलाल दिखता था। लोग
सोचते कि कोई भूतबाधा आदि हुई है, परन्तु काफी दिखाने के
बाद भी कुछ नहीं निकला।

१३ वर्ष की आयु में मेरा विवाह हो गया। शादी के
देव वर्ष बाद मुझे स्वप्न में एक साधु के दर्शन हुए— गले में
रुद्राक्ष की माला, हाथों में भी रुद्राक्ष, बड़ी जटा और जटा पर
भी रुद्राक्ष मालाएं थीं, हाथ में कमण्डल, झोनी, डण्डा, और
भगवे वस्त्र धारण किये हुए थे। वे मुझे डौंगरगांव के जंगल में
ले कर गये जहाँ मेरा बचपन बीता था। वह बिठाकर मुझे तीन
दाने देकर आजा देते हुए शपथ दिलाई कि मैं शक्ति का उपयोग
समाज के कार्य के लिये करूँ एवं कभी भी पैसे के बारे में न सोचूँ।

एक दिन मुझे आसामान में अद्भुत चमकीला प्रकाश
विख्याई विद्या, जिसे देखकर मैं बेहोश हो गई। इसके बाद
अक्सर जब भी कहीं भजन आदि होता है, तो मैं अपनी सुध
बुध भूल जाती हूँ। एक दिन महाकाली के दर्शन हुए। तब वेदी
ने मुझसे पूछा— “तुझे क्या चाहिये?”

मैंने मांसा— “आप मुझे गुरु रूप में प्राप्त हों। मेरे

पोतियां
मानसर
गुरुगी

पर जो
गय, मैं
नेहं न
सून ग
जी मुझ
गय अं
इससे
सकती
लगी,
नहीं प
गुरु न

टाम

सहार
था। क
करने
देक न
परन्तु
को ब
पूर्व म
२२ त
किया

धर
२२
गुरु
के ब
गुरु
आ
दिन
आ

परिवार वाले मुझे कितना भी कष्ट क्यों न है, लेकिन मैं लोगों का कुछ भला कर सकूँ।” बस इतना ही मांगा।

इसके बाद लोगों की सहायता करना, परोपकार आदि तो जीवन में मुझसे बहुत हुआ, परन्तु अपने व्यक्तिगत जीवन में चरबालों की ओर से मुझे कई प्रकार की तकलीफ मिलती रहीं, आर्थिक स्थिति नालुक ही बनी रही। घर के लोग कहते हैं, कि तू सबकी सहायता करती हो, परन्तु अपने लिये कुछ नहीं कर सकी।

दिनांक 23.10.1999 को नागपुर में जब साधना शिविर में जाने का प्रथम अवसर मिला तो यहाँ पर सदगुरुदेव निखिलेश्वरनन्द जी का चित्र भी देखा जो कि ठीक बड़ी स्वरूप था, जिसका वरपन में मैंने स्वरूप में दर्शन किया था। अब यह गुरुदेव मुझे अपने चरणों में जगह देकर मार्गदर्शन करे।

— विमला नारायणराव घिंगारे, मानस मन्दिर के पास, जगवले ले आउट, वर्धा (महा.)

भूवदेश्वरी का सलाट के मध्य और वज्र की अविंश दर्शन

जैसा आपने आदेश किया था, उसी के अनुसूच मैंने चेत्र नवरात्रि में मुख्येश्वरी साधना सम्पन्न की और मुझे उसमें जी अनुश्रूति हुई, उसे आपके चरणों में लिख कर मेज रहा हूँ—

साधना की दीर्घी रात्रि को मंत्र जप के पश्चात साधना स्थल पर ही सो रहा था कि रात्रि के १.०० बजे मैंने ऐसा महसूस किया कि मुझे धीरे-धीरे बुखार चढ़ रहा है, सारा शरीर कांपने लगा और नींद खुल गई। ऐसा लग रहा था, कि न तो मैं सो ही रहा हूँ और न ही जग रहा हूँ, सारे शरीर में भृत्य का भय सा व्याप्त हो गया। लेकिन इसी दीर्घ शुरु मंत्र का जप स्वतः चलने लगा। ऐसा लग रहा था कि मेरे आज्ञा चक्र पर साक्षात् भगवति जगद्भाव विग्रहमान है। मैंने तुरन्त विवेक से जोचा कि जो भी हो रहा है, इससे मेरा अनिष्ट नहीं होगा, क्योंकि हृदय में गुरुदेव की उपस्थिति भी अनुभव हो रही थी।

हृदय में सदगुरुदेव का और आज्ञा चक्र में भुवनेश्वरी का वशन लगातार पांच मिनट तक होता रहा, और इस क्रम में मैं पूर्णतया शान्त हो गया और पुनः अपकी लग गई, लेकिन अपकी लगते ही मुझे लगा जैसे मैंने कोई हाई वोल्टेज विनाली का तार छू लिया हो, फिर से हृदय में सदगुरुदेव निखिलेश्वरनन्द जी की छवि और आज्ञा चक्र में मौ मुख्येश्वरी के चित्र का दर्शन करता रहा। यह स्थिति रात्रि में तीन बार हुई, गुरु मंत्र अपने आप चलता रहा। अगले दिन, नवरात्रि की

अष्टमी को हवन सम्पन्न किया तो हवन कुण्ड की लपटों में भी मां की आकृति के दर्शन होते रहे।

— अरुण कुमार चौधे, कृष्ण सर्जिकल सेन्टर, सम्बद रोड, विकास नगर, देहरादून-२४८०३८ (उ.प.)

बाढ़ी बीचों-बीच जंगल में अचाबक रुक गई

29.11.1999 के दिन मुझे आगरा से विल्ली जाना था। टिकट लेकर गलती से मैं कानौटक प्रसारप्रेस के स्लीपर कोच में बैठ गया। जाथे घाटे बात गाढ़ी में टी.टी. आ मया और कोच में बैठे चार-पांच आदमियों को जुर्माना कर दिया, मुझसे भी मांगने लगा। मैं बोला गलती से मैं इस कोच में बैठ गया हूँ, अगले स्टेशन पर उतर जाऊंगा। वो बोला गाढ़ी बीच में नहीं रुकेगी, सीधे विल्ली पहुँचेगी, इसलिये तुम्हें पेनालटी (जुर्माना) देनी पड़ेगी। मैं मन ही मन गुरुदेव का स्मरण कर रहा था, क्योंकि मेरे पास पैसे किसी खास कार्य के लिये नहीं थे। तभी मैंने देखा कि अचाबक गाढ़ी बीचों-बीच जंगल में रुक गई, और मैं उत्तर कर जनरल डिव्हे में जाकर बैठ गया। दो मिनट देर बाद ट्रेन चली। हो सकता है, कि इसे संयोग कहा जाए, परन्तु मेरा हृदय कहता है, कि गुरुदेव ने मुझे बचाया।

— अम्बरीश शर्मा, ए-२३३, विद्युत नगर, अनमेर रोड, जगपुर - ३०२०२१ (राज.)

जब समय आयेना, तो मैं स्वुद ही

मानसदोवर ले चलूँगा

मेरे जोड़ों में दर्द रहता है और शरीर का बायां भाग कमज़ोर है, २२ नवम्बर १९९८ की चण्डीगढ़ शिविर में मैंने धन्वंतरी रोग निवारण दीक्षा ली थी। दिनांक ९.४.१९९९ को परिवार में ही कुछ कलेश हो गया, खूब बहस हुई, और अंत में मैंने निर्णय किया कि अब मैं जीना ही नहीं चाहती। मुझे गुरुजी अपने पास बुला लानिये, सारी रात उलझन में जागती रही, गुरु चित्र के सामने रोती रही, सुबह ३:३० पर मुझे नींद आ गई। मैंने देखा कि सदगुरुदेव मिहासन पर बैठे मुस्कुरा रहे हैं। मैंने रोते हुए गुरुजी के पांव पकड़ लिये, तो गुरुजी कुर्सी समेत ही आकाश में उड़ने लगे, मैंने भी पांव नहीं छोड़ा। गुरुजी मानसरोवर झील पर उतरे, मैंने पानी से मुंह धोया, मैं झील में नहाना चाहती थी, परन्तु गुरुदेव ने नहाने नहीं दिया और कुर्सी सहित दुबारा उड़ने लगे तो मैंने तुरन्त उनके चरण करकर पकड़ लिये। वे चरण छुटाने रहे, मैं रोती रही।

मदगुरुदेव बोले— “अभी तुम्हारे जाने का समय नहीं है बेटी, लोटे की शादी करनी है, दोनों बेटों के पोते-

स्त्रियों को देखना है। जब समय आयेगा, मैं खुद ही अक्षयतेर श्रील के पास स्नान करवाने ले जाऊँगा।” और नुच्छी अपना पैर छुटाने का प्रयत्न करते रहे।

छोटा इण्टी में गुरुजी की कुर्सी का एक पांव मेरे मुँह पर जोर से लग गया, मेरी चीख निकल गई और हाथ छूट जाव, मैं धड़ाम से नीचे गिरी। नींद खुली तो देखा मैं विस्तर से जौचे जमीन पर पड़ा हूँ। मेरी मुट्ठियाँ भिंडी थीं, मेरे हौठ सचमुच लूँज गये थे, मैं अभी भी उसी तरह बोलती जा रही थी कि गुरु जी मुझे ले जालो। मेरी आवाज सुनकर अन्य सदस्य भी आ जाएं और मुझे जमीन पर बैठा देख आश्चर्य चकित रह गये। इसमें पूर्व मैं शारीरिक लाचारी के कारण जमीन पर बैठ नहीं सकती थी। परन्तु इस स्वप्न के बाद मैं खुद उठ कर चलने लगी, हाथ मुँह धोया, जबकि इसके पूर्व मैं विस्तर से उठ थी नहीं पाती थी। मैं अब गुरु मंत्र का समरण करने लगी हूँ और गुरु जी की मुड़ों कई बार इलक मिल जाती है।

— सन्तोष शर्मा, १२७/७, पवन नगर, अमृतसर.

राम रक्षा स्तोत्र से अविष्ट टला

30.10.1999 को मैं और मेरा ट्रक मालिक पंजाब से सहारनपुर जा रहे थे, हमारी गाड़ी के आगे एक टैक्टर जा रहा था। उच्चानक टैक्टर के आगे से तीन-चार फीटी सड़क पार करने लगे, टैक्टर के इंटाइकर ने उन्हें बचाने के लिये एक बेक लगाई और हमारी गाड़ी बुरी तरह टैक्टर से जा टकराई, परन्तु हम दोनों ही आश्चर्यजनक रूप से बच गये, जबकि ट्रक को जाफ़ी नुकसान हुआ था। इस बात का प्रारम्भ करने के पूर्व मैंने मानसिक रूप से संक्षिप्त गुरु पूजन कर अक्षयतेर २२ अक्टूबर की प्रतिको मैं दिये ‘राम रक्षा स्तोत्र’ का एक बार पाठ किया था, जो कि गुरु आण्गोदाद में कल्याणकारी सिद्ध हुआ।

— अनिन्द्र कुमार, बकेहड़ा (उपरला),

अजोली, रोपड़-१४०१२५ (पंजाब)

घर पर बिजली बिंदी, पर मेरी प्राण रक्षा हुई

दिनांक:

२२ मई १९९९ को
गुरु दीदा प्राप्त करने
के बाद मैं नियमित
गुरु मंत्र का जप
आर्ह करता हूँ।



दिनांक १२ सितम्बर १९९९ को रात्रि मैं दो बजे मेरे साथ एक आश्चर्यजनक घटना घटी। बाथत की तेज गर्जन के साथ

ज 'अप्रैल' २००० मंत्र-तत्त्व-यंत्र विज्ञान '४९'

आकाश से बिजली मेरे घर पर गिरा, तो पूजा स्थान पर जहाँ गुरु चित्र रखा था, वहाँ मैं बिजली थोड़ी दूर से ही लौट गई। इसके बगल बाले कमरे में जहाँ मैं सो रहा था, वहाँ से भी बिजली बिना मुझे स्पर्श किये थोड़ी दूर से लौट गई, जबकि इसके अलावा धूर धर आग के अगारे जैसा हो नया था और घर की गौचराला में जंधा एक बैल मर गया। गुरु दीक्षा और गुरु मंत्र जप किस प्रकार साधक को एक अभेय रक्षा वत्त्व व्रद्धन करता है, रात्रि की इस घटना से मुझे अनुभव हो गया।

— बाबूलाल बरकड़, बेहापानी, पाकर, बेतूल (म.प्र.)

यंत्र में गुरुदेव की उपस्थिति अनुभव होती है

मैंने फोटो मैनकर गुरु दीक्षा प्राप्त की थी। पर्याप्त न्यौछावर राशि न होने के कारण मैं गुरु यंत्र प्राप्त न कर सकी थी। परन्तु पता नहीं शायद गुरुदेव ने कल्णावश मुझे गुरु यंत्र निशुल्क ही देंगे दिया जो कि डाक द्वारा मुझे विनांक ५ जुलाई १९९८ को प्राप्त हुआ। इस यंत्र मैं मुझे कई बार गुरुदेव की उपस्थिति का आभास हुआ है, और इसमें से आवाज भी सुनाई दी है। एक दिन मैंने स्वप्न में देखा कि एक मन्दिर में कुछ लोग हवन सम्पन्न कर रहे हैं, स्तोत्र पाठ कर रहे हैं, थोड़ी दूर मैं थोड़ी हूँ। तभी हवन कुण्ड से चार ज्योति निकल कर दुर्गा जी की मूर्ति में समा गई। जब नींद खुली तो आस-पास पूर्ण रूप से पूज्य गुरुदेव श्री केलाशाचन्द्र श्रीमाली जी ही नजर आने लगे। थोड़ी देर बाद मैं सामान्य हुई। इसके बाद से मेरी रीढ़ के मूल में रेखने जैसा कुछ आभास होता है। मार्गदर्शन करे।

— रंजना, बठेना बाई, धमतरी, राधपुर-४९३७९३

जग्मू तक गाड़ी को किसी ने दोका नहीं

३० अप्रैल १९९९ को मुझे बच्चों के पास कातुआ रो जग्मू बापस आना था, घर पर बढ़ते उकेले थे। उस दिन ट्रांसपोर्टरों ने हड्डाताल कर दी थीं, सारी बर्से, थोटी और बड़ी सभी गाड़ियाँ चलना बन्द हो गई थीं। अगर कोई गाड़ी जाती तो रास्ते में पत्थर मार-मार कर गाड़ी रोक कर बंद करा देते थे। मैं संकट में फंस गई कि घर में छोटे बच्चे उकेले हैं, मैंने सदृश्यदेव के मंत्र का जप गुरु कर दिया। थोड़ी देर बाद पैलाव की एक गाड़ी आई, मैं उस पर बैठ गई, पूरे रास्ते गुरु मंत्र का जप करती रही कि कोई अड़चन न आए। जब गाड़ी लगभग पहुँच गई तब उसे रोक लिया गया, उसके पहले नहीं, इस प्रकार मैं यकुशल घर पहुँच सकी।

— श्रीमती जवाहर ज्योति खन्नूरिया, ५४, गली
कुच्छा नरसिंह, पंजाबीधि, जग्मू,

डरावने स्वप्नों से मुक्ति

गुरुदेव से दीक्षा लेने के पूर्व मैं कई बधों से कई रोगों से बीमार बाल रहा था, और अक्सर डरावने सपने आया करते थे, कई प्रकार की हाड़-फूंक आदि कराने पर भी कोई लाप नहीं हुआ था। पिछले वर्ष दीक्षा प्राप्त करने के बाब भूमि सितम्बर-१९ में बन्दीनीय माता जी, पूज्य गुरुदेव श्री कैलाश

चन्द्र जी पवं पूज्य गुरुदेव श्री अरबिन्द श्रीमाली जी के प्रति काल स्वप्न में दर्शन हुए। माता जी ने अन्यन्त बालसन्त्य भाव से भयमुक्त होने का आशीर्वाद दिया। इसके पश्चात फिर मुझे डरावने स्वप्न आने बन्द हो गये, अब मैं बिलकुल हठ-पुष्ट हूँ।

- इन्द्रीश कटियार, बी-१/५०, सेक्टर-८,

अलीगंज, लखनऊ (उ.प्र.)

तुझे तारा साधना में शिद्धि मिलेगी लेकिन थोड़ा विलम्ब होना

मैं एक शिक्षित ग्रामीण युवक हूँ। वर्ष १९९४ में एक दिन मुझे इष्ट देव 'कल्लाजी' (कल्याणवता) ने स्वप्न में दर्शन देकर पहली बार कहा कि मेरा नाम 'कल्याण' है, अतः तेरा कल्याण होगा। उस बचन के कुछ समय बाद ही मुझे पूज्यपाद गुरुदेव हाँू नारायण दत्त श्रीमाली जी की पुस्तक 'तांत्रिक सिद्धियाँ' पढ़ने को मिली। इससे पूर्व मैं साधना आदि के बारे में नहीं जानता था, और मैं सोचने लगा कि इस पुस्तक में जो साधनाएँ दी हैं, वे सत्य हैं भी या नहीं, परन्तु स्वप्न में पुनः कल्लाजी ने कहा कि "सभी साधनाएँ सत्य हैं।"

इसके बाद मैंने लगलामुखी साधना को प्रारम्भ किया, परन्तु साधनाओं की पूरी प्रक्रिया न जानने के कारण मुझे उसमें जरा भी सफलता न मिली। कुछ माह बाद मैंने तारा साधना को शुरू किया, इसमें भी कुछ अनुभव नहीं हुआ, बार-बार इसी साधना को बहारने पर एक दिन मुझे सदगुरुदेव हाँू नारायण दत्त श्रीमाली जी के दर्शन हुए, उन्होंने मेरे माथे से कुछ बाल उखाड़ कर सामने एक बृश की ओर जाने के लिये कहा। उन्होंने यह कहा - "बेटा! उस बृश का कल ले आ! उस कल से ही सारे मनोरथ पूर्ण होंगे।" मगर मैं उस बृश के पास जा नहीं पा रहा था। उसके बाद मुझे कभी कभी पूज्य गुरुदेव के दर्शन होने लगे।

एक दिन मुझे स्वप्न में लम्बी जटाओं बाले एक महाराज जी दिखाई दिये, जो शापद निश्चिलेश्वरानन्द जी रहे होंगे। मैंने उनसे पूछा कि मुझे तारा साधना में सफलता कब मिलेगी? उन्होंने कहा - "बेटा तुझे साधना में शिद्धि मिलेगी पर थोड़ा विलम्ब होगा!"

एक बार मुझे देवों तारा के दर्शन हुए, वे मुझे कोई चौंज देकर कह रहे थे कि इस बरन्तु से ही नेरे कार्य सिद्ध होंगे। परन्तु यह दर्शन मुझे स्वप्न में हुआ था और वह कौन सी चौंज थी, और उसे कैसे प्राप्त किया जाए, वह मुझे मालूम नहीं है। साधना के दीरान एक बार मुझे लगा कि किवाड़ खटका है। अगले दिन बच्चों को डूला झुलाने वाला पालना जो ढाक गेर ऊपर ठंगा था, अपने आप हिलने लगा। वो दिन तक फिर कुछ नहीं हुआ, ग्यारहवें दिन दो तीन कलबजूरे निकले जो आसन के चारों ओर घूम-घूमकर चक्कर लगाते रहे, कभी आसन के नीचे छिप जाने तो मैं उठकर खड़ा हो जाता था हिल-डुल जाता। डम बार डटना ही हुआ।

कुछ समय बाद पुनः इस साधना को यंत्र, माला आदि से विधिवत प्रारम्भ किया, ग्यारहवें दिन तारा मंत्र को १०१ माला पूरी करके सोया था कि देवी ने आकर मेरे बाल पकड़ लिये और जोर जोर से स्टॉचकर हिलाने लगी। यह किया लगभग पांच मिनट तक चलती रही और फिर अपने आप बन्द हो गई। बारों और की जापान हिलाने लगी। मुझे इस अनुभव से लगने लगा कि अब मुझे शिद्धि मिल जायेगी। बारहवें दिन मेरा कान बन्द हो गया, अन्दर से 'भन-भन्न-भन्न' का गुंबरण सा आने लगा। तेरहवें दिन १०१ माला तारा मंत्र की जप कर सोया तो देवी ने आकर गला पकड़ निया और मुझे घसीटने लगी। मैं उधकचरी नींद में चिल्लाता रहा कि मुझे पीड़ित मत करो। बोहो देर में मुझे लगा कि मेरी ज्ञापड़ी निराम में साधना करता हूँ, मेरे ऊपर आ गिरी है। परन्तु इसके बाद सब शान्त हो गया। साधना के आगे के दिनों में फिर कोई बहकार नहीं हुआ।

अब तक इसी साधना को मैं कई बार सम्पन्न कर चुका हूँ। बीच बीच में कभी कभी कोई अनुभूति हो भी जाती है, लेकिन सिद्धि अभी तक नहीं मिल सकी है। गुरुदेव! आप कृपा करें।

- मणीलाल दामोदर, पटेलिया, अडोर, मढ़ी, बासवाड़ा-३२७०३४ (राज.)

विशिष्ट में श्री आद्यशंकर इष्ट-गम्भीर शिष्यों आभास में आग सनकात शिविर किसी। यहाँ परहता है कर उनकी हो तो उनकी कहा। उनकी जैर देख से गया और

ब्रह्म विद्यामरि भावयामीनि

30

ज से प्रायः पांच सौ वर्ष पूर्व वैष्णव सम्प्रदाय में प्रसिद्ध पुष्टिमार्गीय संत विचारक और तत्त्ववेत्ता हुए हैं श्री वल्लभाचार्य जी जिन्होंने विशिष्टाङ्केत मत का प्रतिपादन किया। भारतीय दर्शन के दोनों में श्री वल्लभाचार्य जी का स्थान प्रगत्पाद श्री ज्ञानशंकराचार्य के समकक्ष माना गया है।

एक अवसर का प्रसंग है श्री वल्लभाचार्य जी अपने इष्ट-प्रगत्पाद श्रीकृष्ण की जन्मभूमि मधुरा में दर्शन करने पश्चात अपने शिष्यों से मैट करते व उन्हें जान की आप्ति से दीप्त करते स्नकता (वर्तमान में आपरा जनपद में) की ओर बढ़ चले। स्नकता में जब वे विश्राम हेतु अपने शिविर में विश्राम कर रहे थे तभी उनके किसी शिष्य ने उनसे निवेदन किया कि यहीं पर सूरदास नाम का एक साधु रहता है जो प्रगत्पाद में पदों को रच कर उन्हें बड़े मधुर कंठ से भाता है, यदि उनकी (श्री वल्लभाचार्य जी की) आवाह हो तो उसे चुलाया जाए। श्री वल्लभाचार्य जी ने सहर्ष अनुमति दे दी और सूरदास समक्ष आए।

श्री वल्लभाचार्य जी ने सूरदास से पद सुनाने को कहा। सूरदास ने अपना नानपूरा सम्भाला और पद सुनाया।
... प्रभु हीं सब पतितन को ठीकौ।

श्री वल्लभाचार्य जी को कुछ विशेष सचिकर न लगा और उन्होंने कोई दूसरा पद सुनाने को कहा। सूरदास ने फिर दैन्य से भरा एक पद गाया तो श्री वल्लभाचार्य जी से न रहा गया और वे बोल पड़े— नाम तो तेरा है शूर और विविध रहा है



ऐसे, क्यों? कुछ प्रभु लीला के रंगों का वर्णन क्यों नहीं करता? प्रस्तुतर में सूरदास मिलख पड़े और बोले— गुरुवेद! मैं उहरा जन्मांघ, मैंने जीवन के प्रारम्भ से बस एक ही रंग देखा है और वह है काला! मैं प्रभु लीला के रंगों का वर्णन करने भी तो कैसे करूँ?

सूरदास का यह उत्तर सुन कर श्री वल्लभाचार्य जी आंख बंद करके किसी गहन चिंतन में डूब गए और कुछ देर बाद जब उन्होंने आंखें खोलीं तो करुणापूर्ण नेत्रों से सूरदास की ओर देखते हुए बोले— जाता स्नान करके आ। मैं तुझे आज और अभी दीक्षा दूँगा, तुझे दृष्टि चाहिए न? मैं दूँगा!

श्री वल्लभाचार्य जी के उपस्थित शिष्यगण आश्चर्य में पड़ गए क्योंकि श्री वल्लभाचार्य जी के विषय में विश्वास था कि वे सहज ही किसी को दीक्षा नहीं देते हैं।

सूरदास ने वैसा ही किया और श्री वल्लभाचार्य जी ने सूरदास को विधिवत् दीक्षा प्रदान की। दीक्षा मिलते ही सूरदास एक अनिर्बन्धन आनन्द में डूब गए, आनन्दातिरेक में उनकी आंखों से आंसुओं का प्रवाह उगड़ पड़ा। घड़ी भर के लिए वे स्वयं में खो से गए और जब उनकी चेतना लौटी तो वे अनुगमन से आगे बढ़कर टोलते हुए श्री वल्लभाचार्य जी के चरणों से लिपट गए।

पुनः प्रकृतिस्थ होने पर श्री वल्लभाचार्य जी ने सूरदास से कहा— हां शूर! अब कुछ सुना।

सूरदास ने दीक्षा मिलने के तत्क्षण पश्चात अन्तःप्रेरणा से उपना जो प्रथम पद गाया वह या . . .

चल री चकई चरन सरोवर, जहां न प्रेम शियोग
जहां कबहुं भ्रम निसा नहीं व्यापत, सोई सायर सुख जोग

यह पद सुन कर श्री वल्लभाचार्य जी ने मंद मंद
मुखराते हुए सूरदास से कहा और शरीर तुझे तो सब कुछ
दिखने लग गया है ऐ। कुछ और देख कर हमें भी तो बता।

और सूरदास ने उसी समय मानस में उमड़ा एक
अन्य पद प्रस्तुत किया . . .

हंसर हंस भिते सुख होई
जहां ते पाति बुखर की
कदर त जरने कोई . . .

श्री वल्लभाचार्य जी का मुखमंडल असीम करुणा से
आनन्दावित होकर धीर गया क्योंकि उनका एक और शिष्य
इस बनने की स्थिति में जो आ गया था।

गुरु का तो बस एक ही स्वरूप होता है कि उनका
प्रत्येक शिष्य हंस बन सके, वह अपने पंखों को फैलाता हुआ
उस सच्चिदानन्द रूपी मानसरोवर में अवगाहन कर सके जो
मानसरोवर स्वयं उसके भीतर ही निहित है।

धीरोत्तिक रूप से जो मानसरोवर है वह तो जहां
स्थित है वही स्थित रहेगा, उसके साक्षात् कभी भी जाकर
किए जा सकते हैं किन्तु जो मानसरोवर अर्थात् मानस स्पृणी
सरोवर स्वयं व्यक्ति में निहित है उसके साक्षात् व उसमें
अवगाहन तो केवल गुरु से 'दृष्टि' मिलने के बाद ही सम्भव है।

ऐसे मानस रूपी मानसरोवर अर्थात् मूलाधार से
सहलार तक की यात्रा करने के पश्चात ही यह सम्भव हो सकता
है कि शिष्य को पूर्णसूर्योण आत्मनुप्रिण मिल सके, उसके संकल्प-
विकल्प समाप्त हो सके, वह निश्चिंत व निर्भीक हो सके।

जीवन में यदि ऐसा कुछ विलक्षण अनिंत करना है
तो आवश्यक है कि शिष्य अपनी 'जन्मांधता' को छोड़, गुरुदेव
की दृष्टि में अपनी दृष्टि को मिला कर उनकी दृष्टि से इस जगत
को देखना प्राप्त कर दे। गुरु की दृष्टि से देखने के बाद ही इस
जगत का कोई सौन्दर्य हमारे नेत्रों के समाप्त उद्घाटित हो सकता
है अन्यथा यह जगत तो ही ही विसंगतियों से परा हुआ।

गुरु का अवतरण इस जगत में किसी के धेरेलू विवाद
सुलझाने वा किसी के व्यक्तिगत हित की पूर्ति करने के लिए न
होकर जिस अर्थ में होता है वह होता है सम्पूर्ण मानवता के
लिए एक दृष्टिबोध प्रस्तुत करना।

यह शब्दों में नहीं वर्णित किया जा सकता कि गुरु
को कितनी अधिक वेदना होती है जब उनका कोई शिष्य
उनके समक्ष अपनी व्यक्तिगत बातों की प्रस्तुति करने का

प्रयास करता है। गुरु का येन केन-प्रकारेण वस एक ही प्रयास
होता है कि उनका शिष्य दृष्टि को प्राप्त करता हुआ अपने
उस ब्रह्म स्वरूप का बोध कर ले जिसको हवयंगम करने के
बाद उसे कुछ भी नहीं व्याप्त हो सकता।

यूं जीवन है तो कभी सर्दी-बुखार भी हो सकता है
कभी खांसी भी आ सकती है, अब कोई यह अर्थ न लगा देते
कि मैंने तो रीक्षा ली हुई है फिर मुझे खांसी आई तो कैसे जाई?

गुरुदेव द्वारा प्रवलित समस्त दीक्षाओं, समस्त
प्रवचनों, समस्त धुनियों का सार अरन यही होता है कि शिष्य
अपने आत्म स्वरूप का बोध कर ले क्योंकि आत्म स्वरूप में
ही ब्रह्म स्वरूप छिपा होता है। भगवत्पाद श्रीआद्यशंकराचार्य
विरचित विवेक-चूडामणि शब्द में ब्रह्म तत्त्वमसि भावपात्मनि
(अर्थात् वह ब्रह्म तुम ही हो-मन में ऐसा विचार कर) पद का
यही भावार्थ है।

आत्म स्वरूप कहें अथवा ब्रह्म स्वरूप-दोनों में अर्थ
का कोई अंतर नहीं, अंतर मात्र इतना ही है कि ब्रह्म स्वरूप
कहने की अपेक्षा आत्म स्वरूप कहने से भाव का स्पर्शीकरण
शिष्य के मानस में शीघ्रता से हो जाता है।

आत्म स्वरूप का बोध होने के पश्चात ही शिष्य को
इस बोध के प्रथम चरण में जात हो सकता है कि वह कीन है,
गुरु से क्या सम्बन्ध रहे हैं उसके पूर्व जन्मों में या क्यों सौ-
सी बहानों से गुरुदेव प्रयास करते हैं उसे अपने समीप रखने
का अन्यथा गुरु को क्या आवश्यकता है किसी शिष्य के रूप
जाने पर सौ सौ बार मनाने की?

गुरु का तो प्रत्येक प्रयास अपने शिष्य से आन्मीयता
विकसित करने का होता है क्योंकि आन्मीयता विकसित हो
जाने के बाद ही तो शिष्य आत्मवत् बन सकता है तथा गुरु के
आत्मवत् ही गए शिष्य के लिए ही माध्यनांत्र व सिद्धियों का
पथ प्रशस्त होता है, अन्य हेतु नहीं।

गुरु का आत्मीय बनना और आन्मीय बनने हुए उनके
आत्मवत् बन जाने का मार्ग का कोई बहुत अधिक विस्तीर्ण
मार्ग नहीं है। वह तो परस्पर विश्वासों का एक आदान-प्रदान
है और ऐसा आदान-प्रदान क्षण मात्र में हवय के मिलते ही
सम्भव हो सकता है जौँ नेत्रहीन सूरदास व श्री वल्लभाचार्य
के परस्पर मिलन में क्षण मात्र में सम्भव हो गया।

रीक्षा तो अन्तर्मन का मिलन है, इसमें प्रवाह है दोनों
ओर से — शिष्य की ओर से अपनी धीड़ा और वेदना का और
गुरु की ओर से है शिष्य को अपने भीतर समाप्ति कर लेने
का — वस इतनी ही तो बात है।

ब्रह्म ज्ञान की उपलब्धि, तृतीय नेत्र की प्राप्ति या ब्रह्माण्ड की घटनाओं में परिवर्तन करने की क्षमता – इन सभी का जो मिला जुला स्वरूप है, उसे ही तो योग की भाषा में

आज्ञा चक्र

पा

चक्रों चक्र जाग्रत होने पर साधक का अपने सूक्ष्मा शरीर से तादात्म्य स्थापित हो जाता है, सूक्ष्म शरीर के गाढ़ाम से वह एक कण के रूप में परिवर्तित होकर किसी भी स्थान पर नाकर पुनः वापिस आ सकता है, इच्छानुसार आकार धरणा कर सकता है। विशुद्ध चक्र के बाद जब साधक निरन्तर साधना सम्पन्न करता हुआ कुण्डलिनी साधना के अगले क्रम में प्रविष्ट होता है, तब कुण्डलिनी शक्ति आगे बढ़ने हुए दोनों भौंडों के बीच आज्ञा चक्र पर पहुंचती है। यह आज्ञा चक्र छठा छठ है, जहां पर कुण्डलिनी आकर स्थिती है।

धृत्वाओं में हस्तक्षेप करना सम्भव है

विशुद्ध चक्र से साधक यो हनुर गील दूर किसी घटना को दूर बैठा तो देख सकता है, परन्तु उसमें हस्तक्षेप करना उसके लिये सामग्र नहीं हो पाता। यदि कहीं कोई एकरोदण्ठ हो रहा है, तो विशुद्ध द्वारा तो उसका मात्र अवलोकन ही किया जा सकता है, जबकि आज्ञा चक्र के जाग्रत होने पर साधक स्वयं वहां उपस्थित होकर, भण मात्र में दुर्घटना से व्यक्ति को बचा सकता है। ब्रह्माण्ड की कियाओं को स्वेच्छानुसार मोड़ देना आज्ञा चक्र से सम्भव हो पाता है।

श्राप और वरदान देने की क्षमता

आज्ञा चक्र पर स्थित साधक किसी के भी जीवन में परिवर्तन कर सकता है, किसी को भी श्राप या वरदान दे

कहा गया है, जिसके जाग्रत होने पर योगी स्वतः ही 'अहं ब्रह्मास्मि' का उद्घोष कर उठता है

सकता है, किसी को भी रंक से राजा बना सकता है, और सामान्य से सामान्य व्यक्ति को भी एक अत्यंत तेजस्वी, पराक्रमी और महान् व्यक्ति बना सकता है। उसके मन में उठा विचार किर कोई विचार भर नहीं रह जाता, एक चैतन्य कुण्डलिनी साधक की मात्र इच्छा भर दी नहीं रह जाती, जल्दि वह विचार तो एक आज्ञा होती है, जिसे मानने के लिये कोई भी व्यक्ति ही नहीं अपितु प्रकृति भी वाध्य हो जाती है।

विचारों का विसर्जन : ज्ञान की उपलब्धि

पांचवा चक्र जाग्रत होने पर साधक को अपने आत्म का साक्षात्कार ही जाता है, जिससे उसके अन्दर विचारों की अस्त-व्यस्त श्रृंखला समाप्त हो जाता है और 'प्रज्ञा' का नन्मा होता है। इस प्रज्ञा से, बुद्धि से, मेधा से साधक अपनी आत्मा के मूल रूप में स्थित हो जाता है। फिर जो कुछ भी उसके मन में उठेगा, वह उसकी प्रज्ञा से उठी, उसकी आनन्द की आवाज होगी। पांचवे चक्र पर स्थित साधक जिस विषय पर चिन्तन करना चाहेगा कर सकेगा, जिस विषय पर सोचना न चाहेगा उसके विचार उसे आयेगे ही नहीं। ऐसा इसलिये होगा, क्योंकि वह स्वयं ही अपना मालिक होगा, उसकी आत्मा ही उसका प्रगतान होगी। परन्तु जो भी विचार होगे, जो भी चिन्तन होगा वह उसकी आत्मा का होगा, उसका स्वयं का होगा। लेकिन जब साधक आज्ञा चक्र पर पहुंचता है, तब विचार करने की प्रवृत्ति ही समाप्त हो जाती है, क्योंकि यहां आत्मा का पृथक

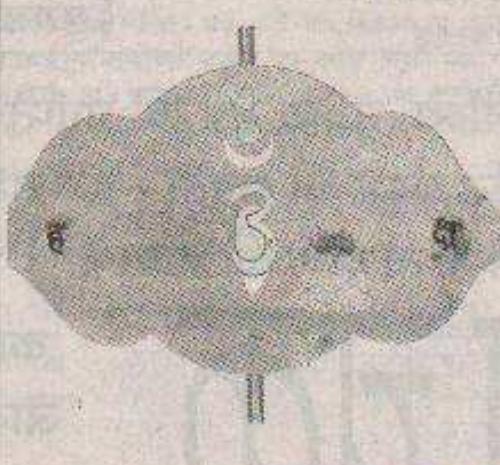
स्वरूप शीष ही नहीं रह जाता। इस स्तर पर साधक को ब्रह्म शरीर की उपलब्धि होती है, जिससे उसकी आत्मा और ब्रह्म में जो द्वैत भाव है वह समाप्त हो जाता है। साथ ही शुद्ध ज्ञान का उदय होता है, ब्रह्म ज्ञान का उदय होता है।

द्वैत भाव से मुक्ति

पांचवे चक्र में 'मैं' का भाव तो समाप्त हो जाता है, परन्तु 'हूँ' का भाव बचा रहता है। अर्थात् पांचवे चक्र पर साधक को अहंकार तो नहीं रह

जाता, परन्तु यह बोध उसे अपने होने का बोध उदयर रहता है, उसे यह भी जात होता है, कि उस नेते अपेक और भी है। होने का यह बोध उसकी आत्मा का अनुभव होता है, क्योंकि वह अपनी आत्मा के दर्शन कर रहा होता है। परन्तु जब कुण्डलिनी शक्ति आज्ञा चक्र में पहुंचती है, तो 'मैं' और 'तू' का भेद पूरी तरह विचर्जित हो जाता है, 'इसमें' और 'उसमें' कोई अंतर नहीं रह जाता, एक आत्मा और दूसरी आत्मा का भेद समाप्त हो जाता है, साधक को यह बोध हो जाता है, कि सबमें एक ही ब्रह्म का निवास है, जो परमात्मा है।

यह अनुभूति ठीक वैरी ही होती है, जैसे डाल पर लगा पता पहले तो यह सोचे कि मैं एक पता हूँ, फिर सोचे कि नहीं केवल मैं ही पता नहीं, मेरा अस्तित्व तो है, परन्तु मेरे जैसे और भी पते हैं और उनमें मुझमें जरा भी भेद नहीं है, क्योंकि हम दोनों ही एक डाल से लगे हुए हैं, और हम दोनों को उत्पत्ति उसी जल और खाद से हुई है जो इस डाल से हम दोनों को प्राप्त हुआ है, इस प्रकार हम दोनों में जरा भी भेद नहीं है। इसी विस्तर का विस्तार होते हुए पेड़ की उस डाल के अन्य पते ही नहीं, सभी शाखाओं के पते, बल्कि पूरा वृक्ष, और मात्र एक वृक्ष ही कर्यों, संसार भर के वृक्ष और जीव सभी तो उसी जल, वायु, और पौन तत्त्वों से निर्मित व पोषित होते हैं, तो फिर तत्त्व दृष्टि से जरा भी भेद नहीं रह जाता। सब का निर्माण एक ही तत्त्व से हुआ होता है, सबमें वही समाया होता है, यहीं ब्रह्म दृष्टि होती है, यहीं अद्वैत चिन्तन होता है, जो आज्ञा चक्र से प्रस्फुटित होता है।



आज्ञा चक्र

ब्रह्म से नाशयण

ब्रह्म साधक आज्ञा चक्र में पहुंचता है, तो उसे ब्रह्म शरीर की उपलब्धि होती है। उसमें ईश्वरत्व के लक्षण विकसित होने लगते हैं। ईश्वर या अवतारी पुरुषों के, युगपूरुषों के बोई दस्त हाथ या पैर नहीं होते, उनकी काया कोई पचास फुट की नहीं होती, अपने कर्मी और गुणों से ही कोई दसों मनुष्य योनि में नन्गा जीव ईश्वरत्व तक पहुंच जाता है, और अनेकों मनुष्यों द्वारा फिर युगों युगों तक पूजा

जाता है। ईश्वरत्व हो या मनुष्यत्व, पशुन्त हो या देवत्व, सबकुछ इसी मानव देह में तो निहित होता है, कुण्डलिनी शक्ति द्वारा ही जो उसको जाग्रत कर ले, वही साधक की विघ्नता होती है।

आज्ञा चक्र जाग्रत होने के बाद नव ऐसा व्यक्तित्व समाज में लम्बे समय तक जीवित रह जाता है, तब उसकी सुगम्य छिपाये नहीं छिपती और लोग उसे प्रमाणित होने लगते हैं, उसके ईश्वरत्व का, उसकी विवरण का एहसास करने लगते हैं। ईश्वर पैदा नहीं हुआ करते, बनते हैं, गुरु के संस्पर्श से, चाहे वे कृष्ण हों या राम हों, उनके जीवन में गी विश्व और सांकेतिक जैसे श्रेष्ठ गुरु हुए, जो इनकी कुण्डलिनी को जाग्रत कर सके। मतुष्य तो सभी एक से ही है, विभेद होता ही नहीं, अन्तर तो केवल इनमा भर ही है, कि सदगुरु के शक्तिपात रूप में, दीक्षा के रूप में किसे उस विराट शक्ति की कृपा प्राप्त हो सकी है। और जिसे ऐसी कृपा प्राप्त हो सके, वही मनुष्य धन्य है, सामाजिक स्तर से उठा एक ऐसा व्यक्ति फिर इतिहास में और हनारों-हनारों हृदयों पर अपनी अगिट छाप युगों-युगों तक छोड़ जाता है। इस तरह आज्ञा चक्र की जाग्रत ही नर से नाशयण बनने की किया है।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति

आज्ञा चक्र का स्थान ललाट के बीचों बीच होता है, और इसीलिये ब्रह्म ज्ञान के पिपासुओं को धू-मध्य पर ध्यान करने का निर्देश दिया जाता है। 'अहं ब्रह्मास्मि' वा बोध इसी चक्र पर होता है, कि मैं जो हूँ वह मैं नहीं अप्रित वह ब्रह्म ही है जो मुझमें स्थित है, मैं वही ब्रह्म हूँ जिसका कोई और छोर नहीं

है, जिसके उद्भूत है उसके अभ्यास, ब्रह्म की है। यह ब्रह्म त्वं है।

ही सात है, यह पर को अन्य फिर यदि पर उसे आशाम

नहीं है, जीव से। है, वा यों ही आभास होती है, आभास आभासम् में और अंशों तक

कुण्डली है, और चक्र वा भी सापाता, सूक्ष्म लेने के साधन ही नहीं निर विद्युत किये जाते।

है, जिसका विस्तार ही यह बहाएँ है, जिससे सब दिशाएँ उद्भूत हैं, जिससे सब संसार भागिशील है, वही ब्रह्म में है, उसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं हैं, जो कुछ भी गोचर-अगोचर, दृश्य-अदृश्य, अनंदर या बाहर है वह सब उसी एक ब्रह्म की इलक है जिसकी छवि भेरे स्वरूप से भासित हो रही है। यह ब्रह्म ज्ञान की सर्वोच्च अवस्था होती है।

मृत्यु के बाद देव योगि की प्राप्ति

मनुष्य की इस देह के भीतर इन चक्रों के समानान्तर ही सात शरीरों की भी मान्यता की गई है। जैसे ही मृत्यु होती है, यह पार्थिव (पहला) शरीर नष्ट हो जाता है, और व्यक्ति को अन्य छ. शरीरों में से किसी एक में स्थिति प्राप्त होती है। फिर यदि व्यक्ति का आज्ञा चक्र विशुद्ध जाग्रत है, तो प्राण छूटने पर उसे देवताओं वाला शरीर या ब्रह्म शरीर प्राप्त होता है।

आधामण्डल का दर्शन

मंसार में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है, कोई मनुष्य नहीं है, जिसका आधामण्डल नहीं हो। प्रत्येक वस्तु अथवा जीव से निरन्तर एक विशेष रंग की किरणें निःसृत होती हैं, या यों कहें कि किरणों का एक धेरा सा बना रहता है – उसे ही आधामण्डल कहते हैं। पत्थर जैसी बड़ी वस्तुओं में भी आधा होती है, उनमें से भी प्रकाश की किरणों फूटती है, यद्यपि यह आधा मण्डल काफी मंद और सुन्दर होता है। पेड़ पौधों में यह आधामण्डल अपेक्षाकृत अधिक होता है, पक्षियों और पशुओं में और भी अधिक होता है। मनुष्यों में आधामण्डल और भी अशों तक जागत होता है।

तीव्र जिज्ञासा आवश्यक

कुण्डलिनी जागरण के ब्रह्म में कई साधकों की कुण्डलिनी दूसरे या तीसरे चक्र में ही अटक कर रह जाती है, और साधकों को यह ज्ञान भी नहीं होता कि उनके दो चक्र जाग्रत भी हैं। कई बार तो पांचवें चक्र तक पहुंचने पर भी साधक को अपनी स्थिति का ठीक से अनुभव नहीं हो पाता, और विश्वक की इसी स्थिति में कुण्डलिनी की यात्रा रुक जाती है। सहस्रार भेदन करने और सर्वस्व को जान लेने की तीव्र जिज्ञासा यदि बीच में समाप्त हो गई, तो साधक की कुण्डलिनी मात्र किसी एक चक्र में अटक कर ही नहीं रह जाती, वरन् कई बार वह नीचे के चक्रों में बापस गिर भी जाती है। अतः जिज्ञासा को निरन्तर प्रज्ज्वलित किये रहना चाहिये। तीव्र जिज्ञासा साधना के लिये ही नहीं, किसी भी लक्ष्य प्राप्ति के लिये आवश्यक है ही।

जब साधक का तीसरा चक्र जाग्रत होने लगता है, तभी से उसे अन्य लोगों के आधामण्डल का आधास होने लगता है। अगे के और चक्रों के जाग्रत होने पर आधामण्डल का दर्शन और भी स्पष्ट हो जाता है। इस आधा मण्डल को देखकर साधक किसी भी व्यक्ति के बारे में कई बातें पहले से ही जान सकता है। यदि कोई वृक्ष/व्यक्ति किसी रोग से ग्रस्त है, तो साधक उस वृक्ष के आधामण्डल को देखकर ही बता देगा कि चन्द्र दिनों में यह रुक्ष जायेगा या पुनः ठोक हो जायेगा।

यदि कोई व्यक्ति दो क्षण में क्रोध करने वाला है, तो साधक को पहले से ही जान हो जायेगा कि सामने वाला व्यक्ति क्रोध करने वाला है। क्योंकि क्रोधी के क्रोध करने के पूर्व ही उसके विवारों की संवेदनशीलता के कारण उसके आधामण्डल का रंग परिवर्तित होने लगता है। यदि कोई झूठ बोलने वाला होगा, तो उसके आधामण्डल में स्पष्ट रूप से रंग परिवर्तन होने जायेगा, जिससे किसी भी वैतन्य साधक के समक्ष स्पष्ट हो जायेगा, कि अगला व्यक्ति झूठ बोलेगा।

रंग का मन पर बहुत प्रभाव पड़ता है, और मन की स्थिति के अनुरूप ही आधामण्डल का रंग भी बदला दुजा ननर आता है। यदि लाल रंग से रंगे कमरे में, लाल रोशनी में बैठे, तो अपने आप रक्तचाप बढ़ जायेगा, अस्वस्थता हो जायेगी। यदि नीने रंग से रंगी दीवारों वाले बगरे में जाएं, तो रक्तचाप अपने आप ही कुछ कम हो जायेगा। सफेद वस्त्र पहनने पर स्वतः ही मन शुद्ध व ताजा अनुभव करने लगता है, काला वस्त्र पहनने पर भारीपन व तामसी भाव अधिक अनुभव होता है, पीला वस्त्र धारण करने पर परिवर्ता, साधनात्मक ओज अनुभव होता है। यह अनुभव छारा पाये गये तथ्य हैं। इन्हीं तथ्यों की पुष्टि तब होती है, जब वास्तव में व्यक्ति के आंतरिक घावों के बदलने पर आधामण्डल के रंग भी बदलने लगते हैं।

विशुद्ध जाग्रत होने पर आधामण्डल में श्वेत रंग की प्रधानता होती है, श्वेत प्रकाश होता है आहमा का। जबकि आज्ञा चक्र पर पहुंचने के बाद जब साधक ब्रह्म शरीर में स्थित हो जाता है, तब आधामण्डल में स्वरं रंग का हो जाता है। इसी रंग को पुष्ट करने हेतु ब्रह्म ज्ञान के आकांक्षी संत्यासी गेरुए वस्त्र धारण करते पाये जाते हैं, यह ब्रह्म ज्ञान की तेजस्विता का रंग है। सहस्रार जाग्रत होने पर आधामण्डल में पीले वर्ण की प्रधानता होती है। रंगों का महत्व तो होता ही है, इसीलिये अलग अलग प्रकार की साधनाओं में अलग अलग रंगों के वस्त्रों के चयन का निर्देश दिया जाता है।

आज्ञा चक्र जाग्रत होने पर साधक किसी के भी आधामण्डल का भली प्रकार अवलोकन तो कर ही सकता है, साथ ही उसके वर्ण विन्यास, रंग के क्रम में भी स्वेच्छानुसार परिवर्तन कर सकता है। और इस प्रकार आधामण्डल में संगोष्ठन कर वह किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व में भी अनुकूल परिवर्तन ला सकता है। जो इच्छा हो, वैसा कर देना या दूसरे से करवा लेना इसी को तो आज्ञा देने की और आज्ञा मनवाने की क्षमता प्राप्त करना कहते हैं। प्रकृति में ऐसा ही आज्ञा पूर्वक परिवर्तन कर देने की क्षमता इस चक्र में निहित होती है।

कई कई जन्मों का चलचित्र की आंति दर्शन

पांचों तत्त्वों में से आकाश तत्त्व में सर्वाधिक स्फूर्ति होता है, इस आकाश तत्त्व का ही प्रतिनिधित्व विशुद्ध में होता है। परन्तु आकाश से भी अधिक स्फूर्ति दिव्य शक्तियों में होता है जो कि आज्ञा चक्र पर केन्द्रित होती है। आज्ञा चक्र को ही 'तीसरा नेत्र' या 'विद्यु नेत्र' कहा गया है। इसके बाहर होने को ही छठा इन्द्रिय या 'सिन्धु सेन्स' का जाग्रत होना कहा जाता है। ऐसा होने पर साधक किसी के भी माझ चक्र को, उसके कई कई जन्मों के कर्मों को अपने आज्ञा चक्र पर एक चलचित्र की आंति कुछ क्षणों में ही देख सकते हैं।

आज्ञा चक्र : शास्त्रोत्तर स्वरूप

आज्ञा चक्र का स्वरूप दो दलों वाले एक श्वेत कमल के समान है, जिसके अन्दर सूक्ष्म रूप से 'मनस तत्त्व' विद्यमान है। कमल के मध्य में एक त्रिकोण है, जिसमें 'प्रगत' (ॐ) बोल स्थित है। इसके दो दल 'सूर्य' व 'चन्द्र' के ब्रह्मण, दाहवता युक्त तथा शीतलतायुक्त गुणों से सम्पन्न हैं। दलों में निहित शक्तियों इस प्रकार हैं—

है— इस दल की शक्ति में साधक के नेत्रों में अत्यंत तेजस्विता आ जाती है, जिससे वह किसी भी वस्तु को ज्ञान में भस्म कर सकता है। इसी दल की शक्ति से जब राम ने लोधीयुक्त होकर लंका जाने समय समुद्र को देखा था, तब समुद्र को धबराकर प्रकट होकर स्थान याचना करनी पड़ी थी। इसी तुनीय नेत्र की ज्वला से भगवान शिव ने दक्ष का यज्ञ विघ्नस किया और कामदेव को भस्म किया था।

है— दूसरे दल से करुणा, प्रेरणा, ममत्व और सूजनात्मक ज्ञाना प्राप्त होती है, जिसके कारण वह दुखी जीवों को सुख और इन्ति प्रदान कर सकता है, मात्र दृष्टिपात्र से लिखन को सम्पन्न, असफल को सफल बना सकता है, भिन्नियों प्रदान कर सकता है, किसी को भी पृष्ठांत दे सकता है।

— ज्ञ 'अप्रैल' 2000 मन्त्र-तंत्र-यत्र विज्ञान '58'

साधना विद्यान

इस साधना को किसी भी दिन प्रातः प्रारम्भ करें। सामने चौकी पर सफेद वस्त्र विछाकर उसपर चावल ये पक छोटा से गोला बनाएं, उसके भीतर कुंकुम से 'ॐ' लिखें। गोले के बाई ओर कुंकुम से 'हूँ' और दाई ओर 'ओं' लिख दें। 'ॐ' के हं ॐ क्षं कपर मन्त्र सिद्ध विशिष्ट लिङ्ग प्राप्त प्रतिष्ठित 'आज्ञा चक्र यंत्र' का स्थापन करें। अपने आसन पर बैठ जाएं और ५ मिनट तक सद्गुरु का शू मध्य ध्यान करें—

शू मध्य ध्यान— साधक धीरे धीरे ध्वास को अन्दर लेकर बाहर छोड़े, इस प्रकार की किया लगभग दो तीन मिनट तक करें। जब नन शान्त हो जाए, तब नलाट के मध्य में भूकटि स्थान पर अपने हष्ट का बिंब देखने का प्रयास करें। पहले कुछ प्रकाश विखाई देगा, प्रकाश का रंग कुछ भी हो सकता है, यह अलग अलग चित्त वाले साधकों के लिये अलग हो सकता है। बाहरी शोभगुल और आवाज से कटने हुए उस प्रकाश में अपने को निम्न लग्न का प्रयास करें। जो दिसे उसका आनन्द लें, जब तक अच्छा लगे ध्यान में रहें, फिर आंखें खोलकर गुरु चित्र के समझ शीश सूका कर प्रणाम करें। इसके बाद सिन्दूर लेकर यंत्र पर १०८ बार गुरु मंत्र का उच्चारण करते हुए तिनक करें।

दोनों हाथों में पुष्प लेकर आज्ञा चक्र की अधिष्ठात्री देवी 'हाकिनी' का ध्यान करें और पुष्प को गंगा पर चढ़ायें— अज्ञानामानुन तदिमकर मदृशं ध्यानाधाम प्रकाशम् । हक्षाम्यां वै कलाम्याम् परिलसित वपुनेत्र पत्रं सुशृगम् ॥ तनमध्ये हाकिनी सा शशिसम धवला वक्त्रवृक्म दधाना । विद्यां मुद्रां कपालं डमरु नपवर्टी विभ्रती शुद्धचिता ॥

फिर 'प्राण संजीवित कृण्डलिनी जागरण माला' (पहले के पांच चक्रों की साधनार्जी में गुरु मला का प्रयोग किया जा सकता है) से निम्न मंत्र की ३ माला ३० दिन तक नित्य नप करें—

आज्ञा चक्र जागरण मन्त्र

॥ उ॒० हं शिवनेत्रं जग्यते उद्भवव्य क्षं उ॒० शं ॥

Om Ham Shri-Netram Jaagrey Udbhaavay Ksham

Om Shri

एक माह बाद जब साधना समाप्त हो जाये, तब यंत्र को पूजा स्थान में गुरु चित्र के समीप रख दें। माला को अमाले चक्र की साधना के लिये सुरक्षित रख दें। यंत्र की साधना सम्पन्न होने के एक वर्ष बाद जल में प्रवाहित कर दें।

*इस साधना की सामग्री कबल गुरु आज्ञा होने पर ही खेजी जायेगी।

दीक्षा

सर्वशान्तिदीक्षा

मनुष्य की समस्त चेष्टाओं का अर्थ क्या है? और क्या है उसके समस्त क्रियाकलापों का उद्देश्य? क्योंकि यह अनायास तो नहीं हो सकता कि व्यक्ति सुबह से शाम तक और शाम से सुबह तक किसी उधेड़बुन में पड़ा रहे। आखिर किस लिए...

ओम ब्रौः शान्तिरत्नरिक्ष (युं) शान्तिः पृथिवी शरण्तिरेत्यः शान्तिरत्नोवधः शान्तिः वस्त्रस्पतिवः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व (युं) शान्तिः शान्तिरेत्व शान्तिः त्वा सा शान्तिरेत्यः जो शान्ति सर्वत्र शुलोक

में है, जो शान्ति अन्तरिक्ष में है तथा जो शान्ति पृथ्वी पर है वही शान्ति जल, औषधि, एवं वनस्पतियों में भी है। समस्त देवताओं के चित्त में, ब्रह्म लोक में तथा समस्त ब्रह्माण्ड में जो शान्ति है वही शान्ति मुझे भी प्राप्त हो।

यत्रुवेद में प्रतिध्वनिन किसी अजात क्रषि की यह वाणी आज भी उत्तमी प्रासंगिक है जितनी कि यह अपने सूनन के क्षणों में रही होगी क्योंकि काल के अंतराल से भले ही सब कुछ परिवर्तित हो जाए — जो नहीं परिवर्तित हो सकता है वह होता है मनुष्य का अन्तमन।

किसी आवरण से मूल का परिवर्तन सम्भव नहीं होता है और सच्चयता-संस्कृति के आवरण परिवर्तन के साथ मनुष्य का जो परिवर्तित हो रहा है वह केवल उसका बाह्य आवरण भर दी है अन्यथा निस प्रकार से पूर्व में मनुष्य हास्य-विषाद युक्त होता था क्या उसमें कोई अंतर परिवर्तित होता है?

वरन्तुतः आज जो परिवर्तित था हो गयी प्रतीन होता है वह है मनुष्य की जीवन शैली, जिन्हें यह किसी व्यापक या



मूलभूत परिवर्तन की परिचायक तो नहीं कहा जा सकती और वर्तमान की इसी जीवन शैली की वृष्टि से वे खने पर आज वो बात पुनः सर्वाधिक प्रासंगिक हो गयी विख्याती है वह है कि मनुष्य के अन्तर्मन को एक शान्ति की (पहले की अपेक्षा कहीं अधिक) प्रबल आवश्यकता है।

वहाँ शान्ति से हमारा नात्पर्य किसी ध्वनि प्रदूषण या noise pollution की समस्या के निराकरण से नहीं है वरन् उस शान्ति से है जो अन्तर्मन की शान्ति होती है। शान्ति शब्द का जो अर्थ है वह मात्र इतना ही है कि व्यक्ति अपने मनोव्याघ्रित दंग से स्वयं को स्वयं में एकाग्र कर सके।

एकाग्रता को इस क्रिया को जहाँ एक योगी चैतन्य रूप में समर्पित करता है वही सांसारिक व्यक्ति अस्पष्टता, भ्रम, मन्दह और अवचेतन मालास के साथ करने का प्रयास करता रहता है।

किसी संगोष्ठी की तरंग के साथ स्वयं को बेहद हल्का गहरास करने लग जाना या मानवीय सेवेकर्माओं से भरो कोई फ़िल्म देखते हुए भावों में हूब कर किसी और जगत में पहुंच जाना, मावनाओं के किन्हीं उद्देशों में स्वयं को (भले ही कुछ पलों के लिए) इस संसार से कटा हुआ अनुभव करने लग जाना, आँखों से आँसूओं की लड़ी का निकल चलना और कुछ देर के बाद स्वयं को शांत-प्रशांत अवस्था में पाना — क्या

ये सब क्रियाएं अनाथास वा महज भावकर्ता में होने वाली क्रियाएँ हैं।

क्या रहस्य छुप होता है ऐसे पलों में? क्या केवल कोई सांसारिक कारण होता है इनके पीछे या कुछ अधिक विस्तृत भावभूमि होती है जोकि मूल में?

जीवन के ऐसे पलों में जो प्राप्त होता है वास्तव में वही शान्ति होती है क्योंकि उस समय इस जगत के क्षुद्र घावों से कुछ पृथक जो हो जाते हैं . . . और ये जाते हैं भावनाओं के उस विशाल सामाजिक में जहां उस भावगम्भीर परम पुरुष का यास है।

अपने प्रतिदिन के जीवन में स्वयं को बन्धनों में उत्तमाते रहना तथा यह आशा करना कि शान्ति की अनुभूति हो सके – यह तो कुछ ऐसी ही विरोधाभासी बात है ज्यों कोई यह चाहि कि उसे सूर्य की उच्च एवं चन्द्रमा की शीतलता दोनों एक ही समय में और एक ही साथ समान रूप से मिल सके।

जीवन में कर्तव्य होते हैं मध्याह्न के सूर्य सदृश्य,

और परम सत्ता ये एकाकार होने या आत्मलीन होने के अण होते हैं पूर्णिमा के चंद्र की अभा से सुखद शीतल। दोनों का परस्पर सम्बन्ध ही कहां?

इसी सम्बन्ध के अभाव के कारण ही तो होता है जीवन में शांति का अभाव क्योंकि यह तो व्यवहारिक रूप में संभव भी नहीं कि व्यक्ति अपने जीवन में कर्तव्यों से विमुख हो जाए। वस्तुतः कर्तव्यों से मुक्ति इस संसार में किसी के लिए भी सम्भव नहीं है यहां तक कि योगी के लिए भी नहीं। यह बात और है कि योगी के कर्तव्य और उसके कर्तव्य पालन का ढंग इस जगत के कर्तव्य पालन की रूढ़िवादी परिभाषा से मिल होता है।

ऐसा किस कारण से यह भव्य होना है कि कर्तव्य तो योगी के ऊपर भी आरोपित होते हैं किन्तु वह उनमें उद्धिष्ठ न होकर शान्त ही बना रहता है? यदि एक बार इस बात का विवेचना कर ली जाए तो इसे वह समझने में सरलता रहेगी कि क्या होता है शान्ति का रहस्य।

दीक्षाभिभावियेद् शान्तिम्

दीक्षाओं के ग्राह्यात्म से ही परम शान्ति उपलब्ध होती है।

प्रतीक हैं। जब तक मन अशान्त रहता है, तो उसका प्रभाव उसकी देह पर भी पड़ता है, साथ ही व्यक्ति बार-बार असफल भी होता रहता है क्योंकि अशान्त मन उसकी शक्ति विच्छिन्न कर देता है। जिस प्रकार पांचों अगुलियों को बन्द कर देने से मुष्टि बन जाती है, उसी प्रकार मन की अशान्ति को दूर कर उसमें शान्ति का भाव भरना ही सर्वशान्ति है। सर्व शान्ति का तात्पर्य है कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी विना घबराये, अपने आपको उस कष्ट से बाहर निकाल लेना, अपनी शक्ति को विभक्त होने से रोककर एक ऐसा प्रवाह देना जो देह शक्ति, कार्य शक्ति, ज्ञान शक्ति को सहज गुणा कर सके।

जगत के पालनकारी भगवान विष्णु हैं और उनके ध्यान मंत्र में पहला शब्द है – ‘शान्ताकारं भूजनं शब्दनं परम नामं सुरेशं . . .’ यहां भगवान विष्णु के वर्णन में प्रारम्भ में ही कहा गया है, कि जो शान्त स्वरूप है। यदि भीतर अशान्ति है तो व्यक्ति के जीवन का स्वरूप भी शान्त नहीं बन सकता। शान्ति का तात्पर्य कायरता नहीं है, शान्ति का तात्पर्य है कठिन से कठिन स्थिति में भी विचलित न हो और स्वरूप में वह शान्त भाव हो कि कोई कष्ट देने का विचार ही न कर सके, ऐसा शान्त स्वरूप जिसे देखते ही समझने वाला सम्मोहित हो जाये। कोई स्वरूप से लम्होद्धन उत्पन्न नहीं किया जा सकता, कोई रूप से कोई भी क्रिया सफल नहीं हो सकती, कोई में तो शक्ति हजार दिशा में विच्छिन्न हो जाती है।

‘सर्व शान्ति दीक्षा’ का तात्पर्य है वह शान्ति पूर्ण रूप से प्राप्त हो जाये, जो भगवान विष्णु में है, भगवान शिव में है। सर्व शान्ति दीक्षा शरीर के अणु अणु में पैली हुई चेतना को एक प्रवाह में जाने की क्रिया है जिस प्रकार लोहे के ऊपर चुम्बक को घर्षण करने से लोहे के अणु तत्व शान्तियुक्त बनकर चुम्बकीय प्रभाव से युक्त हो जाते हैं, वही स्थिति जीवन की है, कि गुरु का स्पर्श हो, विच्छिन्न होती हुई चेतना संयुक्त होकर प्रवाहयुक्त पुंज बन जाये और वह पुंज प्रगट हो। गुरु तो शिष्य को अपने जैसा ही शान्त और शिवं बनाना चाहते हैं, इसीलिये स्वयं शिष्य के जीवन का जहर घटण करते हुए भी वे उसे सर्वशान्ति युक्त अमृत प्रवान करते हैं।

❖ योगः कर्मसु कौशलम् ❖

कार्य में कुशलता ही वास्तविक योग है, वही सर्वप्रकाशण शान्ति प्राप्ति का उपाय भी है और वही आव है सर्व शान्ति दीक्षा का भी।

यजुर्वेद की जिस प्रार्थना... जो शान्ति बुलोक में है, जो शान्ति जल, दनस्यति, अन्तरिक्ष, ब्रह्म लोक, देवताओं के चित्त में है वही शान्ति मुझे भी प्राप्त हो... से इस आलेख का प्रारम्भ किया वह स्वयं में गाय एक प्रार्थना भर न होकर एक सूत्र भी है शान्ति को प्राप्त करने का।

— क्या वह सम्भव है कि जिस नृषि ने ऐसे रूपबन को उच्चरित किया उसने पहले जल, धूल, नम, अन्तरिक्ष आदि में निहित किसी शान्ति का अनुभव न किया होगा? क्या उसने किसी नादात्मक को सम्पन्न नहीं किया होगा?

शान्ति स्वयं तो मुखर होकर व्यक्त हो नहीं सकती शान्ति तो केवल अनुभूत की जा सकती है और अध्यात्म में जिस देवी देवता या जिस भावभूमि का अनुभूत किया जाना अभीष्ट हो उससे तादात्मक करना होता है, इसके अतिरिक्त कोई अन्य उपाय सम्भव ही नहीं।

यह सत्य है कि जीवन में कर्तव्य रूपी सूर्य की प्रचण्ड ऊष्मा विद्यमान है, दूसरी ओर अध्यात्म की पूर्ण चंद्र सदृश्य सुखर शीतलता भी हमें आकृष्ट कर रही है — दोनों ही हमारे लिए समान रूप से बांछीय हैं तथा इस बात का भी हमें जान है कि जिस प्रकार से सूर्य और चंद्र दोनों की एक साथ युति नहीं हो सकती, उसी प्रकार से इन दोनों भावभूमियों का सामंजस्य होना भी यदि असम्भव न कहें तो भी कठिन तो अवश्य है।

ऐसी स्थिति में सहज प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या फिर शान्ति की भावभूमि केवल किसी गृह त्याग चुके विरक योगी तक ही सीमित रह जाने वाली भावभूमि है?

ऐसा प्रतीत तो नहीं होता क्योंकि हागरे जिन नृषियों ने यजुर्वेद (एवं अन्य वेदों की) की रचना की, वे स्वयं में पूर्णता के साथ पारिवारिक जीवन से संयुक्त व्यक्तित्व हुए हैं।

यह सत्य है कि सूर्य व चंद्र की एक ही घड़ी में संयुक्ति नहीं हो सकती, किन्तु एक ऐसी भी वेला होती है जब काल के पल सूर्य व चंद्र दोनों के साथी बनते हुए भी दोनों के आधिपत्य से मुक्त होते हैं और वह होती है गोधूलि की वेला — जो स्वयं में पवित्रतम वेला वर्णित की गयी है।

जहां संयुक्ति भी हो रही हो और संयुक्ति के उपरान्त

भी आसकि न हो रही हो — जीवन में जब ऐसा पल आता है वास्तव में तभी किसी व्यक्ति के मन में शान्ति की कोई भावभूमि स्पष्ट हो सकती है।

जीवन में गुरु का साहचर्य भी एक गोधूलि की वेला सा पावन अवसर होता है और शिष्य प्रयास करे, अनुभूत करे, विज्ञास करे तो नित्य होता है, हर पल होता है क्योंकि इस सचराचर ब्रह्माण्ड में केवल एक वह गुरु सत्ता ही होती है जो काल के बंधन से सर्वथा परे होती है और वही अपने शिष्य को आत्मवद् बनाते हुए उसे भी मुक्त कर देने की सामर्थ्य रखती है।

शान्ति की भावभूमि ऐसी भावभूमि है जिसे गुरु चरणों में बैठ कर ही अनुभूत किया जा सकता है किन्तु इसका तात्पर्य किसी अनुभूति या sensation अथवा रीढ़ की हड्डी में किसी गृदग्धी से कदापि नहों है।

जीवन सर्वप्रकारेण न्यूनताओं, बाधाओं, उपद्रवों से मुक्त होता हुआ एक अविरल प्रवाह की भाँति गतिशील हो सके, भौन्दर्यवान हो सके, आन्मतृप्त व आप्नकाम हो सके, इस हेतु पूज्यपाद गुरुदेव ने जिस दीक्षा के विधान को अपने शिष्यों के मध्य सुलभ करने का विचार निर्मित किया है वह है — सर्व शान्ति दीक्षा।

शिष्य का जो भी चिंतन हो, गुरु का लक्ष्य तो अपने शिष्य के प्रति मात्र इन्हाँ ही होता है कि शीघ्रानिशीघ्र उनका शिष्य आप्नकाम (सांसारिक इच्छाओं से पूर्ण) होता हुआ उम आनन्द रूपी समुद्र में उनके साथ प्रवेश पा सके जिस आनन्द रूपी समुद्र में गुरु का व्यथार्थ वास होता है।

इन आओं में जहां यह सर्व शान्ति दीक्षा एक ओर से अध्यात्मिकता के प्रभावों से युक्त दीक्षा है तो वहीं दूसरी ओर यह स्वयं में पूर्णरूपेण भौतिक व्रत की दीक्षा भी है।

वस्तुतः जीवन की गति हमारी स्वेच्छा से संचालित न होकर संचालित होती है अनेकानेक अन्य कारणों व दबावों से। कहीं कोई विवशता का एक कारण बन जाता है, तो कहीं कोई दूसरा और इसमें जो घुटन होती है वहीं होती है अशान्ति का मूल कारण। यदि दो टूक शब्दों में कहें तो यदि एक बार व्यक्ति अपने जीवन में अशान्ति को दूर करने का स्थायी उपाय जान ले तो जो शेष रह जाएगो वह शान्ति ही तो होगी और ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति जीवन के प्रति साझी भाव को अपना सके।

अपने विशद अर्थों में सर्व शान्ति दीक्षा साधक की वही साधी-भाव प्रदान करने का व्यवहारिक रूप है।

सावधार्या हूँ

नाथक, गठक तथा सर्कन समय के लिए समय के बेस्टी स्पष्ट हैं, जो किसी भी व्यक्ति के जीवन में उत्तरिया अनुरूप के कारण होते हैं तथा जिन लक्षण अपने हिंदू उत्तरिया मार्ग प्राप्त कर सकते हैं

नीचे दी गई तारीखों में तारीख को दीन रुपों में प्रस्तुत किया गया है – ऐसा भव्यम और निम्न जीवन के लिए आवश्यक किसी भी कार्य के लिये वह वह व्यापार से सम्बन्धित हो, नीकरी से सम्बन्धित हो।

यह में इन उत्तरियों से सम्बन्धित हो जायदा अन्य किसी भी कार्य से सम्बन्धित हो, आप इस श्रेष्ठतम समय का उपयोग इस रूपते हैं और सफलता ला प्रतिशत 99.9% आपके जीवन में अकिल हो जायेगा।

उद्दे किसी करणवश आप श्रेष्ठ समय का उपयोग नहीं कर सकें, तो मध्यम समय का प्रयोग कर सकते हैं। इस जीवन में भी नार्ता पूर्ण होता है और प्रतिशत होता है 75% अर्थात् जाय

पूर्ण होने से पैलब होता है, किन्तु सफलता निलंबी है।

निम्न समय का उपयोग तो सदा से निविदा है, ज्योके यदि इनसे दूर कार्य का ग्राहक मूल वश भी निम्न समय में हो जाय, तो वह बिगड़ जाता है। अलग प्रयोग व्यक्ति को चाहिए, कि निम्न समय में किसी भी इकार के जाय का ग्राहन न ले।

वार्ष

कि यह
नार्ता दिन

अनुकूल
प्रकाशित-
जिन्हें स

15 अप्रैल

16 अप्रैल

17 अप्रैल

18 अप्रैल

19 अप्रैल

20 अप्रैल

21 अप्रैल

22 अप्रैल

23 अप्रैल

24 अप्रैल

25 अप्रैल

26 अप्रैल

वार/दिनांक	श्रेष्ठ समय	मध्यम समय	निम्न समय
रविवार (2, 9, 16, 23, 30 अप्रैल 7, 14 मई)	ब्रह्मघुर्त 4.24 से 10.00 तक साय 6.48 से 7.36 तक साय 8.24 से 10.00 तक रात्रि 3.36 से 4.24 तक	प्रातः 10.00 से 2.00 तक रात्रि 10.48 से 1.12 तक	दोपहर 2.00 से 6.48 तक साय 7.36 से 8.24 तक रात्रि 10.00 से 10.48 तक रात्रि 1.12 से 3.36 तक
सोमवार (3, 10, 17, 24 अप्रैल 1, 8, 15 मई)	ब्रह्मघुर्त 4.24 से 7.30 तक प्रातः 10.48 से 1.12 तक दोपहर 3.36 से 5.12 तक साय 7.36 से 10.00 तक रात्रि 1.12 से 2.48 तक	प्रातः 9.00 से 10.48 तक दोपहर 1.12 से 3.36 तक साय 6.00 से 7.36 तक रात्रि 10.00 से 1.12 तक	प्रातः 7.30 से 9.00 तक साय 5.12 से 6.00 तक रात्रि 2.48 से 4.24 तक
मंगलवार (4, 11, 18, 25 अप्रैल 2, 9, 16 मई)	प्रातः 6.00 से 8.24 तक प्रातः 10.00 से 12.24 तक साय 7.36 से 10.00 तक रात्रि 12.24 से 2.00 तक रात्रि 3.36 से 4.24 तक	ब्रह्मघुर्त 4.24 से 5.12 तक प्रातः 9.12 से 10.00 तक साय 6.00 से 7.36 तक रात्रि 10.00 से 12.24 तक रात्रि 2.48 से 3.36 तक	प्रातः 5.12 से 6.00 तक प्रातः 8.24 से 9.12 तक दोपहर 12.24 से 4.30 तक साय 5.12 से 6.00 तक रात्रि 2.00 से 2.48 तक
बुधवार (5, 12, 19, 26 अप्रैल 3, 10, 17 मई)	ब्रह्मघुर्त 4.24 से 6.00 तक प्रातः 7.36 से 9.12 तक प्रातः 11.36 से 12.00 तक दोपहर 3.36 से 6.00 तक साय 6.48 से 10.48 तक रात्रि 2.00 से 4.24 तक	प्रातः 6.00 से 7.36 तक प्रातः 9.12 से 11.36 तक दोपहर 2.00 से 3.36 तक रात्रि 10.48 से 12.24 तक	दोपहर 12.00 से 2.00 तक साय 6.00 से 6.48 तक रात्रि 12.24 से 2.00 तक
गुरुवार (6, 13, 20, 27 अप्रैल 4, 11, 18 मई)	प्रातः 4.24 से 8.24 तक प्रातः 10.48 से 1.12 तक साय 4.24 से 6.00 तक साय 7.36 से 10.00 तक रात्रि 1.12 से 2.48 तक	प्रातः 9.12 से 10.48 तक दोपहर 10.12 से 1.30 तक साय 6.00 से 7.36 तक रात्रि 10.00 से 1.12 तक	प्रातः 8.24 से 9.12 तक दोपहर 1.30 से 4.24 तक साय 6.00 से 7.36 तक रात्रि 2.48 से 4.24 तक
शुक्रवार (7, 14, 21, 28 अप्रैल 5, 12 मई)	ब्रह्मघुर्त 4.24 से 6.00 तक प्रातः 6.48 से 1.12 तक साय 4.24 से 5.12 तक साय 8.24 से 10.48 तक रात्रि 1.12 से 3.36 तक	दोपहर 1.12 से 4.24 तक साय 8.00 से 7.36 तक रात्रि 10.48 से 1.12 तक	प्रातः 6.00 से 6.48 तक साय 5.12 से 6.00 तक साय 7.36 से 8.24 तक रात्रि 3.36 से 4.24 तक
शनिवार (1, 8, 15, 22, 29 अप्रैल 6, 13 मई)	ब्रह्मघुर्त 4.24 से 6.00 तक प्रातः 10.30 से 12.24 तक दोपहर 3.36 से 5.12 तक साय 8.24 से 10.48 तक रात्रि 2.00 से 3.36 तक	प्रातः 7.36 से 8.24 तक दोपहर 1.12 से 2.00 तक साय 6.00 से 8.24 तक रात्रि 10.48 से 12.24 तक	प्रातः 6.00 से 7.36 तक प्रातः 8.24 से 10.30 तक दोपहर 12.24 से 1.12 तक दोपहर 2.00 से 3.36 तक साय 5.12 से 6.00 तक रात्रि 12.24 से 2.00 तक रात्रि 3.36 से 4.24 तक

यह हमनों नहीं कराहिरु ने कहा है

किसी भी कार्य के प्रारम्भ करने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति के अब भी संशय-असंशय की भावना रहती है, कि यह कार्य सफल होगा या नहीं, सफलता प्राप्त होगी या नहीं, बाधाएं तो उपस्थित नहीं हो जायेगी, फल नहीं दिज या प्रारम्भ किस प्रकार से होगा, दिन की समाजिक पर वह स्थित को तावरीहत कर पायेगा या नहीं।

प्रत्येक व्यक्ति कुछ ऐसे उपाय अपने जीवन में अपनाना चाहता है, जिसे उसका प्रत्येक दिन उसके अनुकूल एवं आनन्द युक्त बन जाय। कुछ ऐसे ही उपाय आपके समक्ष प्रस्तुत हैं, जो वराहिमिहिर के लिये प्रकाशित-अप्रकाशित ग्रंथों से संकलित हैं, जिन्हें वहां प्रत्येक दिवस के अनुसार प्रस्तुत किया गया है तथा जिन्हें सम्पन्न करने पर आपका पूरा दिन पूर्ण सफलतादायक बन सकेगा।

15 अप्रैल	प्रत्येक कार्य से पूर्व पांच बार 'ॐ ही ही ओ' (Om Hreem Hreem Om) का उच्चारण करें।	प्रातः पाठ करें, कथों में सफलता की समाचारना बढ़ेगी।
16 अप्रैल	प्रातः ब्रिस्टर से उठने समय जिस और का इवास चल रहा हो, उसी पैर को सबसे पहले शूष्मि पर रखें।	प्रातः काल किसी भी पैदल के एक ही पैर की लेकर, उस पर कुंकुम से 'हूं' लिखें तथा उसे पूजा न्यान में सख्तकर उस पर एक सुपाली न्यायित बर उपें देव स्वरूप मानने हुए उसका संक्षिप्त पूजन करें।
17 अप्रैल	प्रातः काल गुरु चित्र के समाध खड़े होकर निम्न इलोक का पांच बार उच्चारण करें— कारुण्य सिन्धु निखिले शबर! दीनवन्ध! प्रेमावतार! परिपोष्य शिष्यवर्गम्। भोह निवार्य परि लक्ष्य चित्त स्वरूपं, वन्दे गुरो! निखिलं ते चरणारविन्दम् ॥	प्रातः काल आडियो कैमेट 'दुर्लभोपाविष्व' का अवण करें, उत्साह पूर्व आन्य विश्वास में वृद्धि होगी। भोजन करने से पूर्व गाय को कुछ खाने को अवश्य दें। प्रातः तुलसी के बृक्ष में एक कलंग जल अपित कर अगरबत्ती दिखाएं, पूरा दिन सफलनायुक्त रहेगा। घर से बाहर जाने समय योहा नमक पैर के नाचे मसाल कर जाये, कार्य में आने वाली बाधाएं समाप्त होंगी। सफेद वस्त्र धारण करना आज के दिन दूष रहेगा। पीचले के पत्ते पर मिज्जान रखकर हनुमान मन्त्रों में चढ़ाने से आज आपको शुभ समाचार प्रिस सकता है। एक सप्तवरुपाल में शोडी मिट्टी, आज निल व नमक बाध कर घर में बाहर केक दें, शान्ति अनुपव होगी। भगवती दुर्गा के चित्र के समाध नील लाल हुए चढ़ाकर आज योग की प्रारंभना करें।
18 अप्रैल	प्रातः काल स्मृत्युवर से पहले ही पूजा न्यान में कुंकुम से स्वस्त्रिक बनाकर उस पर जल से प्रसा कलश स्थापित करें।	आज अक्षय नूरीया है, साथना के इस सिद्धातम मुदूर्न में आज के दिन से कोई साधना प्रारम्भ करें।
19 अप्रैल	प्रातः काल स्मृत्युवर चावल या अक्षत के ११ दाने 'ओ' बीज मंत्र का उच्चारण करने हुए भगवान शणपति के चित्र अथवा विश्व हर पर अपित करें।	'ओ नमः शिवाय' नव से शिवलिङ का १०८ बार अभिषेक करें, फिर उस नल की पी ले।
20 अप्रैल	प्रातः काल हनुमान जी के चित्र अथवा हनुमान भन्दिर में नाकल गुड़ व चने का योग नमाएं, व संकट निवारण की प्रारंभना करें।	आज गुरु पूजन के समय पाठ करें, नाचे चढ़ाकर आज योग की प्रारंभना करें।
21 अप्रैल	गुरु नम दिवस के रूप में प्रातः, 'विचिदिलेश्वरानन्द स्तवन' का पूर्ण पाठ करें, दिवस पर्यान्त गुरु चिन्नन करें। गुरु साधना सम्पन्न करें, गुरु मंत्र का अधिकारिक नप करें तथा सामय्यानुसार गुरु लोता करने का संकलन लें।	प्रातः गुरु पूजन के समय कोइ मौसमी फल चढ़ा। आज प्रातः भूम्याम गुरु आण्णो अवश्य रहें।
22 अप्रैल	प्रातः गुरु पूजन कर निम्न इलोक का ११ बार पाठ करें— ज्ञान विज्ञान सहितं लभ्यते गुरु भक्तिः तः । गुरोः परतरं नास्ति ध्येयः स गुरु मार्गिभिः ॥	प्रत्येक कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व गुरु अथवा हठ का समरण कर कार्य में अनुकूलता वाली प्रारंभना करें।
23 अप्रैल	तेल के दीपक में एक लौंग ढालकर इह आरती लम्पव करें, कथों में भक्तलना मिलेगी।	आज प्रातः चार माला गुरु मंत्र अनिरिक नप करें।
24 अप्रैल	घर से बाहर जाने समय दूध से बने किसी पदार्थ का सेवन कर के नाये, कार्य में अनुकूलता मिलेगी।	आज प्रातः गुरु पूजन के समय धी का दीपक नजारा। 'राम रक्षा स्तोत्र' (नवम्बर १३ अंक) का प्रातः चार करें, तो मानसिक नजारा 'ज्ञेय न देवा, अनुकूलता प्राप्त होगी।
25 अप्रैल	चावल के माल ढाने लेकर उन्हें अपने निर के ऊपर चुमा कर दीक्षण दिशा की ओर फेंक दें।	
26 अप्रैल	'संकटनाशन शणपति स्तोत्र' (मार्च-२००० अंक) का	

अ 'अप्रैल' 2000 मंत्र-तत्त्व-यत्र विज्ञान '63' ल

14.6.2000

या किसी वृथतार से

तब्बो दक्षती प्रधोदयात्

(भगवान् गणपति हर्ये सन्मार्गे को और प्रवृत्त करें।

वया आपने सम्पद्ध की है भगवान् श्री
गणपति के द्वादश रूपों में प्रथम यह -

सुमुख गणपति साथिना

- समस्त देवी-देवताओं में प्रथम पूज्य मंगलमूर्ति भगवान् श्री गणपति का नाम ही है, जिनका स्मरण-मात्र ही मन में स्फूरण उत्पन्न कर देता है। उन भगवान् श्री गणपति के भी अनेकविधि रूपों में सर्वप्रथम रूप है - सुमुख गणपति रूप। उनका लावण्यमय रूप, उनका प्रसङ्गवदन रूप ...



मोदक प्रिय हैं, वे दूर्वा का एक टुकड़ा चढ़ा देने से ही प्रसन्न हो जाने वाले हैं, वे गजवक्त हैं अर्थात् उनका मुख हाथी का है, उनका वाहन मूषक है, वे लुधि के अधिष्ठाता देव हैं, वे कहसि और सिद्धि के पति हैं, शुभ और लाभ उनके मुखदय हैं, वे समस्त मंगल काथों में स्मरण करने वर सफलता देने वाले भी हैं और समस्त विघ्नों का विनाश करने वाले भी हैं ...

-एम्भ्रवतः किसी भी धर्मग्राण व्यक्ति को भगवान् श्री गणेश का अधिक परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वे जनसामान्य के मन-प्राण में व्यसे हुए देव हैं जौर जो मन-प्राण में व्यसे होते हैं, व्यक्ति उनकी अभ्यर्थना किसी विशेष विधि-विधान के साथ मन के भावों से भी करना अति आवश्यक है।

मन के भावों से केवल भगवान् श्री गणपति की ही नहीं किसी भी देवी या देवता की स्तुति की जा सकती है और इसमें कोई दोष भी नहीं है जब तक ऐसा करना निःस्वार्थ हो। मानसिक पूजन समस्त पूजन विधानों में सर्वश्रेष्ठ माना गया है किन्तु केवल उसी स्थिति में जहाँ भक्त और भगवान् के मध्य का सेव मिट चला हो।

व्यवहार में होता यह है कि व्यक्ति भक्ति के माध्यम से वरन्तु, अपने जीवन के लिए कुछ याचना सी कर रहा होता है और यदि कटु सत्य कहा जाए तो इस तरह से वह किसी अन्य को नहीं वरन् स्वयं को ही छल रहा होता है।



नहाँ जीवन में कोई कामना हो और देवी देवताओं के बल को प्राप्त करने की कामना हो। वहाँ भक्ति का आचरण छोड़कर साधना का अवलम्बन लेना भी हमारी ही भारतीय परम्परा रही है। इस बात को विशेष स्वयं से कहना इस कारण से आवश्यक हो गया था क्योंकि कौन धार्मिक व्यक्ति नहीं है जो परम्परा में गणपति पूजन की महत्ता से अनभिज्ञ हो और

ऐसे धर्मप्राण हों 'श्री लाभ' नहीं के दैविक भी अपना देव को पूज्य देव और कल्पवर्णित करें।

सुगम बन है किंतु व नीचे सत्य के साथ भी का स्वरूप

स्वस्य वृ पूज्य देव प्रकार से परिचित गणपत्य

तत्र ही वासनविविकुति पोषक न वज्जनाओं श्रेष्ठता न

न शरीर सबल अ को जो बनती है नहीं। सं

करता भ और नि कि सौ-

ऐसे धर्मप्राप्त व्यक्तियों का कोन सा ऐसा व्यापार स्थल होगा जहाँ 'श्री गणेशाय नमः' अकित नहीं होता है अथवा 'शुभ-लाभ' नहीं लिखा रहता है? ये सभी क्रियाएं भगवान् श्री गणपति के वैदिक बल की कामना नहीं तो और क्या है? नि-संदेह इनका भी अपना अर्थ है किन्तु विचार करके देखें तो क्या ये किसी भी देव को एक सोमा में बांध देने की क्रियाएं नहीं हैं?

गणपति के बल विष्णु-विनाशक, मंगलकारक प्रथम पूज्य देव ही नहीं वरन् इससे भी अधिक प्रभावशाली, समर्थ और कल्याणकारी देव है। उनके प्रभाव को केवल इतना ही वर्णित करना एक प्रकार से उनके मूल्यांकन में त्रुटि करना है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि किसी गृह सत्य को सुगम बनाने के लिए कथा का आश्रय लेना आवश्यक हो जाता है किन्तु कालान्तर में होता यह है कि उस कथा के आवरण के नीचे सत्य ही दब जाता है: पुराणों में वर्णित अधिकांश कथाओं के साथ भी यहाँ हुआ है और इसी कारणवश भगवान् श्री गणपति का स्वरूप भी एक सीमितता में आवश्यक हो कर रह गया है।

प्राचीन काल में जब साधनाओं के प्रति समाज का स्वरूप वृष्टिकोण था तब भगवान् श्री गणपति के बल प्रथम पूज्य देव ही नहीं वरन् साधनाओं की आधार-भूमि थे। जिस प्रकार से शाक तंत्र, शैव तंत्र से हम आज भी किसी रूप में परिचित हैं उसी प्रकार से गणपति से सम्बन्धित पृथक गणपत्य तंत्र भी उस्तित्व में था।

तंत्र स्वर्य में जीवन का सौन्दर्य होता है क्योंकि केवल तंत्र ही वह विधा (style) है जिसके पास जीवन के प्रति वास्तविक दृष्टि है, यह बात और है कि तंत्र का अर्थ आज विकृत क्रिया जा चुका है। तंत्र स्वर्य में किसी उन्मुक्तता का पोषक नहीं है किन्तु तंत्रका यह कहना अवश्य है कि व्यर्थ की बननाओं से जो मन कुठित हो जाता है वह भी स्वर्य में कोई श्रेष्ठता नहीं हो सकती।

तंत्र शरीर छोड़ कर चलने की बात नहीं कहता और न शरीर छोड़कर चला जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ, स्वस्त और सुखद होना चाहता है और इस प्रकार से उपके मन को जो त्रुष्टि गिलती है वही साधनाओं में गति का आधार बनती है। सौन्दर्य से ही आत्मविश्वास आता है, कुरुपता से नहीं। संसार में कोई भी नहीं होगा जो कुरुपता का उपासक हो।

प्रत्येक व्यक्ति अपने दंग से अपने सौन्दर्य का विकास करता भी रहता है किन्तु सौन्दर्य से भी जो विशेष बात होती है और जिसका ज्ञान प्रायः व्यक्ति को नहीं होना वह यह होती है कि सौन्दर्य के साथ-साथ व्यक्ति में एक लालित्य अर्थांत्

वयों बुझा-बुझा रहता है सारा चेहरा? वयों नहीं खिला-खिला रहता है यह मन? वयों घेरे रहती है हर समय एक उकासी? कब समय निकालेंगे आप अपने आप से ही जुड़े इन प्रश्नों पर विचार करने के लिए?

सुकोमलता, रमणीयता एवं सरसता भी हो।

सम्भवतः किसी अन्य देवी या देवता के लिए ललित शब्द का प्रयोग नहीं हुआ होगा किन्तु भगवान् गणपति के लिए जो विशेषण प्रमुखता से प्रयुक्त हुआ है वह यहाँ शब्द है।

ललित शब्द यद्यपि अपने भाव में सम्मोहन के बहुत निकट है किंतु वास्तव में इसका जो भाव है वह सम्मोहन से कहीं अधिक विस्तृत है।

यदि संक्षेप में कहा जाए तो सम्मोहन यदि एक बाढ़ भाव है तो वही लालित्य व्यक्ति का आत्म भाव, उसका स्वपन और जहाँ आत्म-पश के श्रृंगार अर्थात् लालित्य की बात हो वहाँ सत्य तो यही है कि ऐसी विशिष्टता व्यक्ति के बल विशिष्ट साधनाओं के माध्यम से ही अर्जित कर सकता है। विशिष्ट साधनाओं को ही दूसरी संज्ञा है-तांत्रिक साधनाएँ।

विशद रूप में तो तांत्रिक दंग से भगवान् श्री गणपति की अनेकविध रूपों में साधना सम्पन्न करने का विधान है वथा-द्विमुखगणपति, नृत्यगणपति, उड्डर्वगणपति, सुष्टिगणपति, द्विनगणपति इत्यादि किन्तु शहस्र साधकों हेतु द्वादश रूपों-सुमुख, एकदंत, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाशक, विनायक, धूमकेतु, गणाध्यक्ष, भालघड़ एवं गजानन की तांत्रिक साधना का ही विशेष महत्व कहा गया है तथा इनमें भी प्रथम है सुमुख गणपति की साधना।

भगवान् श्रीगणपति की सुमुखना का तात्पर्य केवल उनका देवीय व अलौकिक रूप-रंग नहीं भपिन् इससे कहीं अधिक विस्तारित है। केवल रूप-रंग, सौन्दर्य का परिपूर्णता शायद ही भी नहीं सकते। देहिक सौन्दर्य से भा जो विशिष्ट स्थिति होती है वह यह होती है व्यक्ति के सौन्दर्य में किसी आभा (grace) का भी समावेश हो।

जिस तरह से मुरझाए पुष्प में कोई सौन्दर्य नहीं होता है उसी तरह से आभाहीन सौन्दर्य का भी कोई अर्थ नहीं होता है और यह आभा व्यक्ति किसी प्रसाधन से भी नहीं प्राप्त कर सकता और न ही किसी कॉस्मेटिक सजरी से।

सौन्दर्य तो उसको कहते हैं जहाँ सारे का सारा व्यक्तित्व किसी शीतल आभा से विष-विष कर रहा ही भले

प्रथम पूज्य भगवान् श्रीगणपति से सम्बन्धित
उनकी साधना का सर्वप्रथम और सर्वोत्कृष्ट
रूप, जो आज तक सीमित रहा केवल गुरु-
परम्परा में, किसी भी साधक के जीवन को
आमूल-चूल परिवर्तित कर देने में समर्थ!

ही फिर आयें और नाक सौन्दर्य के मापदण्डों की कसीटी पर
खरी उत्तर रही हो या न उत्तर रही हों और यह आभा व्यक्ति के
जीवन में जिस उपर्य से समाहित हो सकती है वह केवल यही
हो सकता है कि व्यक्ति के अन्तर्मन में बुद्धिमत्ता, उदात्त
भावनाओं व गङ्गन आस्था का संगम सा हो रहा हो।

इस संगम से जिस त्रिवेणी का निर्माण होता है वही
मूक शांति बन सारे व्यक्तित्व में फैल जाती है और इसी को
लालित्य कहते हैं। इसी लालित्य के कारण ही भगवान्
श्रीगणपति को मंजुल भी कहा गया है और उनकी यह मंजुलना
या लालित्य जिस साधना के माध्यम से साधक में समाहित
हो सकता है उसे ही सुमुख गणपति साधना कहा गया है।

सुमुख गणपति साधना का तात्पर्य है कि व्यक्ति में
सौन्दर्य तो आए ही साथ में वह स्थिति भी आए जिससे वह
सौन्दर्य स्थायी हो सके, अर्थवान हो सके, वैदिक सौन्दर्य के
साथ-साथ मन का सौन्दर्य भी आ सके। जिस व्यक्ति में मन
का सौन्दर्य होता है उसके सारे के सारे व्यक्तित्व में ऐसी
सम्प्रोहकता आ जाती है कि उसे अपने विषय में बोल कर कुछ
बताने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है, उसके पास जाते
ही सारा मन शांत और स्थिर हो जाता है।

... ठीक वैसे ही जैसे किसी ढाली पर खिला कोई
पुष्प, जो बिना कुछ कहे अपना परिचय एक सुगन्ध के माध्यम
से स्वर्य दे देता है।

सुमुख गणपति साधना करने का विधान स्वर्य में
अन्यतं सरल और सहज है यद्यपि यह एक तांत्रिक साधना ही
है। जिन्हें तांत्रिक साधना के नाम पर किसी लज्जे-चौड़े विधान
की अपेक्षा हो उन्हें शायद कुछ निराशा हो सकती है।

भगवान् श्रीगणपति से सम्बन्धित किसी भी साधना
को करने का दिवस वैसे तो बुधवार ही निश्चिरित है किन्तु इस
साधना की यह विशेषता है कि इसे किसी भी दिवस सम्पन्न
किया जा सकता है। बस जिस दिन मन में कुछ नूतन करने
का भाव उमड़े, ऐसी लेष साधनाओं के प्रति विश्वास भाव
प्रवर्द्धन हो तथा सबसे बड़ी बात यह कि इस बान में वृढ़ आस्था

हो कि अन्ततो शक्ति जो स्वर्य के भीतर से आता है चाहे वह
जान हो शांति हो या सौन्दर्य वही वास्तविक होता है—तो वस
वही दिन इस साधना को करने का सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त है।

सुनुख गणपति साधना

इस एक दिवसीय साधना को या तो प्रातः चार से
पाँच बजे के पश्च में करें अथवा रात्रि में दस से ज्याहर के
पश्च। साधना में वस्त्रों का रंग पीला हो तथा दिशा उत्तर रहे।
साधना हेतु साधक के पास ताप्रपत्र पर अंकित 'गणपति
प्रत्यक्ष यंत्र' तथा 'मूर्गे की माला' होनी आवश्यक है। इन
दोनों सामग्रियों को किसी ताप्रपत्र में स्थापित कर इन्हें जल
से धोए तथा पौछ कर पुष्प, कुंकुम, अशत, गंध से संक्षिप्त
पूजन करें एवं निम्न प्रकार से ध्यान उच्चरित करें—

मुक्ता-गौर भव-गज-मुखं चन्द्र-चूडं त्रिनेत्रम्
इस्तैः स्वीर्यैर्धृतमर्य विन्दांकुशी रत्न-कुम्भम्।
अंकस्थायाः सरसिन-कच्चस्तव-ध्वजालम्ब्य-पाणे,
देवयाः योनो विनिहित-करं रत्न-मौलिं भजामः॥

वस्तुतः यह ध्यान स्वर्य में अन्यतं प्रभावशाली,
शान्तिक अर्थ से पृथक, विशिष्ट लक्षण एवं विन्यास से युक्त
है। गणपत्य तंत्र के अन्तर्गत यह ध्यान केवल स्तुति में
उच्चरित शब्द भर ही नहीं अपितु मंत्र का स्थान रखता है
अतः साधक इसे गङ्गाराता-पूर्वक उच्चरित करें।

उपरोक्त ढंग से ध्यान करने के पश्चात यंत्र पर बारह
कुंकुम की विशियां भगवान् श्रीगणपति के द्वावश रूपों के प्रतीक
रूप में लगाए तथा मूर्गे की माला से निम्न मंत्र की ५ माला मंत्र
जप को सम्पन्न करें, यह मंत्र जप एक बार में ही सम्पूर्ण करें—

मंत्र

॥ उम्भ क्षे क्षेमम् रुद्य रसीभाज्य दीपतर्ये दीपतर्ये फट्॥

Om Ksham Kshemam Roop Soubhagya Deepatrye
Deepatrye Phat

मंत्र जप के पश्चात कुछ देर तक साधना स्थल पर
ही विश्राम करें तथा मूर्गा माला को गले में डाल लें। इस माला
को एक माह तक गले में पहने रहें तभा उसके बाद माला व
यंत्र दोनों को किसी स्वच्छ सरोवर या नदी में विसर्जित करें।

भगवान् श्रीगणपति बुद्धि के अधिष्ठाता देव हैं। इनकी
साधना से जीवन में वह सुभाति आती है जिससे मन के ब्रह्म
समाप्त हो कर अपूर्व गङ्गन शान्ति आती है। यही शान्ति अन्तर्मन
के सौन्दर्य का आधार बनती है। अन्तर्मन का सौन्दर्य ही ब्राह्म
सौन्दर्य का आधार है। यही इस साधना का रहस्य है।

साधना सामग्री - 240/-

काल विश्लेषण

साधक वही है, जो काल की गति का पहले से ही भांप ले

इतिहास तिथियों और तारीखों से ही विमित होता है। ग्रहों का संयोग और काल के उन क्षणों का ही प्रभाव होता है, जो ऐतिहासिक घटनाओं को जन्म देता है, युद्ध स्थितियां, प्रलय, राज्योन्नति एवं व्यक्तिगत जीवन में भी उत्तर एवं चढ़ाव नियमित करता है। बिकट भविष्य किस प्रकार से सामाजिक व साधनात्मक कृषि से महत्वपूर्ण है, नक्षत्र गणना पर आधारित इसी पक्ष का ज्योतिषीय विवेचन प्रस्तुत है।

इस स्थायी स्तरम् के माध्यम से - 'काल विश्लेषण'



च के अंक के पृष्ठ ७५ 'चष्ट ग्रही योग' उपशीर्षक के अन्तर्गत इस बात के संकेत दे दिये गये थे कि इस वर्ष 2, 3 और 4 मई को होने वाले एक ही राशि (मेष) में सभी छँड़ ग्रहों का योग और वह भी मंगल से बारहवें, साथ ही मंगल की ही राशि मेष में शनि, सूर्य, बृहस्पति, शुक्र जैसे प्रमुख ग्रहों का योग कितना अनिष्टकारी है। संकेतों के अनुसार ही घटनाएं भी घट ही रही हैं।

पत्रिका का उद्देश्य 'कम्युनिक बुद्धिमत्त' है, इसीलिये - (१.) मोजाम्बीक में बाढ़ हो, (२.) इण्डोनेशिया में राजनीतिक उथल-पुथल हो, (३.) श्रीलंका में आये दिन बम बिस्फोट हों, (४.) आश्चर्यदेश, बिहार जैसे प्रान्तों और मध्य प्रदेश के बीहड़ों में उत्तराधियों की गतिविधियों इन्होंने बढ़ जावें कि मंत्रियों, सांसदों तक की हस्ताएं होने लगी हों, (५.) व्यापार जगत में शेरर बाजार एक ही दिन में दो-तीन सौ लक्ष अंकों से ऊपर नीचे होने लगे हों, कि विश्व की प्रमुख व्यापारिक घराने भी घाटे के चपेट में आने से बचने के लिये अपने-अपने संघ बनाने के लिये बाध्य हो जावें अथवा (६.) किली भी देश का कैसा भी सत्ताधारी क्यों न हो, क्या आज यह कहा जा सकता है कि वह निष्ठिन है? - ये सभी बातें सोचने का गम्भीर विषय हैं।

... और जब जर्मनी जैसे विकसित देश में भी जहां की आजादी दस करोड़ भी न हो और बेकारी भाषा करोड़ हो, तब कल्पना की जा सकती है, कि यह दुनिया कहां जा रही है?

इसीलिये सम्पूर्ण मानवता में व्याप्त असुरक्षा,

अशान्ति, मानसिक कलेश, पारिवारिक मन-मुटाव और नई-नई व्याधियों-बीमारियों से जीवन को खतरा - यह सब इस बात का प्रतीक है कि केवल और केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन, मान्त्रिक-तांत्रिक उपायों, संतों के बताये मार्ग पर चलने की जितनी आवश्यकता आज है, इतनी पहले कभी नहीं रही।

इस दृष्टि से नक्षत्र मण्डल में ३६० में से मात्र १०-१५ दिशों के अन्दर ही लगभग सभी ग्रहों का संचरण ठीक वैसी ही बात है जैसे आग में धी डाल दिया जाये। ग्रहों की जगि पर तो मनुष्य का जोर नहीं है, परन्तु आर्य ऋषियों ने, और विशेष रूप से भगवत् पूज्यपाद सद्गुरुलेख डॉ० नारायण दत्त श्रीमाती जी ने समाज को बहुत कुछ उपाय दे दिये हैं। पत्रिका के पृष्ठों में दिये हुए साधना प्रयोग, शिविरों में दीक्षाएं एवं अन्य मार्गदर्शन नि.सन्देश वरदान सिद्ध हो रहे हैं। और तभी शिविरों में साधकों का सेलाच देखा जा रहा है।

13.4.2000 से 13.5.2001 के बीच चतुर्ग्रही, पंचग्रही, पञ्चशीली योगों का निर्माण नि.सन्देश रूप से मेष लग्न और मेष-राशि, वृष लग्न और वृष राशि, कन्या लग्न और कन्या राशि, तुला लग्न और तुला राशि, वृश्चिक राशि तथा मीन लग्न और मीन राशि के प्रभाव में आने वाले व्यक्तियों के

सूर्य साधना : 16.4.2000 को रविवार के साथ ब्रह्मदर्शी निथि व कामदेव जप्ती भी है। सूर्य एवं शुक्र दोनों उच्च राशि में तथा उत्तरा फल्गुनी नक्षत्र और शुक्ल पक्ष के साथ ही प्रदोष व्रत के होने से यह तिथि सूर्य एवं अन्य साधनाओं के लिये भी विशेष अनुकूल है।

- २१ अप्रैल २००० के दिन साधना प्रारम्भ के शेषतम मुहूर्त
 * प्रातः सूर्योदय के लगभग छेष घण्टे के पूर्व
 ♦ मध्याह्न ११.३० से १२.३० के मध्य

सम्बन्ध में अधिक चिन्ताजनक परिस्थितियाँ जैसे जीवन को खतरा, धोर धाटा, पद या यश/सम्मान/गरिमा/सन्तान आदि को गम्भीर खतरा हो — अर्थात् किसी भी तरह से हानि की आशंका तो सम्भव ही है, श्रेष्ठीय और प्रादेशिक गुह्य से आगजनी भूकम्प, बाढ़, नूफान, रेल, हवाई और सड़क दुर्घटनाएँ अचानक बढ़ती हुई नजर आयेगी।

कुल भिलाकर सम्पूर्ण मानवता कराहती हुई सी लग सकती है। यहाँ के संकेत ऐसे भी हैं कि धर्म के नाम पर उग्रवाद बढ़ सकता है। भारी उग्रवाद से सामान्य व्यक्ति का जीवन अस्त-व्यस्त होता है। उग्रवाद चाहे वह किसी भी धर्म में हो, मानवता के लिये उचित नहीं है। मानव का धर्म तो प्रेम है, इसे व्यक्ति विशेष या राजनीतिक रूप दिया जाना सरासर गलत है।

प्रारम्भ में विद्ये संकेतों के अनुसार विश्व के वर्तमान के लगभग सभी सत्ताधीश उपरोक्त यहाँ की घटेट में आ ही रहे हैं। उनके द्वारा साधित लेत्र भी इसी तरह यहाँ के कोप भाजन बन रहे हैं। तब ऐसी स्थिति भी निर्माण हो सकती है

कि शासक मानसिक सन्तुलन खो देते या सम्बन्धित सेनापति शासकों का अवेश मानने से इंकार कर दें। इस तरह न चाहते हुए भी आज की मानवता भीषण युद्ध की लंगेट में आ जाने। इसी तरह भीषण प्राकृतिक प्रक्रोर्पों के संकेत भी हैं ही।

वैसाख माह का पूरा शुक्ल पक्ष (५.५.२००० से १८.५.२०००) साधनाओं एवं विशेष मंत्र जप उत्तुष्टान आदि के लिये महत्वपूर्ण है। ५.५.२००० की रात्रि १.५० से २.३५ बजे के बीच भी सभी प्रकार की साधनाओं को प्रारम्भ करने का और सफलता प्राप्त करने का श्रेष्ठ मुहूर्त है। ५.५.२००१ के बाद भी प्रारम्भ की जाने वाली वे साधनाएँ जिनमें सूर्य तत्त्व की प्रधानता है, अर्थात् पराक्रम, वैष्णव, प्रतिष्ठा, यह निर्माण, व्यापायिक सम्बन्ध, इत्यादि कार्यों के लिये उपयोग किया जाना चाहिये।

१४.५.२०००, रविवार, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के साथ ही सूर्य की वृष्टि संकान्ति है। और इस दिन में ११.३० बजे से १२.३० बजे तक भी सर्वश्रेष्ठ और सर्वसफलतादायक मुहूर्त है। रायबरेली में शिविर होता है, प्रत्यक्ष गुरु चरणों में उपस्थित होकर पूरा-पूरा लाभ उठा लेना सर्वश्रेष्ठ सौमान्य होगा। यहाँ से लेकर वैशाखी पूर्णिमा १८ मई तक (कुल पांच दिन) का पूरा-पूरा लाभ उठा कर चैत्र और वैशाख में पष्ट ग्रही योग के त्रुयोगों से निश्चित रूप से बचा जा सकता है।

गौधूली वेला : पुक ऐसा मुहूर्त जो नित्य उपलब्ध है

गौधूली वेला के सम्बन्ध में ऋषियों का स्पष्ट निर्देश है कि यह सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त है और इसमें किसी प्रकार की वाधा या दोष नहीं जगता। वास्तव में गौधूली वेला गौ के महत्व को प्रतिपादित करती है। गाय के शरीर में समस्त इङ्ग करोड़ देवताओं का वास है। यहाँ तक कि देवताओं की गाय के शरीर में निवास देते समय वित्तम्ब से पहुंचने के कारण लक्ष्मी को गाय के शरीर में स्थान प्राप्त न हो सका और तब गाय के गोबर में लक्ष्मी को स्थान दिया गया और इसीलिये किसी भी प्रकार के पूजन में गाय के गोबर का प्रयोग किया जाता है। गौधूली वेला का तात्पर्य उस समय से है जब सूर्य अस्त हो रहा हो और बन में धास चर कर मैकड़ों गायों का हुण्ड शांक में अपने स्वामी के घर नीट रहा हो। घर में बंधे इन गायों के बछड़े अपनी मां की याद में जोर-जोर से रम्भाते हैं, उनकी आवाज सुनकर गायें और जल्दी-जल्दी झपटती हुई दीड़ती घरों की तरफ बढ़ती हैं, उनकी चरणों से उठे धूल के बवगड़ पूरे आस-पास के वातावरण में छा जाता है। क्योंकि यह धूल का बवगड़र गायों के चरणों से स्पर्श होकर घड़ी दो घड़ी के लिये वातावरण आच्छायित कर देता है।

यही एक घण्टे का समय गौधूली वेला कहलाता है। अर्थात् गायों के चरणों के धूली व्याप्त होने से वातावरण इनाम अधिक पवित्र मात्र इसी एक घण्टे की अवधि के लिये हो जाता है, जिसमें नक्षत्र, चन्द्रमा, लिंग का कोई भी दोष व्याप्त नहीं हो पाता। नक्षत्रों की दृष्टि से यह एक संधिकाल होता है, जिस समय सूर्य अस्त हो रहा होता है, वातावरण में एकशान्ति प्रारम्भ होने लगती है, व्यक्ति जीवनवर्धी के क्रिया कलाप से विमुक्त होकर घर की ओर प्रस्थान करता है, अथवा घर आ जाता है। इस समय मानस में यह भावना भी आती है, कि आज की चिन्ताएँ समाप्त हुई, कल की बात कल देखो जायेगी। इसीलिये मन्दिरों में, घरों में आरती सम्पन्न की जाती है, क्योंकि देव आद्वान का यह शुभ समय ही साधक बाहे तो इस समय का उपयोग साधना, तपस्या, मंत्र जप में करें अथवा कोई होटन, मधुशाला इत्यादि में जाकर व्यतीत करे . . . लेकिन साधक नुदिशील व्यक्ति है, उसे निर्णय लेना आता ही है।

सूर्य साधना

ऋग्मुखी जीवन का प्रारम्भ और सिद्धि की उपलब्धि गुरु की प्राप्ति और गुरु की कृपा होने पर ही हो पाती है। जीवन में जो गुरु का महत्व है, ठीक वही महत्व नक्षत्र मण्डल में सूर्य का है। यही कारण है कि साधना क्रम में कहा गया है कि व्यक्ति सबसे पहले सूर्य और उसके बाद क्रमशः गणेश, दुर्गा, रुद्र और भगवान् विष्णु की कृपा का पात्र बनते हुए अंत में गुरु तत्व का ज्ञाता बनकर पूर्ण ब्रह्म को प्राप्त कर पाता है।



च देवों की उपासना और उसमें भी सर्वप्रथम सूर्य की उपासना का प्रतिपादन तथा किसी अन्य ग्रह की उपासना का पंच देवों की उपासना में उल्लेख न होना अपने आप में सूर्य के अद्वितीय महत्व को प्रगट करने के लिये पर्याप्त है। इतना ही नहीं सूर्य को प्राण कहा गया है, नाशयण पी कहा गया है। यहाँ तक कि भगवान् शिव को भी जब बहा हृत्या का शाप लगा तब उससे मुक्ति के लिये सूर्य आराधना ही करनी पड़ी।

जीवन धारण के लिये ऊर्जा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और ऊर्जा का आधार भी सूर्य ही है। सूर्य के बिना मात्रा ब्रह्माण्ड प्रकाश विठ्ठीन होकर अमावस्या के घोर तिमिर में आच्छादित रहता है। सूर्योदय पर ही मात्रा संसार निद्रा रूपी तम से जागकर साधना रूपी सत्त्व की ओर उभयुक्त हो जाती है।

व्याय यह भी सत्य नहीं है कि वर्तमान युग में सर्वाधिक उन्नतिशील एवं सत्ता तथा धर्म के वेभव से सम्पन्न ईसामसीह के अनुयायी इसलिये इतने सफल हो रहे हैं, कि उनकी आराधना का आधार सूर्य का ही विषय — अर्थात् रविवार है।

'सूर्य पुराण', 'भविष्य पुराण' आदि तो मानों सूर्य की सत्ता के अतिरिक्त और किसी के महत्व को स्वीकार ही नहीं करते। सूर्य की महत्वा तो इतनी है, कि जब भगवान् शिव ने सबसे महत्वपूर्ण अवतार धारण किया तब हनुमान के स्वप्न में सूर्य को गुरु बनाया। इससे यह स्पष्ट है कि सूर्य आराध्य

भी है और पूर्ण समर्थ गुरु के गुण भी सूर्य में पूर्णता के साथ विद्यमान हैं। इतना ही नहीं बगरंग बली के द्वारा सूर्य को लीलने की प्रत्यावासन में साक्षितिक है। उसके द्वारा साधकों को यह बताया गया है कि धर्म अन्न-अमर नवनिधि के स्वामी और संसार धर्म में निबाधि विचरण करने हुए संकट मोचक बने रहना है, तो सूर्य को पूरी तरह आत्मसात कर लिया जाए।

नक्षत्र मण्डल में भी पहली ही राशि मेष में सूर्य को उच्च स्थिति प्राप्त हो जाती है। सूर्य को आत्मा भी कहा गया है। सूर्य की साधना/उपासना से आमु, विद्या, वश, बल, ऐश्वर्य और पूर्ण सिद्धि प्राप्त होना तथा ब्रह्माण्ड निर्माण में सबसे पहले सूर्य का आविभव होना (उसके बाव ही अन्य ग्रहों की उत्पत्ति हुई) — यह अपने आप में सूर्य के सर्वथेष्ठ महत्व को प्रतिपादित करती है।

परम पूज्य सदगुरुदेव जी के गृहस्थ स्वरूप धारण करने के समय निर्धारण में भी सूर्य की मेष राशि में स्थिति, भी सूर्य के महत्व को स्पष्ट करती है। इतना ही नहीं कलियुग में समस्त शक्ति महाविद्याओं में निहित होती है और इन महाविद्याओं में से चार महाविद्याओं की जयनियों सूर्य के इसी मेष राशि में स्थित होते समय होना — यह बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान युग में तेव साधना का आधार गुरु कृपा तो ही ही सूर्य की अनुकूलता और साधना सोने में सुहागा की तरह उपरोक्ता है।

कार्यकर्ता
लिये सूची

१५

प्रतिरूप

सूची साध

बैठे ही पृ

सिंह को

का बधव

शिव भरा

कर दिया

१६

मनोकाम

सूची स

भी दिन

प्रारम्भ द

अनुकूल

करें। आ

कुंकुम से

पर लाल

हेरा बन

प्रतिष्ठित

बोलते ह

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

।

५.४.२००० से प्रारम्भ होने वाले इस 'विजय' नामक संवत्सर का पूरा समय अर्थात् २५.३.२००१ तक का पूरा वर्ष विशेष परिस्थितियों को दर्शाता है।

सूर्य १३.४.२००० से १३.५.२००० तक मेष राशि में उच्च का औकर स्थित होगा और इस १३ अप्रैल से ही चतुर्थांशी, पञ्चांशी, षष्ठीं योग भी हृषी मेष राशि में १३ मई तक बन जाएंगे। स्पष्ट है कि इन दुर्घटनाओं से संसार भर में तहलका मचे रहने की आशंका लगभग सभी ज्योतिष मर्मज्ञों ने की है। और इस परिस्थिति में सुधार तथा आसन्न संकटों से उबरने के उपाय में गुरु कृपा तो महत्वपूर्ण है ही सूर्य की आराधना महत्वपूर्ण है।

सूर्य की विशिष्ट महत्ता को स्पष्ट करते हुए अपने मन्त्राभी शिखों के समक्ष भगवद्पाद सद्गुरुदेव निखिलश्वरानन्द जी ने स्पष्ट किया था कि किसी भी कार्य को किस हाण विशेष में प्रारम्भ किया जाए, यह बहुत अधिक महत्वपूर्ण होता है। और सिद्धांश्रम में इस तथ्य को सर्वाधिक बल दिया जाता है। भगवत् पूज्यपाद दादाशुरुदेव स्वामी सचिवदानन्द जी ने जब सिद्धांश्रम के एक महायोगी, अपने प्रिय शिष्य गुणातानन्द जी को गृहस्थ आश्रम में आने के लिये और संसार में साधनाओं के प्रचार के लिये भगवान श्रीकृष्ण के गुरु संदोषनि का जन्म कराया – उस समय भी, हिरण्यगर्भ को शंकराचार्य के रूप में जन्म लेते समय भी, और यहाँ तक कि निखिलश्वरानन्द जी के ढौँ० नारायण दत्त श्रीपात्री जी के आविर्भाव के समय भी, – इन तीनों पुण्यान्तरकारी दिनों में सूर्य की उच्च स्थिति मेष पर ही थी। आगे तो साधकों को यह स्पष्ट है ही कि इन तीनों विभूतियों ने पूरे विश्व में उल्लेखनीय कार्य कर सकार को आध्यात्मिक

सूर्य को अर्थ

सूर्य को अर्थ सर्वाधिक प्रिय है। जो मानव भगवान सूर्य को जल, दूध, कुरा का अव्याभाग, धी, दही, शहू तथा जाल कनेर (बेला, कमल या बिल्व पत्र भी लिया जा सकता है) आदि के साथ बन्दन और थोड़ा सा जल विश्वी पात्र में लेकर सूर्य की ओर मुख्य कर एक पैर से खड़े होकर अर्थ देता है, तो सूर्य उससे अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। कहा जाता है कि यह कार्य हजार गऊ दान के बराबर पुण्य देता है। यदि पात्र चांदी का हो तो लाल गुना और यदि सोने के पात्र में अर्थ दिया जाए, तो कोटि गुना फल देने वाला है।

सफलता में कितनी ऊँचाईयों तक पहुंचाया है।

इससे अपने आप में यह बात प्रमाणित हो जाती है कि यदि व्यक्ति दैहिक, दैविक, धौतिक, सभी प्रकार की तांत्रिक, मांत्रिक साधनाओं में निष्ठात होना चाहता हो, पूर्ण ऐश्वर्य का स्वभाव बनकर नर से नाशयण बनने तक की केसी भी इच्छा हो, उसकी पूर्ति सूर्य की साधना एवं अनुकूलता से सम्भव है।

अप्रैल माह में १३ तारीख से मई की १३ मई तक सूर्य उच्च राशि में स्थित है। इस स्थिति को देखते हुए प्रत्येक साधक का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह अपने जीवन में अंधकार का नाश कर नवीन सूर्योदय स्थापित करने हेतु साधना और कर्म शक्ति का विकास करे, साथ ही यहोंकी गति से विशेष लाभ प्राप्त करे।

सूर्य साधना से लाभ

१. इसके द्वारा प्रत्येक साधना में सफलता मिलती है।

२. पौरुष, सम्मोहन के क्षेत्र में सूर्य साधना अनुकूल है।

३. काल पर विजय सूर्य साधना से ही सम्भव है।

४. मन्त्र पर विजय तथा रोग निवारण के लिये सूर्य साधना राम बाण की तरह अचूक है।

५. ऐश्वर्य या सम्पत्ति प्राप्ति सूर्य साधना से सम्भव है।

६. हर प्रकार के संकट निवारण के लिये सूर्य साधक होते हैं, क्योंकि सूर्य संकटमोचक हनुमान जी के भी गुरु हैं।

७. कुष्ठ रोग या शरीर की विकलांगता से मुक्ति या नेत्रों की ज्योति सूर्य साधना से ही सम्भव है।

८. किसी देवी या देवता के श्राप जन्य कष्ट का निवारण भी सूर्य की ही साधना से सम्भव है।

९. निर्धनता किसी भी कारण से हो, सूर्य साधना से उसका निदान होता ही है।

१०. सन्तानहीनता, नपुंसकता का नाश सूर्य की कृपा से होता है।

११. सूर्य प्रजा के पति है, अतः शोध या नवीन विचार की जहाँ आवश्यकता है, सूर्य साधना अनुकूल होती है।

१२. अध्यात्म का तो सूर्य आधार ही है, अतएव कृष्णजीनी जागरण तथा सातों चक्रों के पूर्ण जागरण में सूर्य साधना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

१३. मठ, मन्दिर, विश्वालय या किसी ऐसी संस्था प्रारम्भ करने की यदि अभिन्नाशा हो, यिससे मानव मात्र का कल्याण हो और ऐसी संस्था दीर्घकाल तक बिना बाधा कार्य कर सके, तो सूर्य साधना से ही ऐसा सम्भव हो सकता है।

१४. समाज के कमज़ोर वर्ग के लिये कार्य करने वाले

कार्यकर्ताओं के मनोबल बढ़ाने और पूर्ण यशस्वी बनने के लिये सूर्य साधना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

१५. शासन सत्ता का तो आधार ही सूर्य है। सत्ता के प्रतिरूप महाशज हरिष्चन्द्र ने सूर्य वंश में ही जन्म लिया और सूर्य साधना से ही रावण की उपस्थिति में अपने महल में बैठे-बैठे ही ४०० मील दूर चर रही गाय पर आक्रमण करने वाले सिंह को आक्रमण से पूर्व ही मात्र चालन के दाने पैक कर सिंह का वध कर गाय की रक्षा कर रावण जैसे भव्यसमर्थ नंद सगाह शिव भक्त को भी चकित कर किंकरन्त्यविमृद्ध हो जाने को विवश कर दिया था। यह उनकी सूर्य साधना का ही सुफल था।

१६. किसी भी तरह के संकट से निवारण और किसी भी मनोकामना की पूर्ति के लिये सूर्य साधना उपयुक्त है।

सूर्य साधना

इस साधना 13.4.2000 से 13.5.2000 के बीच किसी भी दिन प्रारम्भ किया जाना उत्तम है। बाद में यदि साधना प्रारम्भ करनी हो तो 4.6.2000, कोई रविवार या सप्तमी तिथि अनुकूल है। साधना को सूर्योदय से सूर्यस्त के बीच ही प्रारम्भ करें। अपने साधने वौकी या शूष्मि पर कुंकुम से यंत्र का डंकन कर लें। उस पर लाल वस्त्र बिछा दें। गेहूं की पक देरी बनाकर उस पर यंत्र सिर्व प्राण प्रतिष्ठित 'सूर्य यंत्र' का निम्न मंत्र बोलने हुए स्थापन करें—



ॐ आकृष्णन रुजसा वर्तमानो निवेश यत्रमृतं मत्यन्त्वं।
हिरण्येन सविता रथेन देवो याति भुवनानि पश्यन॥

फिर दोनों हाथ जोड़ कर सूर्य का ध्यान करते हुए यंत्र पर कलर (या कोई अन्य लाल पुष्ट) लड़ाए—

जपा कुसुम संकाशं काश्यपेत्यं महाशुतिम्।

तमोऽरि सर्वं पापन्तं प्रणोऽस्मि विवाकरम्॥

बारह आदित्यों का स्परण कर यंत्र पर कुंकुम से १२ बिन्दियां लगाएं व सूर्य के द्वादश नामों का उच्चारण करें—

सूर्य द्वादशनाम स्तोत्र

आदित्यः प्रथमं नामं द्वितीयं तु दिवाकरः,

तृतीयं भास्करः प्रोक्तं चतुर्थं तु प्रभाकरः।

पंचमं तु सहस्रांशुः पञ्चं वैलोक्य लोचनः,

सप्तमं हरिष्वश्वरच अष्टमं च विमावसुः।

नवमं विनकरः प्रोक्तो दशमं द्वादशात्मकः।

एकावशं चयोग्निं द्वादशं सूर्यं एव च॥

फिर 'स्पष्टिक माला' से यंत्र के समक्ष निम्न की मंत्र का १२ दिन तक नित्य १२ माला मंत्र जप करें—

सूर्य मंत्र

॥ उमे बृहिः सूर्ये अस्तित्वं नमः ॥

Om Bhrashtu Soorye Asatvam Namah

इसके बाद सूर्याष्टक पढ़ते हुए सूर्य की धनका करें—

शिवप्रोक्त सूर्याष्टक

आदिदेव नमस्तु धर्मं प्रसीद यम भास्करः।

विवाकर नमस्तु धर्मं प्रभाकर नमोऽस्तुते ॥३॥

सप्त अश्व रथमास्तु ग्रचणं कश्यपं आत्मगम्।

श्वेत पदम धरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥२॥

लोहितं रथं आरुदं सर्वं लोकं वितामहम्।

महा पापं हरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥३॥

त्रिगुणं च महा शूरं विष्णुं महेश्वरम्।

महा पापं हरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥४॥

बृहितं तेजं पुञ्जं च वायुं आकाशं मेव च।

प्रभुं च सर्वं लोकानां तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥५॥

बृहुक पुष्यं संकाशं हारं कुण्डलं भूषितम्।

एक चक्रधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥६॥

तं सूर्यं जगत् कतरिं महा तेजः प्रवीपनम्।

महा पापं हरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥७॥

तं सूर्यं जगतां नाथं ज्ञानं विज्ञानं मोक्षम्।

महा पापं हरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम् ॥८॥

पाठ के पश्चात् सूर्य की जल से अर्घ्य दें। साधना समाप्ति के बाद समस्त सामग्री को जल में विसर्जित करें।

साधना सामग्री पैकेट - 300/-

सूर्य साधना के लिये विशेष मुहूर्त

१. गविवार का विन सूर्य साधना के लिये अनुकूल है।

२. नियतीयों में सप्तमी तिथि सूर्य साधना के लिये वर्षभेद है। यदि रविवार और सप्तमी दोनों का संयोग हो तो और भी अधिक फल देने वाला है।

३. शास्त्रों में आहा गया है, कि यदि शुक्ल पक्ष में सप्तमी तिथि के साथ रोहिणी नक्षत्र हो, तो सूर्य साधना का फल यदा कोटि गुणा होता है।

४. सप्तमी के साथ ही उत्तरा फाल्गुनि नक्षत्र भी हो तो सूर्य साधना के लिये और भी अनुकूल है।

५. इसके अतिरिक्त इस वर्ष के उत्तरार्ध में (15.8.2000 से 14.9.2000) सिंह राशि में सूर्य स्थित होने से ये अवधि भी सूर्य साधना के लिये विशेष अनुकूल है।

सर्वोत्तम
इन चाम
6 अप्रैल
12 अप्रैल
16 अप्रैल
23 अप्रैल
6 मई
9 मई
12 मई
14 मई

वृष्टिरुद्धरण

भली भविष्यत
हो सकते हैं
उत्पन्न हो स
सम्पन्न करें
नियन्त्रित करें
प्राप्त होगा।
बनाए रखें।
सामान्य रहे
तारीखें — १

धनु
सम्पादन को
करना आप
उत्तरदायित्व
एवं सन्तान
को लेकर या
रुचि लें तथा
अप्रिय स्थिर
के निवारण
अनुकूल तारीखें

मछली
उत्पन्न हो स
विश्वासपान
होगा। जीवन
में संयम बर
पर गहन विक
की ओर से
मांगलिक क
में शैर्व एवं
अनुकूलता।
२१, २४, २

कुम्हम

बालों की वापी

मेष

(वृ. वे. वो. लौ. तू. लौ. आ)
समय की चाल को पहिचान कर आपने आपमें पूर्ण परिवर्तन तो लाना ही होगा, क्योंकि जिस गंधर जिसे आप चल रहे हैं, वह आपके लिये हितकर नहीं है। इसने शत्रु वादा तो उत्पन्न होगा ही, साथ ही आर्थिक हानि भी सम्भव है। कारोबारी मामलों में आई उदासीनता और जीवन के प्रति असंतुष्टि की भावना का त्याग करना आवश्यक है। परिवार में चला आ रहा तनाव समाप्त होगा। संतान की ओर से अनुकूलता प्राप्त होगी। मान-सम्पादन को बनाए रखने का प्रबन्ध करें। लाग्ने एवं धार्मिक वाचाओं के योग बढ़ें, परन्तु ये अधिक व्यवहार नहीं होंगी। मित्रों से सामान्यता, सहयोग ही प्राप्त होगा, परन्तु शत्रुओं से सावधानी अपेक्षित है। बाहन प्रयोग में सावधानी बरतें। माह के अनुकूल दिवस — १०, १५, १९, २३, ३०।

बुध

(ई. ड. पु. वा. वी. वृ. वे. वो)
जल्दबाजी में कोई निर्णय न ले, अपितु उस पर पूरी तरह सोच विचार कर लें। लाभ की स्थितियाँ बढ़ेंगी। परिवारिक मामलों की उपेक्षा न करें, अन्यथा कलह बढ़ेगी। मित्रों एवं सम्बन्धियों से आपको लाभ प्राप्त होगा एवं शत्रु कमज़ोर होंगे। नये कारोबार एवं नौकरी आदि के बारे में विचार बिचा जा भक्ति है। बेरोजगार व्यक्ति रोजगार प्राप्ति के लिये प्रयास करें। वाम्पत्य सुख में वृद्धि होगी, लेकिन परिवार में किसी अदस्य का स्वास्थ्य आपको निन्ति बर मिलता है। इस माह के अनुकूल तारीखें — ८, १२, १६, २०, २४, २८ अनुकूल हैं।

मिथुन

(का. की. कृ. ए. छ. क्ष. ला.)
बहुत जल्दबाजी में आपके बनाए कार्य भी बिगड़ सकते हैं, अतः संयम एवं शैर्व का सहाया लें। जीवन-जायदाद, बाहन आदि के क्षय-विक्रय में पूरी तरह सावधानी बरतें। अदालती मामले उलझने में अतिरिक्त मानसिक तनाव प्राप्त होगा। मित्रों एवं सम्बन्धियों का सहयोग प्राप्त होगा। आपके हितेशियों में कुछ ऐसे व्यक्ति भी होंगे, जो आपने पूर्व परिचित नहीं होंगे। परिस्थितियाँ आपके विषयीत हैं, अतः सामान्यतम् शरीर प्राप्त करने का प्रयास करें, ज्यादा उचित रहेगा कि आप 'भूमात्री साधन' सम्पन्न करें। नौकरी आदि में स्थानान्तरण के योग निर्मित होंगे, पदोन्नति भी प्राप्त हो सकती है। आर्थिक व्यय भार में वृद्धि होगी। इस माह में कोई नवीन व्यवसाय प्राप्त न करें। आपके लिये अनुकूल तारीखें — १३, १८, २२, २६, २८ हैं।

करक

(ली. दू. लो. ज. डी. डे. ला.)
प्रारंभिक दीड़ा बढ़ने से मन जशान्त तो रहेगा ही, साथ ही आर्थिक स्थिति भी कमज़ोर होंगी और आप तनाव घुस्त होंगे। किन्तु भी प्रकार की लापरवाही बरतना अनुकूल नहीं होगा। मित्रों एवं सम्बन्धियों से किसी भी प्रकार के सहयोग की आक़ाशा न करें, उनकी तरफ से आपको तनाव ही प्राप्त होगा और आपके स्वयं के प्रयास ही साथी होंगे। वाम्पत्य जीवन में मधुरता आयेंगी तथा संतान

पश्च आपके अनुकूल रहेगा। कारोबारी यात्राएं करनी पड़ सकती हैं, जो भविष्य में आपके लिये उपयोगी भिन्न होंगी। रचनात्मक एवं आयात-नियात के कार्यों में आपको विशेष सम्बन्धों प्राप्त हो सकती है। पूर्ण अनुकूलता प्राप्ति के लिये 'इनुमान साधन' सम्पन्न करें। इस माह की अनुकूल तारीखें हैं ३१, ३६, १९, २३, २८।

सिंह

(गा. गी. गू. मे. गो. टा. टी. द्व. टा.)
बीते समय का खलाल त्याग कर बर्तनमाल पर ध्यान दें। किसी भी निर्णय को लेने में अनावश्यक बिल्लमच न करें, अन्यथा बार में आपको पहलाना पड़ सकता है। कारोबारी यात्रा लाभकारी भिन्न होंगी। युवा कर्म अपने भविष्य की कार्य योजना बनाने में व्यस्त रहेगा। किसी के बहकवें में आकर कोई कार्य न करें। जीवन-जायदाद सम्बन्धी मामलों को लेकर अदालती व्यस्तता रहेगी। समाज में मान-सम्पादन को बनावे रखने का प्रयत्न करें। 'काल भैरवाष्टक' का कुछ दिन तक नियमित रूप से पात करना आपके लिये लेयस्कर होगा। वाम्पत्य सुख में वृद्धि होगी। दुर्घटना के योग तो नहीं है, फिर भी वाहन प्रयोग में विशेष सावधानी बरतनी आवश्यक है। इस माह की अनुकूल तारीखें — ८, १२, १६, २०, २४, २८।

लकड़ाया

(ठो. या. यी. पू. ब. य. ठ. ये. यो.)
धार्मिक एवं मांगलिक प्रसंगों में व्यस्तता रहेगी, जिनमें व्यय के घन व्यय से तनाव होगा, इसलिये स्वयम से काम लें और मालसिक शान्ति बनाये रखें। ढोटे ढोटे विवाही की ओर ध्यान न दें। भिजता बनाए रखने का प्रयत्न करें, क्योंकि भिज हो अच्छे बुरे नमय में आपके काम आयेंगे। कोई भी निर्णय जल्दबाजी में न ले, अन्यथा मान-सम्पादन की शक्ति के साथ-साथ आर्थिक हानि भी होगी। मीलिक सुझ-बुझ के साथ ही निर्णय ले। बेरोजगार व्यक्ति आर्थिक विकास प्राप्त करने में किसी भी प्रकार की लापरवाही न बरतें। लकड़ी या कुबेर साधना आपके जीवन में आर्थिक गुरुदत्त हैं अनुकूल हैं। माह की अनुकूल तारीखें हैं — ११, १६, २०, २४, २९।

द्वाला

(ज. गी. गू. ता. ती. तू. ते.)
इस माह आपके लिये भफलताएं प्राप्त करना तभी सम्भव हो पायेगा, जब आपके पास साधनात्मक शक्ति का आधार होगा। 'गुरु साधना' करने से आपके जीवन में स्थिरता आयेंगी और आपका भाग्योदय हो सकेगा। धार्मिक एवं मांगलिक प्रसंगों में रुचि रहेगी तथा आर्थिक व्यय भार में वृद्धि होगी। अनेक प्रकार के व्यय के कार्यों में धन व्यय होगा। मित्रों एवं सम्बन्धियों से सहयोग की जाशा करना पीड़ाकारक ही होगा। यात्रा में सावधानी बरतें, दुर्घटना के योग प्रबल हैं। स्वास्थ्य के प्रति उदासीनतान बरतें तथा परिवारिक उत्तरदायित्वों को धैर्यपूर्वक निभायें। शत्रु विश्वासधात कर रहकरें, अतः अत्यन्त संयम एवं सावधानी से कार्य करें। आपके लिये अनुकूल तारीखें हैं — १३, १४, १७, २२, २६।

सर्वोर्ध्व, अग्रल, दूध, पुष्टि, हिपुक्तर, सिल्पि योग
इन दिवसों पर आप किसी भी साधना को सम्पन्न कर सकते हैं।
6 अप्रैल - सर्वोर्ध्व सिद्धि योग
12 अप्रैल - रवि योग, पुष्टि योग
16 अप्रैल - सर्वोर्ध्व सिद्धि योग
23 अप्रैल - सर्वोर्ध्व सिद्धि योग
6 मई - रवि योग, सर्वोर्ध्व सिद्धि योग, अमृत सिद्धि योग
9 मई - पुष्टि योग
12 मई - सिद्धि योग, सर्वोर्ध्व सिद्धि योग
14 मई - सर्वोर्ध्व सिद्धि योग

दुष्टिष्ठल

(तौ, गा, वी, खु, ले, नो, या, वी, यु)

अपने कारोबारी सहयोगियों पर विशेष ध्यान दें तथा अपनी मांसित नोच विचार कर ही निर्णय लें। शत्रु आपके ऊपर हाथी हो सकते हैं एवं अचानक ही कई प्रकार की बाधाएं आपके समझ उत्पन्न हो सकती हैं। उचित बड़ी होगा, कि आप 'भैरव साधना' सम्पन्न करें। धन को व्यर्थ में व्यय होने से बचायें तथा खर्चों को नियंत्रित करें। मित्रों एवं सम्बन्धियों का सामान्य सहयोग आपको प्राप्त होगा। किसी विवाद के उत्पन्न होने पर मानसिक स्वनुलन बनाये रखें। भृकृत पर बाधन चलते समय सावधानी बरतें। स्वास्थ्य सामान्यरहेगा एवं वामपश्च मुख में वृद्धि होगी। आपके लिये अनुकूल तारीखें - १२, १८, २४, २३, २७ हैं तथा २, ९ प्रतिकूल हैं।

धनु

(वै, घो, आ, गी, शा, फा, डा, भे)

अपनी सामाजिक गवादा को ध्यान में रखें तथा मानसम्मान को बनाये रखें। किसी के बहकावे में आकर कोई कार्य करना आपके लिये जोखिम भरा हो सकता है। पारिवारिक उत्तरदायित्व की उपेक्षा करना अनुकूल नहीं होगा। दामपत्र सुख एवं सन्तान सुख में व्युत्पन्न आयेगी। धार्मिक एवं मांगलिक प्रचंडों को लेकर वात्रा योग बनेंगे, वात्रा सुखद होंगी। नीकरी आदि में पूरी सचिन्तन से तात्त्विक व्यवहार बनाये रखें। किसी अग्रिय स्थिति के अन्ते पर स्वयं को संयमित बनाये रखें। विषदाओं के निवारण के लिये 'गणपति साधना' सम्पन्न करें। इस माह की अनुकूल तारीखें - ११, १६, १८, २१, २५, २७ हैं।

मध्य

(ओ, झा, जी, खु, ले, लो, या, वी)

इस माह में आपके सामने कुछ जटिल परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं। स्वयं मौलिक निर्णय लेने में असमर्थ रहने पर विश्वासपात्रों और शास्त्रियों का सहयोग लेना भी जावशक होगा। जीवनसाधार्थ से वैचारिकता बनाये रखें एवं मतभेद की स्थिति में संयम बरतें। कारोबारी स्थिति में विस्तार होगा, परन्तु अनुबंधों पर गहन विचार करने के उपरान्त ही कोई निर्णय नहीं। सन्तान पक्ष की ओर से अनुकूल एवं प्रलज्जतावाक्यक समाचार प्राप्त होंगे। मांगलिक कार्यों में व्युत्पन्न रहेगी। किसी भी वाद-विवाद की स्थिति में धीर्घ एवं संयम से काम लें। 'हनुमान साधना' सम्पन्न करने से अनुकूलता प्राप्त होगी। इस माह की अनुकूल तिथियाँ - १३, १५, २१, २४, २५, २९ हैं। शुक्रवार के दिन विशेष सतक रहें।

कुम्भ

(यु, वे, जो, शा, री, खु, ले, सो, डा)

आपको यह माह मानवता की में व्यतीत होगा और

ज्योतिषीय दृष्टि से यह माह

इस माह काल सर्प योग होने से विश्व के कुछ देशों में अशान्ति होने की सम्भावना है, खासकर पश्चिमी देशों में युद्ध जैसी स्थितियां निर्भित होने का संकेत मिलता है। इसी माह में बड़ी ही बन रहा है तथा चार प्रमुख ग्रह - मंगल, बुध, वृश्चिक और शनि - वे भी असत हो रहे हैं। यह योग विश्व के कुछ देशों में धर्मकार आतंक, अराजकता या प्राकृतिक विषयों को नियंत्रण रहे हैं। उत्तिष्ठ नेता के पद से चूल होने की अवश्यकता नियंत्रण के आसान है। साथ ही किसी मुस्लिम सहू में हत्याकाश्च या गृहवृक्ष जैसी स्थिति बन सकती है, जिससे राष्ट्र के वित्ती उच्च स्तरीय नेता को पद त्यागने के लिये बाध्य होना पड़ सकता है।

समान में मानसमान की प्राप्ति होगी। दूसरे लोग भी आपकी सहायता के लिये उत्तर रहेंगे। दामपत्र सुख में बृद्धि होगी तथा संतान की ओर से अनुकूलता एवं सुखद समाचार प्राप्त होने वाले धार्मिक एवं मांगलिक कार्यों में व्युत्पन्न रहेगी। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह माह कमज़ोर ही रहेगा, स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होगी। यात्रा योग सुखद सिल्ज होंगे, परन्तु सड़क पर चलते समय सावधानी अपेक्षित है। कारोबार का विस्तार होना तथा आपिक अनुकूलता प्राप्त होगी। इस माह की अनुकूल तारीखें हैं - १०, १३, १७, २०, २३, २८।

मीठा

(की, दू, थ, झ, वे, लो, या, वी)

इस बार शत्रु आपके खिलाफ कुछ गहरी चाले चल रहे हैं, अतः सावधानी और सुरक्षा दोनों ही अनिवार्य होंगे। 'काल भैरव साधना' सम्पन्न करना आपके लिये आवश्यक है। मित्रों के साथ छोड़ जाने से तनाव होगा। स्वयं का परिव्राम ही आपका महात्मक सिद्धि होगा। जीवनसाधार्थ से मतभेद समाप्त होंगे तथा सन्तान की ओर से सुखद एवं अनुकूल समाचार प्राप्त होंगे। सभी सम-विषय परिस्थितियों में सामाजिक प्रतिष्ठा बनाये रखें। अधिकारियों एवं सहकर्मियों से मेल-मिलाप बनाये रखें। नये कारोबार के विस्तार का विचार किलहाल त्याग दें। माह की अनुकूल तारीखें - १५, १६, २०, २२, २३, २५।

इस मास के ऋत, पर्व एवं त्यौहार

५ अप्रैल - वैश शुक्रल	१	विक्रम संवत् २०५३ प्रारम्भ नवरात्रि आरंभ, कलाज स्थापन
७ अप्रैल - वैश शुक्रल	३	गीरी तृतीया, मत्स्य जयंती
११ अप्रैल - वैश शुक्रल	७	दुश्म वाष्टमी
१२ अप्रैल - वैश शुक्रल	८	नवरात्रि रामान्त, राम नवमी
१४ अप्रैल - वैश शुक्रल	११	कालस एकादशी
१६ अप्रैल - वैश शुक्रल	१३	अनंग ब्रह्मदत्ती, प्रवोष, महावीर जयंती
३० अप्रैल - वैशाख कृष्ण	११	दसूरीनी एकादशी
१ मई - वैशाख कृष्ण	१२	सोम प्रवोष त्रैत
६ मई - वैशाख शुक्रल	३	अस्य तृतीया, परशुराम जयंती
८ मई - वैशाख शुक्रल	५	आदि शंकराचार्य जयंती
१४ मई - वैशाख शुक्रल	११	गोदानी एकादशी,
१५ मई - वैशाख शुक्रल	१२	रामानुजाचार्य जयंती
१८ मई - वैशाख शुक्रल	१२	सोम प्रवोष

ज 'अप्रैल' 2000 मंत्र-तंत्र-योग विज्ञान '73' द्वा



शब्द शक्ति : ब्रह्म शक्ति

स्वर कहें या व्यंजन, कोई श्री शब्द अपने मूल रूप में है एक ध्वनि और ध्वनि स्वयं में है एक उर्जा। इस रूप में हमारे मनीषियों का वह कथन स्वयमेव अर्थवान हो जाता है जहां उन्होंने शब्द की साक्षात् ब्रह्म स्वरूप माना है। ब्रह्म अर्थात् शाश्वतता एवं शक्ति का आदि स्रोत . . .



मी विवेकानन्द ने एक स्थान पर इस बात की

चर्चा की है कि कैसे जब उनके गुरुदेव श्री रामकृष्ण परमहंस कहीं प्रवचन देने जाते थे तो हजारों ही नहीं बरन् लाखों की तादाद में व्यक्ति उमड़ पड़ते थे। छातों पर, मुँहों पर या जहां कहीं भी सम्भव हो, बैठने के बाद जब अन्य कहीं उन्हें स्थान न मिलता तो वे पेड़ों पर-यहां तक कि पेड़ों की टहनियों पर वे मुख भाव से बेठे श्री रामकृष्ण जी की बाणी से निःसृत वाक्यों को यूँ सुनते रहते थे मानो अमृत-पान कर रहे हों।

आगे रवामी विवेकानन्द ने कहा है कि आश्चर्य है कि वह काल जिसे बंगाल का पुनर्जीवण काल (renaissance period) कहा गया है, जिस काल में बंगाल में एक से अधिक एक मूर्धन्य विद्वान् हुए तब उन विद्वानों की सभा में तो कठिनाई से कुछ एक व्यक्ति ही पहुंचते थे जबकि लगभग अनपढ़ श्री रामकृष्ण की सभाओं में यह स्थिति हो जाती थी।

रवामी विवेकानन्द स्वभाव से निजातासु व तार्किक प्रकृति के थे और उनके मानस में इस बात का रहस्य जानने की जिजासा बनी रही।

कालांतर में उन्होंने इस बात का रहस्य खोज ही निकाला और कहा- 'अब मैं समझ गया हूँ कि चमत्कार उनके शब्दों में नहीं बरन् उनकी बाणी में छिपा हुआ था। दाकुरा भी रामकृष्ण जी) जो कुछ भी कहते थे उनके पीछे उनकी ओज

शक्ति कार्य कर रही होती थी और हसी से वह प्रत्येक के लिए हवयग्राही बन जाती थी।'

स्वामी विवेकानन्द का यह विवेचन आज भी पूर्णरूपेण प्रामाणिक है। बास्तव में जो मूल रहस्य है वह शब्दों के जाल में न छिपा होकर छिपा होता है उस व्यक्तित्व के भीतर जो उन्हें उच्चरित कर रहा होता है। शब्द ब्रह्म है, यह बात सत्य है किन्तु उससे भी अधिक सत्य है यह बात कि किस माध्यम से निःसृत हो रहा है कोई वाक्य।

आज स्वामी विवेकानन्द के विवेचन की प्रामाणिकता इस कारण से और भी अधिक बढ़ गयी है क्योंकि यह युग है तीव्रता से विकसित हो गए संचार माध्यमों या मीडिया का जहां एक शब्द कहते ही तीव्रता से चारों ओर फैल जाता है।

शब्दों से ही सृजित होते हैं मंत्र और शायद इस बात को अब बार-बार दोहराने का कोई अर्थ नहीं रह गया है कि हमारे मुख से निकला प्रत्येक वाक्य ही एक मंत्र समान होता है वा जो मंत्रों का प्रभाव होता है वही हमारे मुख से निकले शब्दों का भी होता है अतः वाक्यों के प्रयोग में साक्षात् रखनी चाहिए।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान अपनी श्रेष्ठता के उपरान्त भी जिस कारण से अप्रामाणिक मान लिया गया उसके मूल में इस बात का भी बहुत बड़ा योगदान है कि भारतीय समाज ने समय के साथ कदम मिला कर चलना नहीं सीखा। वह गंधी

की एक तोतारटंत में पड़ा रह गया, उसने उन शब्दों में निहित ज्ञान की युग के अनुरूप व्याख्या करने का प्रयास नहीं किया।

पूज्यपाद गुरुदेव ने इसी विसंगति की ओर ध्यान दिलाने के लिए इस पत्रिका के साथ 'विज्ञान' शब्द को जोड़कर यह चेतना देने का प्रयास किया है कि जो ज्ञान, विज्ञान की कस्तीटियों पर खरा नहीं उत्पन्न वह अप्रामाणिक भाव लिया जाएगा, शिष्यगण इस बात का भी ध्यान रखें।

वर्तमान युग में वैज्ञानिक इस बात पर शोधरत है कि क्या कारण है कि भारत द्वारा प्रतिपादित ऊँ शब्द के गुंजरण से मन को एक असीम शांति प्राप्त होती है।

वे विवेचन कर रहे हैं कि इस वर्ण का वैज्ञानिक दृष्टि से विन्यास क्या है अर्थात् इस शब्द के गुंजरण से किस तरंग-दैर्घ्य (wave-length) की तरंगे उत्पन्न होती हैं, क्या इसी तरंग-दैर्घ्य की तरंगे उत्पन्न करके उनका उपयोग किसी विकित्सकीय कार्य में किया जा सकता है?

वर्तमान में इंग्लैंड के एक वैज्ञानिक है — सेडले जिन्होंने केवल वैज्ञानिक गैनार्ड के साथ शोध करके यह विक्षण निकाला है कि प्रत्येक वर्ण का स्वयं में एक रंग भी होता है।

... और दूसरी ओर जो पुरातन पंथी हैं कि उसी पांच शताब्दी पुराने विवेचन की धोट रहे हैं। जो ग्रात्मीन है निःसदैह उसका महत्व है किन्तु केवल वहीं तक नहा तक हमें उससे एक दृष्टि प्राप्त हो।

हमारे ऋषि निःसदैह हमारे लिए प्रणम्य हैं, हमारी रंगों में उनका ही रक्त बह रहा है, उन्हीं की अनुशेतना से हमसे भीतर एक देसे जीवन का संचार हो रहा है जो स्वयं में पश्चिम की तरह से भावना-शून्य नहीं हुआ है, हजारों विसंगतियों के बाद भी हम भरतीयों के जीवन में भावना के लिए स्थान है किन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं लगाया जा सकता कि हम स्फुटिवारी बने रहें, भक्ति मार्त के अनुगमी बन जाएं। यह प्राणशेतना तो नहीं देनी चाही थी हमारे ऋषियों ने हमें।

सद्गुरुदेव ने अपने एक प्रवचन में कहा कि संसार में सब कुछ नष्ट हो जाता है, देह भी समय आने पर स्वरूप बदल देती है, लेकिन ब्रह्माण्ड में शब्द जो उच्चरित हो गया, वह कभी भी नष्ट नहीं हो सकता। इस लोक से परे ब्रह्माण्ड में वह लोक विद्यमान है जहाँ शब्द आज भी गुंजरित हो रहे हैं। यदि साधक अपने भीतर द्वारा शक्ति को उस स्तर तक ले जायें तो वह आज भी महाभारत युद्ध के दौरान भगवान श्रीकृष्ण

द्वारा दिया गया भीता का शास्त्र वान उनकी मूल वाणी में सुन सकता है।

पांच क्रमेन्द्रियों में जिह्वा जहाँ स्वाद का अनुभव करती है, वहाँ जिह्वा शब्द भी उच्चरित करती है और शब्द वर्णमाला के ५२ अक्षरों से ही बने हैं। इन्हीं शब्दों से मंत्र भी उच्चरित किये जा सकते हैं। इन्हीं शब्दों से प्रेम प्रगट किया जा सकता है, इन्हीं शब्दों से छोध और अवशब्द का उच्चारण भी किया जा सकता है।

जब साधक अपने गुरु के पास पहुँचता है, तो उसे पहली आज्ञा यह प्राप्त होती है मैन रहने की। यह बात बड़ी ही विचित्र लगती है कि शब्दों के प्रवाह को गुरु कयों रोकते हैं? इस मौन साधना के माध्यम से युरु यह सिखाते हैं कि तुम्हारे भीतर जो शब्दों का जाल बना हुआ है, जो तुम्हारी शक्ति को अवसर किये हुए हैं, उन शब्दों के जाल में से तुम्हारे लिये क्या उपयोगी शब्द हैं और क्या अनुपयोगी शब्द हैं, इसका स्वयं मंथन करो और जब इस मंथन के पश्चात जिह्वा जब शान्त हो जाती है, और आधार भूमि तैयार होती है तब गुरु द्वारा युरु मंत्र प्रदान किया जाता है।

'ॐ' को प्रणवाक्षर अर्थात् पहला शब्द माना गया है। यदि शान्त मन से केवल 'ॐ' शब्द का ही उच्चारण अल्प काल के लिये ही किया जाये तो पूरे शरीर में एक अपूर्व शक्ति और शान्ति आ जाती है। शब्द का स्थान जिह्वा नहीं है, शब्द का स्थान नाभि स्थित मणिपुर चक्र ही है। जिह्वा तो एक माध्यम भर है अर्थात् वही शब्द प्रभावकारी है जो मणिपुर चक्र से ऊपर उठता हुआ अनाहत, विशुद्ध इन्द्रियादि चक्रों को पार करता हुआ जिह्वा के माध्यम से बाहर गुञ्जित होता है। अन्य शब्द तो निष्प्रभावी हैं, इसीलिये शास्त्रों में बार-बार कहा जाता है कि या तो मैन रहो या भितभाषी अर्थात् कम से कम बोलो। बोलने में जो शक्ति लाय होती है, उस शक्ति की आपूर्ति के लिये पूरे कुण्डलिनी चक्रों को अत्यधिक प्रयास करना पड़ता है। कुण्डलिनी जागरण के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा इन्द्रियावृत्ति बोलना अर्थात् अतिभावी होना है।

एक गुरु मंत्र प्राप्त होता है और शिष्य के लिये वह जीवन भर की निधि बन जाता है और गुरु मंत्र का उच्चारण केवल जिह्वा के माध्यम से सम्भव ही नहीं है, क्योंकि गुरु मंत्र देते समय सबूत रहते हैं कि इस मंत्र को अपनी अवणेन्द्रियों द्वारा सीधा भीतर उतारो और जब वह पूरे रोग-रोग में समाहित हो जाये तो उसे उसी रूप में एक प्रवाह देते हुए अपने



शक्ति सा
ब्रह्मदीर्घी
वाक्, औं
संगुपति
जाप -
है कि सा
करे। हम
हैं जो वा
करने के
दारूः ।

पात्र 'र
भाला'

15.6.21

सा
के
जा

1.5.
प्रदोष
दृष्टि
से ७
के स
शक्ति
भ्र

लेक
प्रवाह

11.
प्रात
४:२
जप
मन्त्र

मुख पर लाओ। यही साधना का विधान है। यही मन्त्र जप का विधान है, चाहे वह मंत्र जप मौन हो, वाचिक हो या उपाशु हो।

गांधी जी के जीवन की एक घटना है। साबरमती आश्रम में एक पिता अपने बालक को लेकर आया और बोला - 'आपके शब्दों में लड़ा प्रभाव है, और आपकी आशा पूरा देश मानता है। वह बालक, गुड़ बहुत अधिक खाता है, इससे केवल इन्हाँ कह दीजिये कि यह केवल गुड़ नहीं खाये।'

बापू ने पूरी बात सुनी, बचे की ओर देखा और कहा - 'एक सप्ताह बाद आना।'

एक सप्ताह बाद वह पिता अपने बालक को पुनः बापू के समक्ष उपस्थित हुआ और गांधी जी ने बालक के सिर पर हाथ फैलते हुए कहा - 'बेटे! गुड़ मत खाया करो।'

बालक ने कहा - 'आज से मैं शुद्ध नहीं खाऊंगा।'

बालक के पिता को बहा आश्चर्य हुआ और उसने कहा कि यही बात आप एक सप्ताह पहले सी तो कह सकते थे, तब गांधी जी ने कहा कि मैं स्वयं भोजन के पश्चात गुड़ का सेवन करता हूँ और इस पूरे एक सप्ताह गुड़ का सेवन नहीं कर के मैंने अनुभव किया है कि इसके खाने से और न खाने से कोई अन्तर नहीं पड़ता। आज मैं इस बात का अधिकारी हूँ कि इस बालक को शुद्ध नहीं खाने की आज्ञा दे सकता हूँ।

बात साधारण होने हुए भी अत्यधिक गम्भीर है, अर्थात् वही वचन सार्थक होते हैं, जो भीतर से उच्चरित हुए हों क्योंकि उसमें व्यक्ति के स्वयं का, मानस का चिन्तन होता है, परख होती है।

आजकल आम बोल-चाल की भाषा में - यार, साला, इन्हाँदि कई शब्द हैं जो अनायास मुख से निकल जाते हैं, जबकि इन शब्दों का विवेचन किया जाए तो उर्ध का अन्तर हो जाता है। बेटा मां को और एक भाई बहन को बोलते हुए कहता है 'अरे यार, आज ऐसा हो गया, वैसा हो गया।' मां का 'ममी' हो गया और ममी का भी अपधंश होकर 'मौम' हो गया। 'पापा' का अपधंश होकर 'पॉप' (Pop Music) या 'पाप' हो गया। डैडी का अपधंश 'डेड' (Dead) हो गया। अब जीती-जाती मां को मिश्र की 'ममी' (मृत देह) बना दिया, अच्छे खासे पिता को डेड अर्थात् मृत या पाप बना दिया, तो किस प्रकार से परिवार में माधुर्य और सामंजस्य रह सकता है। क्योंकि ये सार्थक शब्द ही नहीं हैं।

आज भी बोड्शा संस्कारों में जब बालक की जिहा पर जान दीशा की किया सम्पन्न करते समय 'ओ' लिखा जाता है, तो उसके पीछे यही अर्थ है कि यह जिहा कुण्डलिनी के

प्रभाव को व्यक्त करे, अपने आप में सशक्त एवं प्रभावकारी हो। एक भिखारी घट्टों तक चिल्ला चिल्ला कर भीख मांगता है और वृसरी ओर घिसुक बनकर महात्मा बुद्ध निः द्वार पर खड़े हो जाते थे, वह व्यक्ति अपने आप को धन्य समझने लगता था और अपना सब कुछ अर्पण कर देता था।

वाणी की देवी, विशकि में प्रमुख सरस्वती को माना गया है। जिस व्यक्ति के जीवन में वागदेवी सरस्वती विराजमान नहीं है, उसके जीवन में महालक्ष्मी और महाकाली भी स्थापित नहीं हो सकती, क्योंकि जहाँ जान है वहाँ धन और अभय दोनों आ ही जाते हैं। इतीलिये चाणक्य ने अपने नीति शतक में लिखा कि मुश्क सबकुछ छिन जाये तो भी मैं विचलित नहीं होऊंगा, परमात्मा से केवल एक ही प्रार्थना है कि मेरा जान और मेरी जिहा अक्षुण्ण रहे। ये दोनों मेरे साथ रहेंगे तो मैं पूरे विश्व को एक बार तो क्या हजार बार विजित कर सकता हूँ।

शब्दों का सार्थक रूप है मन्त्र जो पूर्ण ध्वनि से युक्त हो और वह ध्वनि जो अन्तर्भूत से प्रवाहित हो और उसके साथ आपका जोज और तेज प्रगट हो, ब्रह्म वचस्विता से युक्त ओज !

ओज एक ऐसा गुण होता है जिसके समझ चेतना की अन्य कोई भी अन्य भावभूमि लबू हो जाती है। ओज का प्रादुर्भाव केवल उसी व्यक्ति में सम्पन्न हो सकता है जिस व्यक्ति के जीवन में कुछ श्रेष्ठ मूल्य होते हैं और जिसे सम्पूर्ण आनंदरिकता व अंतरंगता से यह दृढ़ विश्वास होता है कि उसके प्रत्येक श्रेष्ठ कार्य में कोई अपराध नहीं होता है।

ओज तो साधक की एक आंतरिक स्थिति होती है, जिसे जीवन में साधित तो किया जा सकता है किन्तु वस हेतु मन्त्र जप से भी अधिक जो बात महत्वपूर्ण होती है वह यह होती है कि साधक अपनी सम्पूर्ण मानसिकता वो इस प्रकार का निर्मित करे कि उसे जीवन में ओजवान बनना है तो बनना है, जीवन के श्रेष्ठ कार्य बाद में होते रहेंगे या नहीं हुए तो नहीं हुए किन्तु ओज को प्राप्त करके हो रहना है- जिसे पूज्यपाद गुरुदेव ने शरीर साधकति वा पात्रत्वति वा का संकल्प कहा है, कुछ वैसी ही मानसिकता निर्मित करनी पड़ती है।

जीवन में ऐसे शिव संकल्प को धारण कर पाना भी गुरु कृपा से सम्भव होता है। यह माह पूज्यपाद गुरुदेव का अवतरण माह होने के कारण स्वतः ही एक वरदायक माह है तथा गुरु के बर प्रदान करने के अनेक रूप होते हैं।

साधक व शिष्य अपने जीवन में शिव संकल्प से युक्त होते हुए उस वाक् शक्ति को प्राप्त कर सके जो वाक्

शक्ति समाज में तो श्री-युक्त करने में सक्षम होती है साथ ही ब्रह्मवर्चस्विता से युक्त करने भी समर्थ होती है क्योंकि शब्द, वाक्, ओज, ब्रह्म-इनमें से कोई भी पृथक नहीं है। सब परस्पर संगुप्लित है और जो 'एक साधो सब सधे, सब साधो सब जाइ' – ऐसा कहा गया है उसके अनुसार श्रेयस्कर मार्ग यही है कि साधक वाक् की साधना को प्रथम चरण के रूप में सम्पन्न करे। इस उबलर पर एक ऐसी साधना की प्रस्तुति की जा रही है जो वाक् शक्ति को जाग्रत करने अर्थात् वाक् पदुता को सुपुष्ट करने की अनुभूति साधना रही है।

वाक् शक्ति साधना

इस साधना को सम्पन्न करने के इच्छुक साधक के पास 'स्वस्त्र्ये यंत्र' (धारण करने योग्य) तथा 'स्फटिक की माला' होनी आवश्यक है। यह चार विवर्सीय साधना है जिसे 15.6.2000 अश्वा किसी भी माह के शुक्ल पक्ष में पड़ने वाले

गुरुवार को सम्पन्न किया जा सकता है। साधना में उत्तेत वर्षों का प्रयोग करें तथा विशा उत्तर रहे। यंत्र को जल से स्नान करा कर उस पर कुंकुम, अक्षत, पुष्प की पञ्चुडियां चढ़ाएं तथा निम्न मंत्र का एक ही बार में म्यारह माला मंत्र जप करें –

मंत्र

// ऐं रुं स्वर्णे //

Atem Rooin Svom

यह प्रातः काल पांच से छह बजे के सध्य में की जाने वाली साधना है। मंत्र-जप के पश्चात यंत्र को गले में धारण कर लै तथा आगे एक माह तक नित्य प्रातःकाल में स्नान के बाद एक घंटे तक शुद्धता के साथ धारण करें। एक माह के पश्चात यंत्र को किसी सरोबर या नदी में विसर्जित कर दें। भौतिक अवृत्ति में यह याणी के किसी दोष को परिष्कृत करने की श्रेष्ठ साधना भी है।

साधना साप्तशी पैकेट – 310/-

१०८ चूदू

समय का एक निरन्तर गतिशील है और यदि सूक्ष्मता से देखें, तो प्रत्येक दाण का अपना अलग गहन है। इस काल चूदू की गति के फलस्वरूप जीवन में कुछ ऐसे क्षण भी आते हैं, जिनमें कुछ विशेष साधनाओं को सम्पन्न करने पर सफलता की सम्भावना बढ़ जाती है। इस स्तम्भ के अंतर्गत ऐसे ही चार विशेष साधना मुद्दों को प्रस्तुत किया जा रहा है, जिन में सम्बन्धित साधना सम्पन्न करने पर सफलता प्राप्त होती है।

1.5.2000 वैशाख कृष्ण पक्ष की द्वादशी के दिन सोम प्रवोष भी होने से वैशाख नक्षत्र में प्रातःकाल साधनात्मक दृष्टि से शुभ योग निर्मित हो रहा है। इस दिन प्रातः ५:४८ से ७:३० बजे तक 'ब्रगलामुखी गुटिका' (न्यौछावर: ८०/-) के समक्ष निम्न मंत्र का बिना रुके जप करने से आप अपने शब्दों को नेजहीन एवं शक्तिहीन बना सकते हैं –

मंत्र

// उ॒॒ हू॒॒॑ दग्लामु॒खी देव्ये॒ हू॒॒॑ कट॒ //

Om Heem Baglaamukhee Devyel Heem Phat

जप के पूर्व दोषे हाथ में जल लेकर शब्द का नाम लेकर संकल्प अवश्य बोलें। जप के बाद गुटिका को जल में प्रवाहित कर दें।

11.5.2000 वैशाख शुक्ल की अष्टमी, गुरुवार के दिन प्रातः आश्लेषा नक्षत्र में दृढ़ि योग है। साधक यदि प्रातः ४:२४ से ६:३६ के मध्य 'गुरु गुटिका' के समक्ष निम्न मंत्र का जप करे, तो उसे सभी प्रकार से अनुकूलता मिल सकती है –

मंत्र

// उ॒॒ गु॒॑ गु॒रुत्व॒॒॑ नमः //

Om Gum Gurutvel Namah

17.5.2000 वैशाख शुक्ल की चतुर्दशी को प्रातः रवाती नक्षत्र में वरीयान योग बन रहा है। ऐसे श्रेष्ठ समय में प्रातःकाल ३:३६ बजे से ९:०० बजे तक किसी भी कार्य विशेष में सफलता हेतु 'कार्य सिद्धि माला' (न्यौछावर: १५०/-) से निम्न मंत्र का जप करने पर उस कार्य में सफलता प्राप्त होती है –

मंत्र

// उ॒॒ श्री॑ श्री॒ हू॒॒॑ हू॒॒॑ श्री॑ श्री॒ उ॒॒ //

Om Shreen Shreens Hreem Hreem Shreen Shreens Om बाद में माला को जल में प्रवाहित करें।

28.5.2000 अष्टम शुक्ल पक्ष की नवमी को पूर्वी भाद्रपद नक्षत्र में प्रतीत योग निर्मित हो रहा है। इस विशेष में यदि साधक प्रातः ५:३२ से ७:४८ तक 'लक्ष्मी माला' (न्यौछावर: १८०/-) से निम्न मंत्र का जप करे, तो जीवन में आकस्मिक धन प्राप्ति का योग निर्मित होता है।

मंत्र

// उ॒॒ हू॒॒॑ धन्वाद्य॒॒॑ हू॒॒॑ उ॒॒ //

Om Hreem Dhansadanyai Hreem Om

वो माह बाद माला को जल में विसर्जित कर दें।

सर्वे भवतु सुखिनः

महका दो जगा को गुलाब की खुशबू से।

यही ऐगाम है हवा के
उस झाँके का
जिसका नाम है -
पंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान
का अंतराष्ट्रीय
अंद्रेजी संस्करण

Cमुख्य बुद्धिकम् - अर्थात् भूमि के एक टुकड़े के ही नहीं, एक छोटे से क्षेत्र या धीरोलिका सीमा रेखाओं से विभाजित होकर जन्मे। एक राष्ट्र भर के ही नहीं वरन् समूची पृथ्वी के सभी मनुष्य - ये ही वे काले हों या गोरे, वे हिन्दी भाषी हों या अंग्रेजी भाषी, जन्मन हों या फ्रांसीसी, वे चीन के हों या अमरीका के, वे जीव हों या पुरुष, अमीर हों या गरीब, किन्तु ही या मुस्लिम, हिंदूही हों या पारसी, या किसी ही यहौं - संसार के सभी छोटे बड़े, स्त्री-पुरुष, बच्चे-बुद्ध - सब मिलकर एक परिवार हैं, मानवता की सूक्ष्म ढोरी से बंधा एक परिवार जिसका केवल एक और केवल एक ही पिता है, जिसे किसी ने खुदा कहा है, किसी ने भगवान्, किसी ने कृष्ण, किसी ने राम, किसी ने ईशा, किसी ने अल्लाह, किसी ने जुर्त्याब्दू कहा है। उस ईश्वर की ही सब सन्तान है, और विश्व बन्धुत्व - 'वसुपैव कुदुम्बकम्' की यही भावना सदा से विराजमान रही है भारतीय ऋषियों के चिन्तन में, उनकी ज्ञान धारा में, वेदों में और उपनिषदों में।

भारत की मूल धारा अध्यात्म ही रही है। अध्यात्म के शिखर पर भारत आज ये ही नहीं सदा से ही आरूढ़ रहा है, विश्व को अपने ज्ञान से आलोकित करता रहा है। जितने सन्त, जितने ऋषि मुनि, जितने धर्म गुरु, जितने दिव्य पुरुष, जितने अवतार इस धरती पर उत्पन्न हुए, उन्हें किसी अन्य स्थान पर नहीं। इस कारण आध्यात्मिक ज्ञान के क्षेत्र में भारत सदा ने ही विश्वगुरु रहा है। बौद्ध काल में जहां भगवान् बुद्ध के भिक्षुओं ने विश्व धमण कर, उनके दिव्य ज्ञान से विश्व को आलोकित किया तो, एक शताब्दी पूर्व स्वामी विवेकानन्द ने भी भीतिकर से आकान्न पाश्चात्य देशों में पुनः आध्यात्मिक ज्ञान की ज्योति जलाने के लिये विदेश ध्रमण किया। आज भी कहु उच्चकोटि के सन्त और समुदय इसी हेतु प्रयत्नशील हैं, तो इसके पीछे उनका कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं है, उपर्युक्त वर्णी भावना है - वसुपैव कुदुम्बकम् की, 'सर्वे जनाः सुखिनो'

भवन्तु' की जिससे विश्व के दूसरे कोने में बैठा हमारा ही एक अन्य भाई भी अपने अन्तर ज्ञान की ज्योति जलाकर सुखो रह सके, ज्ञान जंगा में भीगकर आनन्दमन्न हो सके।

मनुष्य जीवन और यह ब्रह्माण्ड जात अजात रहस्यों से भरा हुआ है। जात रहस्यों को भी विस्तार से समझना और उनके मूल की खोज करना मनुष्य की प्रकृति रही है। वहीं अजात रहस्यों के सम्बन्ध में अनन्त जिजासाओं के कारण कई ऐसे रहस्य उजागर हुए हैं, जिनके बारे में कल्पना ही की जाती थी। सध्यना के विकास के साथ यह द्वाम निरन्तर चलता ही जा रहा है। आज मानव सम्यता बड़े गर्व के साथ कह रही है कि हमने आदि युग से इककीसवीं शताब्दी तक ही यात्रा की है और पहिये के अविष्कार से कम्प्यूटर तक की यह यात्रा अवश्य ही एक महान यात्रा कही जा सकती है। इस पूरी यात्रा में बाई उपकरणों की ओर अधिक से अधिक ध्यान दिया गया तथा अपनी सुख सुविधा के लिये नये-नये उपकरण मनुष्य जुटाता रहा। इसी कही में पत्थर के अस्त्रों से परमाणु अस्त्रों-शस्त्रों तक भी यात्रा सम्पन्न की।

आज इस उन्नति के सुप्रभाव और दुष्प्रभाव दोनों ही देखने को मिल रहे हैं, जहां तकनीकि क्रान्ति ने सम्पूर्ण विश्व को एक 'ग्लोबल विलेज' बना दिया है, वहीं असुरक्षा, धर्य, असन्तोष, निराशा, अविश्वास, अनिद्रा, व्यभिचार, पुरुष इत्यादि में भी अभिवृच्छी ही हुई है। क्या सम्यता की यह उन्नति बास्तव में ही उन्नति कही जा सकती है? इस विषय पर हमारे आर्य ऋषियों ने भी विचार किया था और उन्होंने जो मूल सिद्धान्त प्रतिपादित किया था, वह था -

सर्वे भवतु सुखिनः, सर्वे संतु निराशयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दुःख वाग्भवेत्॥

यह सिद्धान्त कहाँ खो गया, सुख के इसने अधिक उपकरण हो जाने के बाव भी मनुष्य संसार, वस्तु और दुःखी क्यों है? उसके जीवन में सुख और सन्तोष क्यों नहीं है, क्यों

नहीं भवतु
विज्ञान हम
व्यापित्य
मनुष्य तिन
स्वभावित्य
रक्षापना
कार्यान्त अ
वेद व्याप्ति

प्रकाश व्याप
शरीर सम
व्यवस्था हुई
जगत् विव
हुआ। या
मनुष्य के
यह व्याप

अनन्त है
ओके भा
स्त्राव संव
कर सक
विज्ञान, य
स्वभाव। व
विकास
स्वामी नि
श्चीमाली

इंग्री
सामाजि

वार्षि

कर आ
उम अन
प्रियद
प्राप्ति

नहीं गन्तव्य अपने जीवन में पालनपान का उन्मुख बाल रहा। विज्ञान द्वारा वैश्विक सूरक्षाते में मूल रूप से विशेषान् रहा है, इसीलिये चरक जैसे गहन चिकित्सक, सुश्रुत जैसे महान् गत्य चिकित्सक, आर्यभट्ट और भास्कराचार्य ने भी रुग्णोलशास्त्रों भी हुए हैं, जिन्होंने वैज्ञानिक विद्वानों को स्थापित की। इन्हों के साथ गहन जानी जाति भी हुए हैं – अथात् शक्राचार्य, गोत्रम, विष्वामित्र, वृश्णि, आत्रि, कणार, वृत्रच्याम जिन्होंने जीवन के लिए ज्ञानों को व्याख्या की।

जीवके जीवन का मूल आधार मनुष्य ही था, कि किसी विवाह में जीवन में जन्म से मनुष्य नके की बातों रुकरथ शरीर, स्वरूप वित्त के साथ कर सके। इसके लिए गंधों की रुकना होता है। तत्र विज्ञान अधीत द्विद्या विज्ञान का विकास किया गया और उसके लिये व्यावश्यक उपकरण, धन, का निर्माण हुआ। बड़ागढ़ीय शक्र निये देव शक्र मामा, उसके और मनुष्य के बीच किस प्रकार में तात्पर्य बेठ भक्त, उसी हेतु यह साधारण विज्ञान विकासित किया गया।

ऋषियों का निश्चित रिक्षानन या कि ब्रह्माण्डीय शक्र अनन्त है और उस अनन्त ऊर्जा भग्नार से मनुष्य निरन्तर शक्र प्राप्त कर सकता है। उस शक्र का उपनांग के साथ संयोजन कर, पीय कर वह जीवन के वृत्तों का निराकरण कर सकता है। देवो-देवना, सम्मोहन, आकर्षण, साध्या विज्ञान, मन्त्र, भूत्तान, धन, मुद्राएं इसी सिद्धान्त का प्रकट रूपरूप हैं। ऋषियों को ही परम्परा में इस साधना जीवन का विकास इस युग में जीवन रूप से प्राप्त, स्मरणीय परमहस्यामी निश्चितेष्वरानन्द जी (सदगुरुवेद द्वौ० नारायण दत्त शीमाली जी) द्वारा किया गया।

और जीवन की दृष्टि में किसी प्रकार का भेद नहीं होता है, और विषय कर तब जबकि धन जीवन उम इश्वर से सम्बन्धित हो। तब तो यह जीवन गत्यक मनुष्य के लिये भयान-

रूप से उपलब्ध होता चाहिये, उसके लिये जिस देश, जाति, विज्ञ, अथ या जात्या का बन्धन नहीं आना चाहिये – इश्वर ना अपनी सभी संतानों के लिये भयान है और एक है।

गन्याल जीवन में जीवनसंबंध ने घटनायां विद्या के वैज्ञानिक संस्कृति का यह गद्यान मन्त्र-तत्र यत्र का जान जन-जन में जाना हो चाहिये, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति स्वयं पैदा कर सकता है वह धर इश्वरशंख शक्र का रणजीत सके और साथे जीवन के कष्टों से मन्त्र नापन कर सके, विद्याके जीवन पर किसी एक समुदाय का धर्म का यह गद्य का वक्ताविकार नहीं होता।

यह विशिष्ट जीवन सभी के लिये जीवन रूप से सूलभ हो सके, इसी उद्देश्य से आज से बीमा वर्ष पूर्व मन्त्र-तत्र-तत्र विज्ञान मासिक पत्रिका प्रारम्भ की मर्द थी। इस धारा के प्रारम्भ में इस जीवन की आकांक्षा रखने वाले कुछ लोग ही भाथ थे। धौरे धौरे यह कार्या बढ़ता गया और लाखों व्यक्तियों ने सदगुरुवेद से दीक्षा प्राप्त कर अपने जीवन को धन्य बनाया। इपी कठ में सदगुरुवेद ने पूरे धारत का यमण बत छोड़ा रखाया रखानों पर ध्यान देता विविध धाराओं जिसमें गंत्र-तत्र यत्र इश्वरादि के सम्बन्ध में व्यास भ्रामक धारणाएँ लीडी जा सके और साधक स्वयं प्रत्यक्ष साधना सम्पन्न कर सके।

इसी के अगले कठ में मात्र २००० से मन्त्र-तत्र-यत्र विज्ञान का अंगेजो सरकरण धा प्रारम्भ किया गया है, जो कि हिन्दी पत्रिका की हृष्ट हरनुवाच (ट्रायलेशन) है। जेन्वा का संस्करण प्रारंभ एवं विदेश में रहने वाले उन हजारों लोगों शिष्यों साथकी शी प्रारंभा धर प्रारम्भ किया गया है, जो सरकर एवं हिन्दी अध्यात्मी तत्रह से नहीं पहुँचते हैं। जीवन का छार प्रत्येक जिज्ञासु के लिये खलना चाहिये, इसमें प्राप्ति वा नापि का बधन होना ही नहीं चाहिये। आप पत्रिका के बल पहुँच हो नहीं आपनु इन पत्रों में दिखा सक्या व्यवहारिक जीवन उपने जीवन में जलाएं, तभी हमारा यह कार्य स्वर्थक हो सकेगा।

मन्त्र-तत्र-यत्र विज्ञान का अंगेजी संस्करण

वार्षिक सदस्य बनें।

आप उपलब्ध हैं, १६ बहुरंगी पृष्ठों के फैलेवर के साथ

और प्राप्त करें उपहार स्वरूप – **‘सर्वोद्दति कारक यत्र’**

इन यत्र के पूर्व व्यास ने रुधापन आपके जीवन में आ रही अटकों व बाधाओं को दूर कर आपका उत्तमता की ओर गतिशील करने के लिये कार्यपाद है।

इस द्वातुषु दृष्टि पर लिये प्राप्तकार्य के द्वारा व्यावहारिक जीवन किसी भी वित्त वा समय परिवर्तन की सामर्पण नहीं होता जाता है, नहीं वा पनाज्ञे वीक व्यापक साधनों में लिख लिया गया है।

प्राप्त भेद : रु २५/- वार्षिक सदस्यता (प्रियुल क उपहार स्वरूप) : रु २७०/-

ज 'अप्रैल' 2000 मन्त्र-तत्र-यत्र विज्ञान '79'



गुरुद्वारा दिव्यभासी

डिव्यलिपि परं तेजों प्रयोग और ग्रन्थस्वरूप दीवाहु
साधना हो गुणी हैं, उन सिद्ध घैतक दिव्य शुभि—

परं ये दिव्य साधनात्मक प्रयोग

समस्त साधकों एवं शिष्यों के लिए यह योजना प्रारम्भ हुई है। इसके अन्तर्गत विशेष दिवसों पर दिल्ली 'दिव्याकाश' में पूज्य गुरुदेव के निर्देशन में ये साधनाएँ पूर्ण विश्व-विद्यान के साथ सम्पन्न कराई जाती हैं, जो कि उस दिन शाम 7 से 9 बजे के बीच सम्पन्न होती है और यदि ग्रन्थ व विश्वास हो, तो उसी दिन से साधना सिद्धि का अनुग्रह भी होने लगता है।

साधना में भाग लेने वाले साधक को गंत्र, पूजन सामग्री आदि संरथा द्वारा निःशुल्क उपलब्ध होती (धोती, दुष्डा और पवापात्र अपने साथ में लावा या न हो तो वहाँ से प्राप्त कर ले)।

दिव्यत्रि काल में दुर्लभ साधनाये

9.4.2000 अंग्रेजी

महासोङ्कशी प्रयोग

मौमाय के हाण होने हैं उनके जो भगवे गुरु के समक्ष उपस्थित होने का जवाहर प्राप्त कर लेने हैं और विश्व लोकों होने हैं वे गिर्या जो गुरुदेव से महाविद्या साधनाएँ प्राप्त कर सके। नवरात्रि का पुण्य अवसर भगवती लक्ष्मी के वरदायक ग्राम्य से धूक श्री पचमी का अवसर तथा भगवती महालक्ष्मी के हैं सर्वोत्कृष्ट रूप महाशोङ्कशी की साधना प्राप्त होने के कारण— निःश्वय ही इसने संयोग एक साथ कम ही घटित होते हैं। निरन्तर धन प्राप्ति अथवा पूर्ण रूपेण कायाकल्प या फिर सम्गोहन कारों गुणों की प्राप्ति— ये तो कुछ एक पक्ष हैं इस साधना के, पूर्ण रूप में तो महाशोङ्कशी का साधना क्रम सम्पन्न करना, भगवान् श्रीकृष्ण की भास्ति बोहशकला युक्त होना है और वहाँ सम्पन्न होगा इस विवरण के प्रयोग में।

इन तीनों दिवसों परं ताजियों में भाग लेने वाले साधकों के लिए निष्पत्ति नियम यह हैं

1. आप अपने किल्ही वा गिरो अथवा स्वयनों को (जो पत्रिका के सदस्य नहीं हैं) मत्र-तत्र-यत्र विज्ञान पत्रिका का वार्षिक सदस्य बनाकर दिल्ली गुरुद्वारा में सम्पन्न होने वाले किसी एक प्रयोग में भाग ले सकते हैं। पत्रिका की सदस्यता का एक वर्षीय शुल्क रु. 225/- है, परन्तु आपको भाव रु. 438/- ही जमा कराने हैं। प्रयोग से सम्बन्धित विशेष भत्र सिद्ध प्राप्ति-प्रतिष्ठित सामग्री (यत्र गुटिका आदि) आपको निःशुल्क प्रदान की जाएगी।
2. यदि आप पत्रिका सदस्य नहीं हैं, तो आप रूपये ताड़ी अपने किसी एक पत्र के लिए पत्रिका वार्षिक सदस्यता प्राप्त कर उपरोक्त किसी साधना में भाग ले सकते हैं।
3. पत्रिका सदस्य बनाकर आप किसी एक परियार की ऋषि परम्परा की इस भावन साधनात्मक द्वारा धारा से जोड़कर एक पूरीत ऐसे उत्त्यवादी कार्य करते हैं। यदि आपके प्रयास से एक परिवार में अथवा कुछ प्राणियों में हंसवरीय विनाश, साधनात्मक विनाश आ पाता है, तो यह आपके जीवन की रफ़लता का ही प्रतीक है। उपरोक्त प्रयोग तो सर्वथा निःशुल्क है और तुल कृपा द्वारा ही वरदान स्वरूप साधक को प्राप्त होते हैं। प्रयोगों की न्यौत्तावर रक्षि को अर्थ के तराजू में नहीं लैत सकते।

प्रोटो द्वारा 'धूमावली दीक्षा' के बारे

ए ले ११ अप्रैल को ही

आप चाहे तो निष्पत्ति दिवसों से पूर्व ही अपना फोटो एवं न्यौत्तावर रक्षि का बैक ड्राफ्ट ('यत्र-तत्र-यत्र विज्ञान' के नाम से) योजकर भी इन दिवसों पर लेने वाली दीक्षा को प्राप्त कर सकते हैं। आपका कामों एवं पाच सवार्षों के पाते दिल्ली कायाकल्प को सम्पर्य पर प्राप्त हो सके, इस लेनु आप अपना अन्न स्वीकृ-पास्ट द्वारा ही मर्ने। यत्र विलम्ब से मिलने परवीना सम्पन्न न क्षेत्रोंमें।

वर्षान मि
ज्ञनों क
या। जाय
वो जैव
हो सर्वे
प्रचलन
लक्ष्मी है
आधिकारि
न्यौत्त ए
उप-महारा

महूत है
को साध
कम्पा
व्यक्ति
की उपा
मिलता
करने वे
साधक
उनसे ।
कम्पना

* दीक्षा :
उपर है ए
कर लेते
अपरिपत्ति
अनुलोदित
प्राप्ति का
पूर्व प्र
कर्त्ता द्वारा
निरुपात्ति
साधनता
एक लापा
* दीक्षा :
का जल
उपराजा
जायेगा।
साथे १३
के अप्रै
तिक्षा जा
साधक

10/4/2000 सोमवार बगलामुखी महात्मा प्रयाण

बगलामुखी मध्याह्न का शास्त्रों में ही नहीं इतिहास के पृष्ठों में भी वर्णन मिलता है। चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, समद्रव्युन, गौर राजेन्द्र चौल ने अपनी बात शब्दों पर अद्वितीय सफलता इसी साधना के माध्यम से पाई थी। जीवन में इन्हिं सहज नहीं है, अनायास ही कहे शब्द उत्पन्न हो जाते हैं, जो जीवन में अस-तुलन पैदा कर देते हैं। शब्दों के ऐसे सभी प्रयास असफल हो सके, शब्द निवारण हो सके, इसके लिये बगलामुखी साधना का सदा से प्रचलन रहा है। शब्द कोई व्याप्त हो नहीं, जीवन की कोई विकट स्थिति यों हो सकती है, जो आपके लिये शब्द से कम नहीं है, तो ने — मुक्तमें से सन्तिगत्ता, संप्रियारियों से अनश्वस, लोगों के उत्तरांग, समाज के कठाव और कई आत्मगत व्यक्तिएँ। इन बहवें उपर विजय भा बगलामुखी साधना से सम्भव है, और इस महाविद्या साधना का नवरात्रि काल में प्राप्त होना उपने आप में सीधाध्य है।

11/4/2000 मंगलवार भगवती दुर्गा तददायक प्रयोग

११ अप्रैल दुर्गा भगवती और नवरात्रि की पूर्णाहुति का थेष्टलम मुहूर्त है। यह ऐसा श्रेष्ठ श्रण होता है, जब पूरे नवरात्रि काल में कोई गड़सधना और कोई सधक अपने इष्ट का समर्पित कर उसके जीवन में फैलाया होने के लिये कामना करता है। इस तिथि के लिये तो यह भी कहा गया है, कि योदि कोई व्यक्ति पूरे नवरात्रि पर्वत भी कृष्ण करे, और नात्र इस दिन ही भगवती दुर्गा की उपासना कर ले, तो उसे पूरी नवरात्रि भर की मई साधना जैसा ही फल प्राप्त होता है। इस विवर पर भगवती दुर्गा उपने साधकों की कामनाओं को पूरा करने के लिये अपने वरदानों को झीली खोल देती है, प्राप्त करना त करना साधक की क्षमता है। इस थेष्ट अवसर पर भगवती दुर्गा की साधना कर उन्होंने किसी एक वरदान को प्राप्त किया जा सकता है, अपना किसी एक कामना भी पूर्ति को पूर्ण करने के लिये यह प्रयोग किया जा सकता है।

- दीक्षा आज के दृग में पुक्क प्राप्तिपोक द्वारा है अपनाना की ऊचाड़ी को प्राप्त और लेने का जीवन के अभाव को, अधुरेपन को कूट कर देने का, जीवन में अतुलनीय बल, सक्षम, पीढ़ एवं शीर्ष प्राप्त कर लेने का, साधना ने लिये प्राप्त कर देने का।

- दुर्गा प्रदत्त शरीरपात्र द्वारा दिया जिस कारण देने वाले योगी साधकों को प्राप्त कर लेता है, उसमें लियुपत्र प्राप्त कर लेता है, क्षेत्रिक वह उपलब्ध शैर विकृत प्राप्त करते होंगे तथा उपर्युक्त द्वारा दिया जाएगा।

- दीक्षा ने आगे लेने वाले योगी साधकों को जल से अपना अधिकै जल के अपराजित विजेता शीरोपत्र प्रदान किया जाएगा। यह दीक्षा इन तीन विवरों को सहित करने की जाएगी। दीक्षा के उपरान्त एक ठिकानी मंत्र प्रदान किया जाएगा।

यजना केवल इन ३ विवरों के लिये
लियुपत्र प्राप्त व्यक्तियों
को वार्षिक तददायक वरदान कर
उपराज लाला परे लियता कर
उपराज व्यक्तप ये दीक्षा द्वारा
दीक्षुलक प्राप्त कर लकड़ते हैं

शक्तिपात्र युक्त दीक्षाप

द्वारा दीक्षित दीक्षा

225-
-Rs. 1125/-

धमायती दीक्षा प्राप्त होने से साधक का ग्राहण मञ्जवृत व सूक्ष्म हो जाता है। आए दिन और नित्य प्रति ही योदि कोई रोग लगा रहता हो, या शारीरिक अस्वस्थता वर्गन्तर बनी ही रहती हो, तो वह भी दूर होने लग जाता है। उसकी आपसी में प्रबल तेज व्याप्त हो जाता है, जिससे शब्द अपने अप ही गारीबाल रहने हैं। इस दीक्षा के प्रमाण से योदि किसी प्रकार की तंत्र बाधा या प्रेत बाधा आदि हो, तो वह भी हीण हो जाता है। इस दीक्षा को प्राप्त करने के बाद मन में उद्दृष्ट साहस का संवार हो जाता है, और फिर किसी भी स्थिति में व्यक्ति भयभीत नहीं होता है। तंत्र का कई उच्चतर क्रियाओं का रहन्य इस दीक्षा के बाद ही साधक के समर्थ सुलता है।

संघर्ष : लिङ्गायत्री, 306, काशीपुर, पीतमधुरा, नई दिल्ली - ३५, फोन : ०११-७१८२२४८, टेली फैक्स : ०११-७१९६७००

* 'अप्रैल' 2000 मंत्र-तत्त्व-व्यव्रित विज्ञान '81'

पुरुषों में दीक्षा य साधना का महत्व

सामन्यों में उपर्युक्त आता है, कि गैलिके में गैलिक अप लिखा आए हो अपनी उत्तम होता है, उससे भी अधिक पुरुषकारी होता है विवर नीति के लियारेकर, उससे भी अधिक असुवित्त, और उसमें भी अधिक पर्वत हो करते हैं, और पर्वत में भी योदि हिमालय में लिखा जाए, तो और भी कहर गुल ब्रह्म होता है। इन सबसे भी योदि होता है यदि साधक गुल दर्शन में देवतार आयता समाप्त होते हैं। और यदि युरुदेव अपने आश्रम अस्थायी वृत्त्याम जैसी वह साधन प्रयोग करते, तो इसमें बहा नीजात्य और कुछ होता ही नहीं।

कुछ प्रेमे व्याप्त होते हैं, जहां विज्ञ शतिरेखा का वास संवै रहता ही है, जो गंगारु लोते हैं, ते दूरका रूप से अवाक उत्तरीन प्रतिपाल आपने यात्रा में प्रवर्तिता २५०० गुरु प्रस्तुक लानिवैषि का गुरुन स्वरूप से संवालत करते ही रहते हैं। इसलिए योदि शिव्य गुरुर्थाम में पहुंच कर सुन दें शायन, गंगा पुत्र दीक्षा प्राप्त करता है और गुरु दर्शनों का स्वर्णी कर अपनी आजा से साधना प्राप्त करता है, तो उसके दीक्षाय से देवताग भी दृष्टिकरते हैं।

दीर्घ स्थान पुण्याप्ल है जब शिव्या अकाल साधक के लिए उभी तीर्थों से भी प्राप्त दीर्घ गुरुर्थाम होता है। जिस धारा में संख्यु नवेव का लिवास व्याप्त रहा है, ऐसे विवर द्वारा पर गुरु दर्शनों में उत्तरीन दीक्षार गुरु सुख से नंजा प्राप्त करने की इच्छा ही साधन गेताव उपर्युक्त होती है, जब उसके सारान्तर जाता होता है। इसी तरह की द्वारा में उसके गुरु दर्शनों के लाभार्थी गुरुदेव जी व्यसना के बाद गुल भी दिल्ली गुरुर्थाम में तीन दिवसों की साधनात्मक प्रवीरों की शृंखला लियारेतत्त्वी भी होती है।

"वित पूजाता प्रभु प्रांकरी
प्राणि न हृदय समाति"

अविद्यलयात्रा जारी है



पूज्य गुरुदेव श्री केलाशचन्द्र श्रीमाती जी

26-27 फरवरी 2000, बुध्नी लालगढ़ा भिविट,
द्रुष्यांग मन्दिर, अमृतसर

अमृतसर पवित्र और धार्मिक नगरी है। इस नगरी को पवित्रता आनंद भी उत्तीर्णी ही अक्षुण्ण है, जिसने पात्र वी साल पहले रहा होगा। वहाँ दृष्यांग तीर्थ और स्पृही मन्दिर हिन्दू और ख्रिस्ती के भाई-चारे के साथी हैं। वहाँ शोर्य और शान्ति साथ साथ रहती है, अपी का पावन नाम पजात है, जहाँ की माताएं पुत्र के पैदा होती ही अपनी दृश्य के साथ शोर्य और वीरता को पूरी तो पिलाती ही हैं, धार्मिकता और कर्मदारी का भी पूर्ण साथ-साथ देती हैं।

२६ फरवरी को बालह बने पूज्य गुरुदेव श्री केलाश चन्द्र श्रीमाती जी द्रुष्यांग मन्दिर के प्रांगण में उधार, मी-दर कमटो के साथ सद्गुरुओं ने पूज्य गुरुदेव का पृष्ठाहारों से स्वागत किया। वैष्णव बाबू पूज्य गुरुदेव देवताओं के दर्शन के लिये मन्दिर में गये। वहाँ पुजारियों ने उनका स्वागत किया।

मन्दिर के प्रांगण में वेत भवन है, जहाँ विविट का आयोजन आ। साधकों ने जयघोष के साथ पूज्य गुरुदेव का स्वागत किया और मन्दिर में इस आयोजन के निमित्त पथारने के लिये उपनी कुतंता प्रगट की। विविट बद मंत्रों की मंगल ध्वनि के साथ गुरुदेव का पूज्य पर पदार्पण हुआ। नगर आर, एस, एस, प्रमुख श्री राम प्रकाश चौपड़ा को आशीर्वाद प्रदान करते हुए पूज्य गुरुदेव श्री केलाश चन्द्र श्रीमाती जी ने मुख चादर लव गुरु चिव प्रदान किया।

सिद्धांशुम साधक परिचार की ओर से अमृतसर पवे पट्टी क्षेत्र के श्री के, एल, शर्मा, बौबी बालान, विजय शर्मा, दिनेश डोभड़ा और सभी कार्यकर्ताओं ने पृष्ठ हारों से पूज्य गुरुदेव का स्वागत किया। पूज्य सद्गुरुदेव का विशेष मंत्रों से पूजन एवं आवाहन सम्पन्न हुआ।

पूज्य गुरुदेव श्री केलाशचन्द्र श्रीमाती जी ने अपने प्रवचन में कहा - 'परतत्रता की लेडियो से इस टेली का छुट्टाश दिलाने का श्रेय हमों भूमि के शहीदों को है। जब नव भी विपरीत काल आया है, तब इसी भूमि के भूपतों के बायक पड़ दश-गोर्खानीमें हुआ है। शहीद और साधक में कोई बेद नहीं होता, दोनों का एक ही करत्व होता है - बलिदान। एक रेश के लिये करता है तो दूसरा जुल के लिये। उन्हीं बीर स्पूतों को जन्म देने वाले पवित्र धरती का नाम पजात है, अज भी जड़ा धर्म के प्रति अद्द आस्था बायम है। उन याता पिता को मैं आशीर्वाद देता हूं, जिन्होंने ऐसे यारों को गन्ध दिया। हे पंजाब के बारों, तुम देश की आव तीर यान हो, महान हो।'

दूसरे दिन के पश्चिम सवार में 'पंजाब के सरी' अखबार के पूज्य समाचारक श्री विजय चौपड़ा ने पूज्य गुरुदेव का भव पर पृष्ठाहारों से स्वागत किया। पूज्य गुरुदेव ने तिलक कर उन्हें चादर प्रदान कर आशीर्वाद दिया कि अपने नाम के अनुरूप ही वे निरन्तर विजय प्राप्त करते हुए दश की सुरक्षा में सहयोग देते रहें।

पूज्य गुरुदेव ने पंजाब की अस्थाया का आवाहन करते हुए कहा - 'गुरुओं के प्रति श्रद्धा और निश्चय की स्थिति विजय के भी गुरुह की है, यह उन्हीं नरजीं की देन है कि शोर्य और शान्ति इस धरती पर साथ-साथ रहती हैं।'

अन्तिम सत्र में गुरु दीक्षा, तत्त्व वाचा निवारण दीक्षा, त्रिशक्ति दीक्षा, के साथ पृथ्ये गुरुदेव ने भगवती दुर्गा भाघना तप्पन कराई और साधकों को सुरक्षा जीवन प्राप्ति का आशीर्वाद प्रदान किया।

3-4 मार्च 2000, महाशिवरात्रि शिविर, कोटवाहा, (म.प्र.)

भारत में जिनसे प्रकार के पूजा, पर्व, व्रत, उपवास प्रचलित हैं – उनमें महाशिवरात्रि महोत्पव के समान उत्सव या वर्ष में देखने में नहीं आता। बहुत ये लोग दूरा अचना न करके उपवास मात्र भी करते हैं, रात्रि जागरण करते हैं। समरन हिन्दू यमान – शीर, गाणपत्य, शैव, वैष्णव और शब्दत – इन पांच सम्प्रदायों में विशेष है। शिवरात्रि एक ऐसा उत्सव है, जिसे सभी सम्प्रदाय जिना भेदभाव के साथ हैं तब्बा इसके फलस्वरूप गोग और मोक्ष प्राप्त करते हैं। फाल्गुन मास की चयोदशी तिथि को माध्यम बनाकर जिस सन्दर्भकारणमयी रात्रि का उदय हुआ, उसी को शिवरात्रि कहते हैं।

कोटवा ऊर्जा नगरी मानी जाती है, यहाँ के सात थर्मल प्लाट मध्य प्रदेश और बिहार राज्य की विद्युत आपूर्ति करते हैं। कोटवा के आस-पास का भूग्र कोयले की खाड़ी से भरा है। यह आदिवासी द्वेरा है, जंगलों की छटा दर्शनीय और सुखावनी है। २ भार्व की इस नगरी में पृथ्ये गुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी नशा पर साधकों द्वारा शोभायात्रा निकाली गई। सुसज्जित रथ पर बैठे हुए दोनों गुरुदेव द्वयों में राजहंसों के समान शोभित हो रहे थे। यहाँ का प्रसिद्ध 'कर्मा नृत्य' (आदिवासी महिला द्वारा १०८ कलश लेकर किया गया नृत्य) आकर्षण का केन्द्र था। ३ गार्व का प्राप्त, शालबाकन विधि से श्री शास्त्री जी द्वारा सम्पन्न कराया गया गुरु वृत्त एवं गणपति पूजन भावर्णु सम्पन्न हुआ, साधकों के नेत्रों से अनुश्रुत चढ़ रही थी। पृथ्ये गुरुदेव के मंच सान होने पर आयोजकों ने पृथ्याहारों से स्वतन्त्रता किया।

पृथ्ये गुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी ने अपने प्रयाप प्रवचन में कहा – ‘सभी साधकों को आशीर्वाद के साथ अन्तर्राष्ट्रीय दीपों द्वारा देता हूँ, जो इस साधना शिविर में भाग लेने के लिये यहाँ पकड़ हुए हैं। यह छत्तीसगढ़ का स्नेह, प्यार और निष्ठुलता है, जिससे एक वर्ष में ही तीन बार यहाँ आने के लिये मुझे मजबूर किया है। आज, यदि इन अपने जीवन को देखें, तो इसमें झगड़ा, लड़ाई, प्यार आदि कई चीजें हैं। कुछ लोग बड़ते हैं, जीवन अनेक की बाज़ा है, कुछ बा निचार हैं, कि जीवन एक अवधुत स्थगम है जहाँ संघर्ष ही संघर्ष है।

मुख्यस्थि पे ही जीवन में प्रतिवर्तन बारा है। गोपिक उत्तरों के लिये क्षेत्रका कथमन पूछता ही है, कि तु अपने भाई की उन को कैसे नापत करें? जीवन का भावनन से जीने की कला जीखली दीती है। जीवन में धन, धान्य, वश, परिषद्धा और अननन श्री जी संकलत है जब जीवन में प्रेय हो और ग्रेस इनकाना चाहिये। यदि अपका काम लकड़ है, वही बन नहीं है, तो संपर्किये आपसे संकल्प शक्ति का अधार है। शिव संकल्पसम्मुखी देवगवान द्वारा संकल्पयान बने। यदि आप साधक या शिष्य हैं, तो आप से ललक होनी चाहिये। जिस संकल्प के माध्यम से लक्ष्यों का लक्ष्यन्त्र दिया जा सकता है। बरन्तु संकल्प से दूर रहिये, संशयशील व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता। इसके बाद कुछों शिव संकल्प गतिक दीक्षा एवं शिष्य वश्य मालालहमी दीक्षा विदान का एक साधकों का दूतनवान आरंभणान बनाने की उम्मीद है।

पृथ्ये गुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी ने अपने प्रवचन में कहा – ‘मुझे कोटवा में शाकर अन्तर्कृत प्रसवता हो रही है। जिन साधकों और शिष्यों ने इस साधना शिविर को नफ़ल बनाने के लिये अपक प्रयास किया है, उन्हें मेरा विशेष रूप से आशीर्वाद है। शिष्य की प्रसवता ही गुरु की प्रसवता होती है, क्योंकि सुर का अवतरण ही शिष्यों के कल्याण के लिये होता है। आप के सौभाग्य की में भूमि-भूमि प्रगति करता है। गुरु तो आपके सामने उपस्थित हैं, अब आप इस बातावरण का लाभ कैसे उठाते हैं, यह आप पर निभर करता है। लेकिन गुरु को समझ पाना साधारण किया नहीं है। यह सब कुछ गुरु कृपा पर आधारित है, कि वे साधकों का बनाना चाहते हैं। आप लोगों को ना भी कष्ट सीर बेदना है, गुरु सबसे परिचित हैं। इस समय आधा उनीसगढ़ गरीबी रेखा से जी च बाँधना



मूर्ख्यगुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमाली जी

यथान कर रहा है। आजांकी के पचास वर्षों के बाद भी इस देश की आधिकारिक डालत रहना कहे, क्या क्यों है?

जब जीवन में उचित के सम्में अवसर हो जाते हैं, उस समय गुरु का शशांगत होना चाहिये। नव सीभाष्य का सूर्य इन्हें लगता है, तब गुरु को ही जागा की किरण कहा जाया है। सभार में किसी भी वस्तु को इन्हरे नहीं बनाया है, किंतु आप ने मनुष्य हैं। आपकी महत्वा संसार में अनूठा है, सिफ़े आप उसे पहिजानें। नुस्खे सबने बड़ी खुशी तब होती जिस दिन आपके जीवन में वह शंख आयेगा जब आप और अपने हांकर गुरु कार्य कर सकेंगे।”

दो दिन का यह भव्य शिविर कोरका के लिये ही नहीं, अपितु पूरे छत्तीसगढ़ के, लिये उद्यूत आनन्द पर्व था। इस महान आयोजन में श्री आर.सी.सिंह के संघोजन में श्री अखिल सिंह बैंस, श्री आर.के.सीनी, श्री एस.के.नेवार, एन.के.मीर्थ, बी.के.झा, बी.के.गर्ग, आलोक बाजपेय, दिलीप बड़ोवार, मानू पाण्डेय, बी.आर.मनहर, मनोष सोनी (चांपा), सुदामा चन्द्रा, जगदीश साह, बी.एस.साह—इनमध्ये निहावान सदस्यों ने पिछले छः महिने जा चेतना जाग्रत की, उसी का सुप्रत्यय या कि महाशिवरात्रि को रात्रि के हजारों साधकों ने एकत्र होकर पारदेशी शिवलिंग पर अभिषेक किया। निश्चित शाव से उसाह के साथ कार्यक्रम रात्रि ३,००० बजे तक चलता रहा। गुरुदेव ने आशीर्वाद प्रदान करते हुए सम्मेलन बने, आपके नाम से सदगुरुदेव वा नाम स्वतं ह्य गान्धल्यमान बोला। इसी आशीर्वाद के साथ पूर्णाहुरि कर रहा हूँ।

१९-१९ मार्च 2000, होली शिविर, शुल्धाम, जोधपुर

होली का नाम सुनते ही शरीर में गुदगूदी के साथ खड़ी की लहर बढ़ने लगती है। बाबन्नी रंग में रंगने की ललक के साथ खानों की छान्दोधनुषी आकार साकार हो जाता है। हंसी, खुशी, उमंग और मस्ती का नाम ही होली है। होली का वातावरण ही अनीब सरदाता है, जहां ढोटे-बड़े अगर गरीब और अपने-पराये का सभा बिट जाता है। एक दूसरे के गले मिलने के बहाने प्रेम और प्यार को एक दूसरे पर उहान देने का सुखपर ही होली है।

गुरु दरबार, जोधपुर में साधक दोली बनाकर द्युष्ट के द्युष्ट चले आ रहे थे। देश के कोने-कोने से सबको एक ही धून, एक ही लकड़ या, यीवाने बने सभी चले आ रहे थे, गुरुदेव के साथ ये खेलों के लिये, निखिल रंग में रंगने के लिये, ज्यों में सराबोर होनों के लिये। सभाके बीच जो कोई होते हैं, धूल जाते हैं, उत्तर जाते हैं, केवल गुरु का ही रंगप्रसा होता है जिसमें एक बार रंग जाने पर और निश्चार आता जाना है। साधक अपने रंगों द्युमन्दी तथा माई बन्धुओं के भी बन्धन का छोड़ चले आ रहे थे। गुरु से एकाकी होने के लिये गुरुने व नये, सभी साधक आपस में मले मिल रहे थे, नाच-गारहे थे और अनीत की बाजी में खोये, गम्भीर द्यूम रहे थे।

वन्दनीय माता जी

१८.३.२००० को ११,०० बजे गुरु पूजन के साथ शिविर का उद्घाटन हुआ। मन्त्र पर शुरु निमूर्ति आसीन हुए, शुरु आवाहन के साथ ही आनन्द और मस्ती की लहर पूरे पालाल में छा गई। नयप्रकाश की भजन वर्षा में सभी साधक भीग रहे थे और “पूज्य गुरुदेव की नय” के नयप्रोष्ठ के साथ हवा में उड़ाने रहे। अब धोने-धोर होनों का रंग साधकों पर छा रहा था। पूज्य गुरुदेव श्री नन्दकिशोर श्रीमहात्मा जी ने आपने प्रथम प्रवक्ता में साधकों का शुरु गृह में बद्धासने पर नाशीर्वाद देते हुए जीवन में सोने व प्रसव रहने तथा गुरुमय अने रहने की शुभाशंसा प्रकट की। उड़ाने कहा—“कृष्णजीओं को चारों ओर आपके नाम सभी निखिल रूपी कृष्ण की मउण है।”

भगवन् दृश्यमाद सदगुरुदेव निखिल के दूसरे द्वाका का स्वामी दिलहते हुए पूज्य गुरुदेव श्री नन्दकिशोर जी ने कहा—“तुम अनेकों, अनेकों का काम निरन्तर संघर्ष करता है। तुम कैसे नहीं निरन्तर द्वाका जाल हो, तब मुझे आशर्चर्य होता है। तुम्हें चिन्तित होने का कोई कारण नहीं है, कृष्ण निरन्तर तुम्हारे साथ रहता है, तब तुम्हारे हाथों रहता है, तिन्हीं द्वाका में तुम्हें प्रसन्न होगी। किरण तुम्हारे जीवन का है। नव सीभाष्य का नाम लिया जायेगा, गोपकों का और म्याज-बालों का तथा अन्य संगी-साथियों का नाम अद्यगा है। तब साधना शिविर नहीं है, वह अल्लाम और आनन्द का शिविर है। निमूरा की बोइबात ही नहीं, हर सुग में देखा होगा।

ते राम की ही। दस्ती त ही होगा। अपकी रणनीति का शिवलिंग निष्पत्ति जायेगा। व साधना दी दीक्षा एवं उपचार

सम्बोधित के लिये देव आप कर्त्ता भटकने रहे गण पान के होकर सिर अपनी शक्ति दीक्षा उपचार यह नी शुरु दीक्षा प्रदान प्रवक्ता देव पूर्णकाल परिवर्तन में दीक्षा प्राप्ति

प्रवक्ता देव पूर्णकाल परिवर्तन में दीक्षा प्राप्ति

उड़े सुप रक्षा। गुरु का हाथ लिये गय अपना य समझीत प्रकाश प्र काल

तो शग की भाना ही पड़ेगा। केस होमा तो उसको मारने के लिये कुछा आवंग ही। इसी तरह नब नब शिष्यों को ब्रह्म संचिन होगी, तो निखिल को आना हो जाएगा। आप गुरु निखिल से अलग कैसे हो सकते हैं? पवीस जन्मों से आपको रसों में निखिल का जून वह रहा है, आप नमी तात्त्विक हैं, अपनी गति को पहिजान नहीं या रहे हैं, आपका संकल्प दृढ़ होता चाहिये, आप शिव के गण हैं, भैरव-भैरवी हैं। आप क्लैंपर बने, भागवते भरोसे यह बैरे रहे। जिस दिन आप अपने को पहिजान लेंगे, उसी दिन आपकी वाधन सफल हो जाएगी। शिष्यों के रचे मन जूटे नहीं हो सकते। जब मन जूट नहीं है, किस साधना ठीक से करे। सबा के गत्तयम से गुरु के प्रति विश्वास दृढ़ करे।

इसके बाद उन्होंने साधकों को होती के इस पावन कथा में भाष्योदय शीक्षा एवं अनेक वीक्षा प्रदान की।

पूज्य गुरुदेव श्री केलाश चन्द्र श्रीमाती जी ने अपने शिष्यों को सन्तुष्टि करते हुए कहा – ‘मानव जीवन का कुछ उद्देश्य है, इस प्राप्त करने के लिये देवता भी तरसते हैं। ऐसे मानव जीवन को प्राप्त करने के बाद भी यदि आप क्षम्यों से जूझते रहें, दरिद्रता को अपने ऊपर लाद दूप बांधी तर पांडी भटकते रहें, तो इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या होगा? इस नालकीय जीवन से नाश पाने के लिये कुछ तो उपाय करना पड़ेगा। शत्रुओं से माप छिरे हैं, वसा होकर खिर झुकाए बैठे हैं, फिर तो शत्रु आप पर हाथी हो जाते हैं। क्यों न आप स्वप्नी शक्ति का प्रयोग करे? भगवन् पूज्यभाद सद्गुरुदेव ने आपको ब्रह्मागुरु दीक्षा इसलिये नहीं दी थी, कि शत्रुओं से मार लाने रहे, यह तो बुनदिली है। यह तो गुरु के दिये जान का उपयान है! उस तरह दिक्षा पर पूरा ब्रह्मतामुखी वीक्षा प्रदान कर रहा हूँ।’

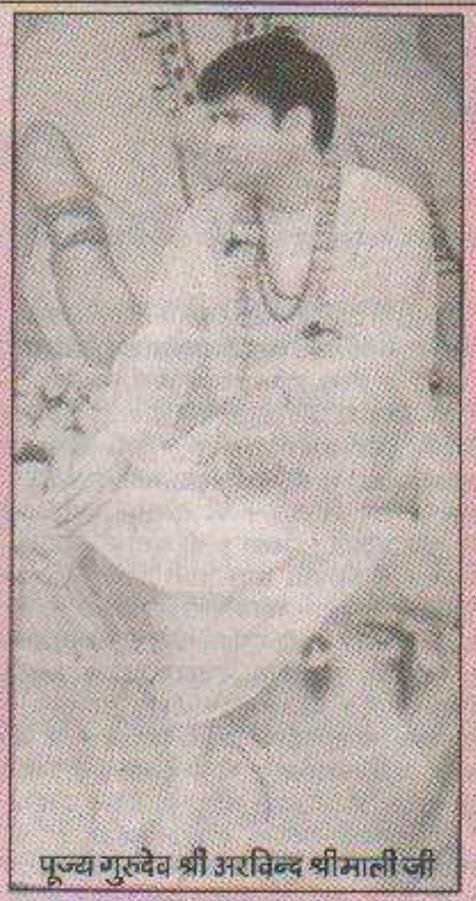
पूज्य गुरुदेव श्री अरविन्द श्रीमाती जी ने भी भाष्योदय अशीर्वादात्मक प्रवचन देते हुए कहा – ‘जीवन की सार्थकता गुरु चरणों में देता है, आपको यह सौभाग्य खत्त दी प्राप्त है, आप पूर्णशात्ती हैं, इस पृथ्यकाल में पूरे गुरु परिवार की ओर से आपको आशीर्वाद है, आप जीवन में सफल हों।’

पूज्यनीया माता जी ने भी सबको आशीर्वाद दिया कि जीवन में सफलता प्राप्त करें; मारती और चरण स्पर्श के बाद मध्य गति में शोभिता दहन का कार्य सम्पन्न हुआ। आगे दिन गुरु परिवार के साथ सभी साधकों न होती रहें। फिर गुरु प्रसाद गठण करके पारिवारिक कर्तव्य पूर्ति के लिये साधकों ने अपने गन्तव्य की ओर उल्लास के साथ प्रस्थान किया।

गुरु और शिष्य

गुरु का कर्त्य शिष्य को आत्मकल्याण के लिये मार्गदर्शन देना है, कि तु गुरु के लिये सबसे बड़ी चालदी यही रहती है, कि उन्हें सूपात्र शिष्य सहज प्राप्त नहीं होता। ऐसे सूपात्र की आवश्यकता निरन्तर बनी रहती है, जहां वे अपने जीवन को स्थापित कर सके। गुरु एक शक्ति विद्योऽ का नाम है जिसे पहलाल किया जा सकता है, देवता जा सकता है, शुभा जा सकता है। गुरु और शिष्य का सम्बन्ध अटूट और नहरा होता है। क्योंकि इसमें कोई स्वार्थ नहीं होता। जहां स्वार्थ होता है, वही दुःख होता है। गुरु सबके लिये मंगल का मन ही करते हैं, उनकी नरां में छोटे-बड़े, गरीब-अमीर का मेव नहीं होता। वे निरन्तर इसी दिनान में रहते हैं कि अपना यह जीवन तथा तपस्या कहां स्थापित कर सके। दीक्षा का वर्थ है गुरु और शिष्य में एकीमण्ड समझीता। गुरु शिष्य के गीतर जो पाप है, उसे न्याय कर देता है, यही दीक्षा है, यही शक्तिपात है। सुधे सभी को समान रूप से प्रकाश प्रदान करता है। यदि देखने वाला ही अपनी आश्व बन्द कर ले तो सूर्य का इनमें क्या होष? गुरु सतत प्रगाढ़ता है कि शिष्य का कल्याण के साथी, परन्तु उनके जीवन और जेतना का प्रयत्न करने के लिये प्रत्रता तथा दक्षता ही प्रमाणित करती ही पड़ेगी।

पूज्य गुरुदेव श्री नदकिशोर श्रीमाती जी, २० फरवरी २०००, बैंगलोर शिविर के प्रधानमानी



पूज्य गुरुदेव श्री उरविन्द श्रीमाती जी

साधना शिविर पुर्व दीशा समाप्ती

- ♦ 5-6 अप्रैल : राउलकेला
- ♦ 7 अप्रैल : सुंदरगढ़
- ♦ 8 अप्रैल : बाबलपुर
- ♦ 9 अप्रैल : डेवलाल
- ♦ 10 अप्रैल : लेट्हापुर
- ♦ 11 अप्रैल : कटक
- ♦ विवरण वार्ता अंक ने देखे, फोन: 0291-432209, 011-7182248

19-20-21 अप्रैल 2000

वर्षों

निरेखा जायंती जन्मोत्तराव समाप्ति

स्थल - अंगौलत कला समाज आउडियो, (महात्मा गांधी हॉल), महात्मा गांधी मार्ग, घण्टाघर

- ♦ श्री जगदीश सिंह लाल, इन्दौर 0731-548617 • श्री विजय गुप्ता 0731-412400 • श्री विष्णु पाटीदार, 9826018483 • श्री ब्रजमोहन शर्मा 557203 • श्री रघुराज सिंह गेहन्दले • श्री राजाराम यार्मा 385908 • श्री शशि चौहान 573606 • श्री अशोक प्रजापति, 0731-593955 • श्री बद्धी लाल माली 0731-8334449 • श्रीमति गिरी बाला, बहादुर, 0731-797367 • श्री मुखनेश शर्मा, उच्चजन • श्री पूर्णेश चौधेरे, कुक्की 07290-23310 • श्री अरुण भोरामिया, सनावद 07286-34354 • श्री दी.एम.त्यागी • श्री ब्रजमोहन बौहान, पेट्लावर • श्रीमति शकुन्नाला सोनी, महेश्वर 07283-42016 • श्री ओमप्रकाश सोनी, 07283-73298 • श्री दीनु यादव, सनावद 07286-35033 • श्री दी.आर.लाखण्डे, देवास 07272-29033 • श्री आर.सी.सक्सेना 07272-20623 • श्री सुधीर बाधेला, राजगढ़ • श्री ब्रजमोहन बौहान, पेट्लावर • श्री शक्ति साहूकार, धार 07292-34035 • श्री दी.एम.त्यागी, सनावद 07286-34359 • श्री नवीन जोशीना, खरपोन 07282-65555 • श्री घनश्याम मालवीय, करही 07283-54395 • श्री रामेश्वर मिश्रा, बरीता 07272-48249 • श्री कृष्ण सिंह परिहार, पट्टेरा, महेश्वर

30 अप्रैल 2000

सुन्दरलग्न

शिव महाकाली साधना शिविर

स्थल- कम्युनिटी हॉल, जगहरपार्क, सुन्दरलग्न (माझी) • श्री गोहिंद गुप्ता, करैड 42420 • श्री शीलेन्द्र कुमार, बिलासपुर 44500 • श्री छविन्द्र शर्मा, सुन्दरनगर • श्री यशवन्त ठाकुर, 42722 • श्री जगदेव ठाकुर, घनोदू 77441 • श्री बसीर सम ठाकुर • श्री कमलेश शर्मा 64714

7 मई 2000

पुणे(महा.)

अष्ट विनायक साधना शिविर

- ♦ श्री वसंत पाटिल, पूना 0212-359047 • श्री रमेश पाटिल, नवसारी, 02637-53188, 56980

10 मई 2000

आगरा (उ.प्र.)

- स्थल- एम.डी.जी.एस.एस.टी.एस. कॉर्पोरेशन, हरिपर्वत, आगरा
- ♦ श्री संजय व जया शर्मा 0562-358381 • श्री जगहर लाल गोयल 0562-250578 • श्री सीताराम बाबाजी

0562-381475 • श्री गुभाष शर्मा, कोटा, 0744-461739

13-14 मई 2000

दायबरेली

द्रुग्गा काली हनुमान साधना शिविर

स्थल- आई.टी.आई.टी.आमुलायिक वैड, लेकटर-2, द्रुग्गा काली

- ♦ श्री एस.के.मिश्र, इलाहाबाद 0532-501551 • श्री वसंत श्रीवारतव, लखनऊ 0522-397630 • श्री वेदप्रकाश जायरावाल, वाराणसी • श्री एन.सी.सिंह, रायबरेली 0535-205985 • श्री राम चंद नील, रायबरेली • डॉ. जगत नारायण श्रीवारतव • श्री जगदम्बा, सिंह, 0535-205330 • श्री जी.एस.मिश्र 0535-202327 • श्री रमकुमार सोनी • श्री विजय श्रीवारतव

21-22 मई 2000

वैतुल

शिव शक्ति मध्यलग्नमी साधना शिविर

व्यू.वैतुलहायदर लैकड़ी लैल बाउड, वैतुल बाजार बाजे के पास

- ♦ श्री प्रशान्त गर्ग 07141-22436 • आर.सी.मिश्र 30285 • महेन्द्र शोनी 32067 • मनोज अग्रवाल 33435 • एस.आर.उडाके • पप्पू साहु • मिलाप सिंह वटके • घन्नु सिंह धुर्वे • विक्रमसिंह कुमार • कलाकार शाडरो • अमित जितपादे 86453 • एन के श्रीवास्तव 07147-24686 • शक्तिराव मालवीय • राजेश कुवटी • नरेन्द्र मेहता, 07146-78814 • सम्पत रायले 07146-77090 • एस.एल.धुर्वे • श्री अमरसा इरपाचे • गोपाल पवार • आई.टी.कुमार • विजय सीते 24961 • एस.के.सोनी • आई.एस.राणा 0755-783931 • आर.सी.गरकाम, • शमूदयाल परकडे • मधुसूदन वडोकर, • जगकलाल बघारे, 32634 • फूलसिंह परते • विजय साहु, वैतुल 32634

3-4 जून 2000

ठिङ्गला

भुवनेश्वरी लक्ष्मी शक्ति साधना शिविर

- ♦ श्री घरन कुमार 0177-270442 • श्री नरेश कुमार 0177-225557 • श्री किशोरी पण्डित 0177-201966 • श्रीमती शारदा युतेरिया 0177-235735 • श्री एम.आर.विश्वाल 01905-82221 • श्री एस.आर.ठाकुर 01902-52201 • श्री के.ली.शर्मा 01905-22073

11 जून 2000

बातारा(अंतराल)

शिव वाणेश पूर्णत्व शिविर साधना शिविर

स्थल- बाजालन मञ्जल बायालिय, शिविराव पेट, फुटन तलेया के पास, बातारा

- ♦ श्री हरिशचन्द्र कदम, मेढा 02378-85511 • श्री अनिल खटायकर 02378-85208 • श्री शिवाजी शिंगटे, 02378-85212 • श्री दादोस्ती चिकम, सासारा 02162-52454 • श्री वसंत पाटिल, पुणे 020-5676483 • श्री अगिल सुपेकर, पुणे 7453968 • डॉ. एच. बाई मूलना, कराळ, 02164-41084 • श्री एकनाथ कदम, वचगांवी 02168-41055 • श्री रामचन्द्र वैस • जयश्री नारायण इले, बड्डा 02161-31335

जी में आता है तुझको पृकारा कर्ण रहगुजर रहगुजर आस्ता आस्ता

वा रोये वा ललाचा अपनी तो यूं ही शुजरी
क्या छिक्क हम सफीरा^१ यासब-पु-शाबमां^२ का

धीरे-धीरे करके देखते ही देखते गुजर गये
तकरीबन दो साल उस पुरामनीज़^३ शश्वियत^४ के बिना,
कहते थे जिसके बिना हम रह न सकेंगे।

हमें जिन्दगी की राह बनाकर वह पोशीदा^५ हो गया
किताबों के सतरों के बीच में कहीं या कि अब^६ की मानिंद
उमड़ घुमड़ कर चला गया इस कायनात^७ के कहाँ दूसरी
ओर . . .

हमें जिस जाये कल शश आ नवा था
वहीं शाबद कि उस आस्ता^८ है

कभी यूं लगता है कि वह कहीं तो नहीं गया है, है
तो यहीं कहीं, अभी तो शुजरा था इधर से एक मदमस्त हवा
का झोका बनकर, अगी तो कह रहा था कुछ शुनगुनाता
हुआ, ज्यों शुनगुना जाती हो आशाद की पहली रिमझिम
फुहार।

कभी तो यूं होशमंदी कि चप्पे-चप्पे पर अक्ष्य^९
दिखाई दे उसका तो कभी यूं बेखुदी^{१०} कि पहरों-पहर होश
न रह जाये सुद का ही . . .

शत मजलिस^{११} में तिरी हम श्री अड़े थे चुपके
जैसे तस्वीर लभा दे कोई दीवार के साथ

मेरा बजूद^{१२} तो एक तस्वीर के मानिंद हो चला है
फिर भी कहते हैं कि यह तस्वीर भी उसी की बनाई है।
यकीनन कौन होगा उस जैसा मुसब्बर^{१३} जो एक ही बक्से
में कई एक तस्वीरें बना जाता हो? यकीनन रंगों को भरने में
कोई भी कोताही नहीं की है उसने लेकिन इन सब का मेरे
लिये माध्यने ही क्या? मेरा मलाल तो कोई और ही है . . .

बेदाद-पु-इश्क^{१४} से नहीं डरता मजर 'असद'
जिस दिल पे नाज़ था मुझे वह दिल नहीं रहा

आपके इस नरह चले जाने से मेरे जन्मात कहीं मुम
होकर रह गये हैं और जब मेरे पास वे जन्मात^{१५} ही नहीं रह
गये, तो मेरे पास बचा भी क्या? यह तो सांसों की एक मुवा
रवानगी भर रह गयी है।

बहुत गुरुर था हमें कि हम यूं करेंगे, ऐसा करके
दिखा देंगे, अपनी बफा का इनहान दे देंगे लेकिन कहाँ खोने
लग गये हैं अभी से हमारे सब हौसले? क्यों पश्चाने लग गये
हैं हमारी आँखें? क्यों सूखने लग गये हैं हमारे हौंठ? कहाँ
कमज़ोर पड़ रहे हैं हम? क्या शुस्ताखी हो गयी है हमसे?
विस्से जाकर पूछे हम . . .

और ही रंग है 'फिराक़' अब तो शाऊरे इश्क^{१६} का
अब ज वो शुश्वशुमाजियां^{१७} अब न वो बदशुमाजियां^{१८}

अब तो हमारे पास फक्त आपके लिये कुछ दशारे
मर ही रह गये हैं मगर उन इशारों की तफरील^{१९} बयां करने
वाला भी तो कोई ही . . .

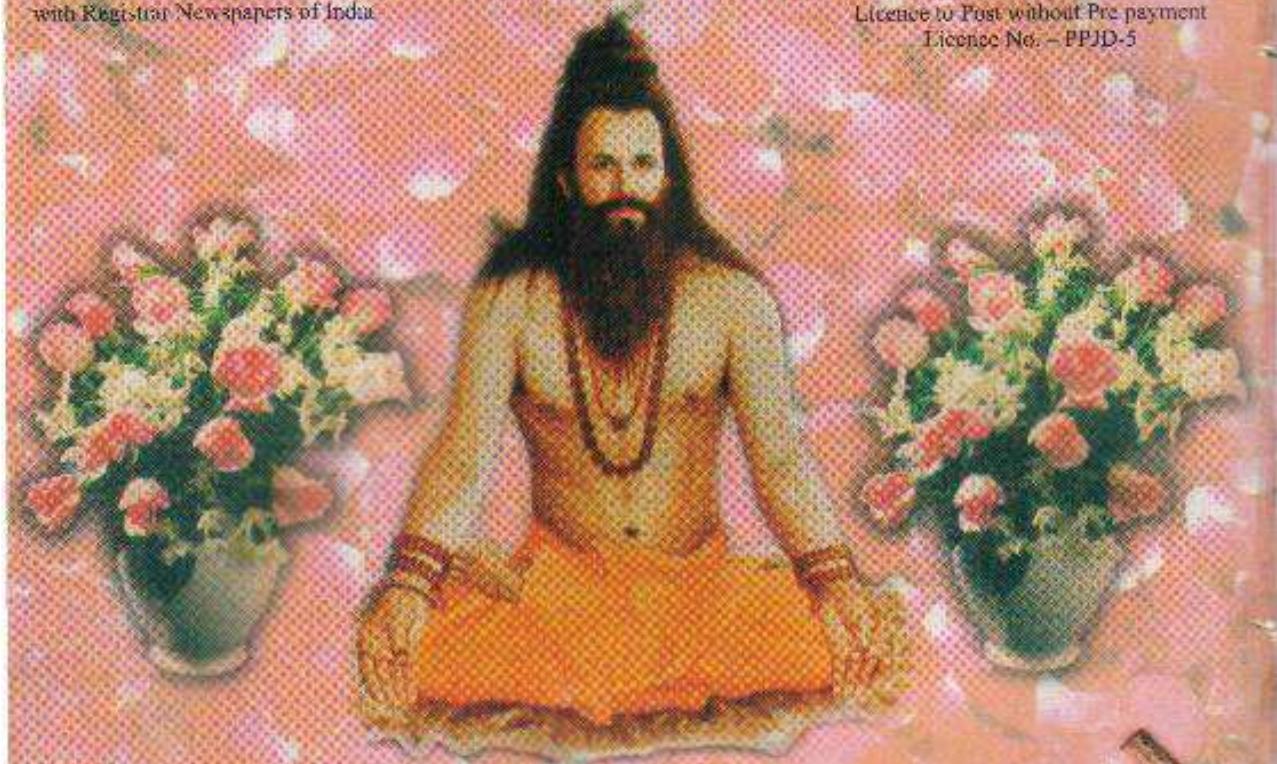
आपकी एक एक अदा बेपनाह याद आती है, आपका
वह चलना, आपका वह रुक्ना, आपका वह कुछ कहना और
कहते कहते आधी बात को बीच में छोड़कर मुस्करा देना
और उस मुस्कुराहट में बिना कुछ कहे भी सब कुछ कह देना
— सब कुछ जेहन^{२०} में ज्यों का त्यों बना हुआ है मगर जो
कशिश है वह तो इन बातों से नहीं मिट सकती।

अब क्या कहूं और क्या न कहूं कुछ समझ में नहीं
आता। मैं आपका मक्कद^{२१} नहीं समझ पा रहा हूं कि क्यों
आप हमें छोड़कर रुक्सत^{२२} हो लिये और . . .

यह जो मुहलत^{२३} सी जिसे कहें हैं उम्म
देखो तो इन्वितज्ञार सा रहता है कुछ

१. मित्रों, २. सबा प्रसन्न रहने वाला, ३. अस्त्यधिक प्रिय, ४. ज्यक्षित, ५. कारण, ६. गृह्ण, ७. बाबल, ८. ब्रह्मण्ड, ९. चोखट,
१०. प्रतिविष्ट्य, ११. अस्त्मवीनता, १२. सभा, १३. अस्तित्व, १४. चित्रकार, १५. प्रेम के कष्टों, १६. भावनाएं, १७. प्रेम के दंग, १८.

आशायें, १९. भ्रम, २०. विस्तार, २१. मस्तिष्क, २२. अर्थ, २३. विवा, २४. अवकाश



गुरु वत्सल दिवस को इन गुरु का जन्म दिवस नहीं होता, क्योंकि गुरु आपने आप में अपना सत्ता ही लगा है। उन्होंने गुरु नाम किखर बर पर शिष्यों के दीन समाप्ति हो जाता है और फिर वे पूरे शिष्यों का समाह हो जाता है, यह आपने आप में गुरु कहलाता है। मैरा माध्यम जो आपके दीन किखर एवं व्रत वद्वय दीन का समाप्ति हो जाता है वे भी आपके दीन के द्वारा समाप्त हो जाता है। यह विचार मैरी धारणाएँ, मैरा विश्वास और आपका हमारा पठन व पर अधिकात् गुरु की छलि — यह अब कहाँ जो मिलकर है, यह व्यष्टि व्याप्ति में गुरु है। आप इस सरष्ट यह दीक्षा भी तुम्हारा जीवन दिवस है, गुरु जन्म दिवस नहीं शिष्य जन्म दिवस है।

गुरु वत्सल दिवस
शिष्य जन्म दिवस

माह : मई में दीक्षा के लिए निश्चारित विदेश दिवस

पूज्य पुरुषोंने निम्न निश्चिह्नित दिवसों पर साधकों से मिलेंगे की दीक्षा प्रदान करेंगे। इन्हें साधक निश्चारित दिवसों पर पहुंच कर दीक्षा प्राप्त कर सकते हैं। निश्चारित दिवसों पर की दीक्षाएँ आठ: 11 बजे से 1 बजे के बीच जारी

साथ 7 बजे से 9 बजे के गंधे प्रदान की जायेंगी।

दिनांक

5-6-7 मई 2000

स्थान

गुरुधाम (जोधपुर)

दिनांक

24-25-26 मई 2000

स्थान

सिङ्हाशम (दिल्ली)



COLLECTION OF VARIOUS

- > HINDUISM SCRIPTURES
- > HINDU COMICS
- > AYURVEDA
- > MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with
By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server

